अपराजिता

एक नारी के त्यागमय जीवन पर आधारित
मर्म-स्पर्शी उपन्यास

•

लेखक

मनोज बसु

अनुवादक
रसिक बिहारी

•

१९८३



सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन

प्रकाशकीय

हिन्दी के पाठक बगला के प्रसिद्ध लेखक मनोज बसु के नाम से भली प्रकार परिचित हैं। उनके तीन उपन्यासों के हिन्दी रूपान्तर 'मण्डल' से प्रकाशित हो चुके हैं : १. नवीन यात्रा, २. मास्टर महीम और ३. धूप-छाह। इनमें उनका 'नवीन यात्रा' उपन्यास तो अत्यन्त लोकप्रिय हुआ है। उसके एकाधिक संस्करण हो चुके हैं। भारतीय जीवन के लिए किस प्रकार की शिक्षा उपयोगी हो सकती है, इस बात को उपन्यास में बड़े प्रभावशाली ढंग से समझाया गया है।

प्रस्तुत उपन्यास उनके बगला उपन्यास 'हार मानिनि, देखो' का हिन्दी अनुवाद है। इसमें भारतीय नारी के त्याग, सहिष्णुता और कष्ट-सहन की कहानी कही गई है और इस सनातन सत्य का प्रतिपादन किया गया है कि अंत में जीत त्याग की होती है। कहानी जितनी रोचक है, उतनी ही मार्मिक भी है।

नारी सदा से त्याग की मूर्ति रही है। वह सहती है, पर कहती नहीं है। आज नारी-मुक्ति की नई धारा प्रवाहित हो रही है। कहा जाता है कि नारी अपने ऊपर कोई बंधन क्यों स्वीकार करे? पुरुष की भांति नारी को भी मुक्त रहने का अधिकार है। लेकिन इस बात से कोई भी इन्कार नहीं कर सकता कि स्वभावत: जितना त्याग स्त्री कर सकती है और करती है, उतना पुरुष नहीं कर सकता। यही कारण है कि त्याग के क्षेत्र में स्त्री को पुरुष की अपेक्षा सदा ऊंचा स्थान दिया गया है।

लेखक की जन्म-भूमि और कर्म-भूमि बंगाल है। उनकी रचनाओं में बंगाल का रंग रहता है। वह पाठकों को वहां की प्राकृतिक छटा के भी दर्शन कराते हैं, साथ ही वहां के आचार-विचार तथा बंगाली परिवारों की भी झांकी प्रस्तुत करते हैं। यह सब पाठकों को इस पुस्तक में मिलेगा।

पुस्तक की सामग्री प्रेरणादायक है, उसकी वर्णन-शैली आकर्षक है और उपन्यास से कुछ शिक्षा भी मिलती है।

हम आशा करते हैं कि पाठक पुस्तक को चाव से पढ़ेंगे और इसके प्रचार-प्रसार में योग देंगे।

—मंत्री

अपराजिता

कहते हैं, ऐसा कभी नहीं होता। सुन तो लीजिये पहले किस्से को, फिर जो मरजी हो, सो कहिये।

स्थान सिराजकाटीगंज, भद्रा नदी पर। सलिल मित्र के मकान का बरामदा। दो बहनें, मंजरी और मंदिरा, बड़िया बना रही हैं। मंजरी इस काम में अनाड़ी है, मंदिरा चतुर है। यह भी एक शिल्प-कर्म है—बड़ी की पीठी से शख बना रही है, मछली बना रही है, कमल का फूल बना रही है और साथ-ही-साथ मंजरी को इसकी विधि भी बताती जा रही है।

बहनों में पुराने दिनों की बातें हो रही हैं।

मंजरी बोली, "ओफ्, कितना डरा दिया था उस गुमनाम चिट्ठी ने! मैं तो घबड़ा ही गई थी कि कहीं सचमुच ही ऐसा न हो। तू ही ठीक समझी थी कि यह शादी के रिश्ते को तोड़ने की एक चाल भर है।"

मंदिरा सिहरकर बोली, "यह सयोग की बात थी कि मां ने चिट्ठी मुझे ही लाकर दी। अगर वह किसी और के हाथ लगती तो बड़ा अनर्थ हो जाता।"

मंजरी बोली, "रिश्ता ही टूट जाता।"

तभी साइकिल लिये सलिल वहां हाजिर हो गया। काम पर जा रहा है। मुस्कराकर बोला, "क्या टूटने-फूटने की बातें हो रही हैं?"

मंजरी ने कहा, "शादी के मौके पर तुम्हें बदनाम करने के लिए एक गुमनाम चिट्ठी भेजी गई थी।"

मंदिरा की ओर देखकर शरारत से मुस्कराते हुए सलिल बोला, "अच्छा, मुझे बदनाम करने के लिए! यह किस दुष्ट का काम था? पता लगा कुछ, दीदी?"

गरज यह कि सलिल के लिए यह कोई खबर नहीं थी। मंदिरा ने इतने दिन के दाम्पत्य जीवन में क्या पति को यह मजेदार कहानी

गी ? न जाने उनके बीच इस बात को लेकर कितना हंसी-मजाक हुआ
गा ।

तो भी मंजरी कहे जा रही है, "चिट्ठी मां के नाम होने की वजह से ाकिये ने उन्हीं को दी थी । मां कितनी जल्दी घबरा जाती हैं । अगर वह इस चिट्ठी को पढ़ लेतीं तो रिश्ता जरूर टूट जाता । लेकिन गनीमत यह हुई कि उस वक्त मां के हाथ खाली नहीं थे ।"

मंदिरा बोली, "नहीं, रिश्ता टूट नहीं सकता था । न जाने कितने जनम का ऋण है इनका मेरे ऊपर ! इनके यहां नौकरानी बनना जो लिखा था मेरे भाग में । इसे कौन मेट सकता है !"

सलिल मंजरी को गवाह मानकर बोला, "सुन रही हैं ! कहती हैं, नौकरानी बनी हुई हैं ये मेरे यहां । मुझे गुलाम बना रखा है, फिर भी इनको चैन नहीं आता ।"

मंदिरा ने कहा, "मैं इन्हें दुर्वासा ऋषि कहा करती हूं । सच है या झूठ, यह तुमने कुछ दिन कलकत्ते में भी देखा था, यहां भी देख रही हो । तुम्हीं फैसला करो, दीदी ! मामूली-सी भूलचूक होने पर भी हायतोबा मचा देते हैं ! तो फिर नौकरानी नहीं हूं तो क्या हूं ?"

सलिल शिकायत सुन रहा था और मुस्करा रहा था । मंजरी सोलहों आने सलिल की ओर है । बोली, "भई, मुझे तो ऐसा कुछ नजर नहीं आता । तेरा दूल्हा बहुत अच्छा है । थोड़ा-बहुत रोबदाब तो रहना ही चाहिए, नहीं तो मर्द किस बात का ! मेरे पति का दिमाग बिगड़ने पर भी रोब कम नहीं हुआ था । इतना मारते थे कि बदन पर काले-नीले दाग उभर आते थे । नरम सुभाव का मर्द मुझे तो जरा भी नहीं भाता ।"

मुकद्दमे में जीतकर सलिल विजय-दर्प के साथ चला गया । अपने समर्थन में मंदिरा और भी कुछ कहने जा रही थी, इतने में दुमंजिले के कमरे से चीख-पुकार सुनाई दी, लगा जैसे डाकुओं ने हमला बोल दिया है ।

मंदिरा ने हंसते हुए कहा, "पागलों की गिरस्ती है मेरी । मैं भी शाय किसी दिन पागल बन जाऊं !"

परीबाला दूसरी मंजिल से चिल्ला रही थी, "मंदा, अपनी लड़की करतूत देख जाओ । जल्दी-जल्दी ।"

मंदिरा ने कहा, "सुन रही हो न? अब बड़ियों को छोड़कर दौड़ो ऊपर। अगर नहीं जाओगी तो मुसीबत हो जायगी।"

ऊपर से लगातार चिल्लाने की आवाज आ रही है, "अरे आओ जल्दी, आओ। इसके बाद यह तमाशा फिर नहीं मिलेगा देखने को। आओ, फौरन आओ।"

आवाज और तेज हुई, "किस राजकाज में फंसी हो? आती क्यों नहीं?"

मंदिरा ने बेचैन होकर कहा, "चलो, दीदी बहुत नाराज हो रही हैं। बड़ी जिद्दी हैं। नहीं जाऊंगी तो न बोलेंगी, न खायंगी। ऐसे आदमियों से मुझे बड़ा डर लगता है।"

नहीं, शुरू से बयान करता हूं। कोई ज्यादा पुरानी बात नहीं है, सिर्फ चार ही साल का अरसा हुआ है। समय—चार साल पहले का, एक इतवार। स्थान—जिले का सदर शहर। इस गंज से साइकिल पर तीन घंटे का रास्ता है, नाव से डेढ़ घंटा लगता है।

इतवार को कचहरी की छुट्टी रहती है। अनिल मित्र वकील मौज कर रहे हैं। आज मुवक्किल का काम नहीं करेंगे, लेकिन आदत से लाचार, बैठकखाने में आकर अपनी कुर्सी पर बैठे हैं।

पास ही तीन तख्तों को मिलाकर एक बड़ी-सी बैठक है, जिस पर दरी और चादर बिछी हैं, तकिये हैं। बहुत अच्छी वकालत है अनिल मित्र की। दो सहायक हैं, दो मुहर्रिर हैं। बैठकखाने में मुवक्किलों की ठसाठस भीड़ लग जाती है। पर आज करीब-करीब खाली है, कुल दस-बारह आदमी हैं। कई नजदीकी मुवक्किल हैं, बाकी पड़ोसी और दोस्त। बातचीत हो रही है, चाय-सिगरेट के दौर चल रहे हैं।

इस छोटे शहर में एक वृद्ध रायबहादुर हैं। बड़ी धूमधाम के साथ उनके लड़के की शादी अभी हुई है। इसी का किस्सा चल रहा है। लड़की कलकत्ता की है। दहेज में रायबहादुर ने मोटर तक वसूल कर डाली और उसी मोटर पर दूल्हा-दुलहिन के साथ ड्राइवर के पास वाली सीट पर रायबहादुर खुद बैठकर डेढ़ सौ मील का रास्ता चलकर यहां आए। इस

तरह गाड़ी की परख भी हो गई और रेल-भाड़ा भी बच गया। दहेज के सामान का यह हाल है। उस पर नकद कितना लिया है, वह कानून के डर से जाहिर नहीं हुआ है। लेकिन रायबहादुर ने मक्खी मारकर हाथ गंदा नहीं किया है, यह अनुमान सहज ही में लगाया जा सकता है।

यह सबके लिए चिन्ता का विषय बन गया। हाय, कैसे दिन आ गये। ऐसी हालत में हमारे जैसे गरीब घर की लड़कियों की तो शादी ही नहीं हो पायगी। फिर, ऐसे कौन-से सुर्खाब के पर लगे हैं रायबहादुर के लड़के में? विलायत गया था, लेकिन विलायत जाने से ही तो कोई लाट साहब नहीं बन जाता! कितने ही विलायत से लौटे लड़के यहां बेकार घूमते मिलते हैं। सुना है, बैरिस्टरी पास कर आया है। लेकिन बैरिस्टर लोग भी पेट की खातिर स्कूल-मास्टर बन गए हैं, यह भी देखा है।

समाज की वर्तमान दशा का जब लोग इस तरह रोना रो रहे थे, इसी बीच अनिल मित्र ने यकायक कहा, "भाई की शादी करूंगा। दशहरे पर घर जाकर मां की आज्ञा ले आया हूं।"

विषयान्तर हो गया। अब अनिल मित्र की मातृभक्ति का प्रसंग छिड़ गया, "चारों ओर कितने ही वकील-बैरिस्टर हैं, पर हमारे मित्रासाहब की इतनी अच्छी प्रैक्टिस मां के आशीर्वाद की वजह से ही है। बार-लाइब्रेरी के बरामदे में उनके मुवक्किलों की कतार बैठी रहती है। वे ईर्ष्या से देखते रहते हैं।"

"यह सबकुछ नहीं," अनिल मित्र ने अपनी सफलता को अस्वीकार कर दिया, "दो-तीन साल गुजर जाने दीजिये, रोजगार किसे कहते हैं, मेरा भाई यह दिखला देगा। उसने एक बहुत बढ़िया काम शुरू कर दिया है।"

पता चला है कि सिराजकाटीगंज में उसने कोयले का एक डिपो खोला है। बहुत अच्छा चल रहा है।" आगे अनिल मित्र ने कहा, "मुकदमे-नालिश कितने घरों के लोग करते हैं? लेकिन चूल्हा हर घर में सुलगाना पड़ता है। लकड़ी महंगी है और फिर आसानी से मिलती भी नहीं। बिना कोयले के गुजारा नहीं। मैं हूं ही यहां सदर में। कोयले के डिब्बों का बंटवारा यहीं से होता है। दूसरे किसी को मिले, या न मिले, सिराजकाटीगंज के कोयले

के डिपो में माल नियमित पहुंचता रहता है।"

"क्यों नही पहुंचेगा ! रुपया-पैसा, सिफारिश किसी बात की कमी तो है नही ! आप लोग जो कुछ छूते है, वही सोना बन जाता है।"

अनिल मित्र बोले, "मां का अबतक कोई आग्रह नही था। पैतृक धन-सम्पत्ति जो कुछ भी हो, लड़के की निजी आमदनी का वसीला न हो तो पराये घर की लडकी उसके सिर नही मढनी चाहिए। अबकी पूजा के समय वही जाकर मैंने डिपो का हिसाब-किताब अच्छी तरह देखा और मां से कहा कि अब भाई की शादी में देर मत करो। यहा के घर के लबे-चौड़े इंतजाम को छोड़कर बडी बहू (अनिल मित्र की पत्नी) हिल तक नही सकती। गांव के मकान में मा अकेली हैं। उमर हो गई है, फिर रक्तचाप से पीडित हैं। दिन-ब-दिन बूढी होती जा रही हैं। अब छोटी बहू आकर घरबार का बोझ सभाले, मां की सेवा-शुश्रूषा करे।"

अनिल मित्र इतना कहकर रुक गये। एक बार निगाह घुमाकर सबको देख लिया। फिर बोले, "अगहन या माघ मे ही शादी करूगा। ज्यादा देर नही करूगा। आप लोगो की जानकारी मे अगर कोई अच्छी लड़की हो तो जरूर बताइये। पुराने जमाने मे तो घटक लोग रिश्ता कराते थे, लेकिन अब तो उनका जमाना लद गया।"

एक व्यक्ति बोला, "अब अखबार घटक बन गये हैं। आज के अखबार को ही देखिये न, पूरे पन्ने पर विवाह के योग्य लडके-लडकियों की खबरें हैं। लड़कियां सब देखने मे अव्वल नम्बर की हैं। ढूंढने पर मामूली एक भी नही मिलेगी। बाप रे बाप ! घर-घर मे आजकल इतनी अप्सराएं पैदा हो रही हैं !"

अनिल मित्र बोले, "मुझे अव्वल नबर की ही लड़की चाहिए, जो सचमुच सुन्दर हो।"

एक दूसरे व्यक्ति ने कहा, "सो तो ठीक है। अब लेनदेन की बात भी बता दीजिये, क्योंकि लड़की की शादी मे खर्च करने की औकात सबकी एक-सी नही होती। इसलिए लेनदेन की बात जान लेने पर लड़की खोजने मे सहूलियत होगी।"

मुहर्रिर गुरुपद बरामदे के तख्त पर लगी मेज के सामने बैठा किसी

कागज की नकल उतार रहा था। जरूरी काम होने से वह इतवार को भी आया है। कलम रोककर, कान खड़े करके, वह भी इस बात-चीत को सुनने लगा।

अनिल मित्र ने जवाब दिया, "दहेज में एक पैसा नहीं चाहिए। अपने भाई को बेचूं, ऐसी बुरी हालत मेरी नहीं है। दहेज लेकर शादी करने को मैं लड़का बेचना ही समझता हूं। सिर्फ शांखा[1] और साड़ी देकर ही लड़की का कन्यादान होगा, बस।"

सबने एक स्वर से उन्हें साधुवाद दिया। काफी दिन चढ़ गया था। सभा भंग हो गई। लोग एक-एक करके जाने लगे। तेल की कटोरी लिये नौकर आता हुआ दिखलाई दिया। छुट्टी का दिन है, आज बाबू की अच्छी तरह मालिश करेगा। गुरुपद की ओर देखते हुए अनिल मित्र बोले, "कितना बज गया, कुछ ख्याल है मुंशीजी? छुट्टी के दिन इतना खटने की जरूरत नहीं। घर जाकर बीवी-बच्चों के बीच वक्त गुजारो। देर काफी हो गई है, न हो तो यहीं से खाकर जाना।"

शहर की सीमा के बाहर मैदान में जो नया टोला बस गया है, वहीं गुरुपद कई झोंपड़ियां डालकर रहता है। रोज साइकिल से आता-जाता है। यकायक इस टीले की किस्मत चमक गई है। नदी पर एक बांध बनाया जा रहा है, जहां से नहर निकालकर सिंचाई के लिए इलाके के खेतों को पानी दिया जायगा। वहां ठेकेदार, इंजीनियर, मजदूर वगैरा की भीड़ जमा हो गई है। वह ग्रामीण स्थान तेजी से शहर में बदल रहा है। अच्छे-अच्छे आदमी जमीन खरीद कर मकान बनवा रहे हैं। जमीन की कीमत हर दिन बढ़ती जा रही है। गुरुपद मन-ही-मन अपने को कोसता रहता है। ओफ़, उसने सिर्फ दस कट्ठे न खरीदकर दस बीघे जमीन क्यों नहीं खरीदी?

अनिल मित्र आराम कुर्सी पर चादर डालकर तहमद लपेटकर पसर गये। तेल की मालिश होने लगी। अपनी मेज से उठकर गुरुपद उनके पास आकर खड़ा हो गया।

---

१. शंख की चूड़ी। बंगाल में इसे सुहाग का चिन्ह माना जाता है।

अनिल मित्र बोले, "क्यों ?"

"छोटे बाबू की शादी की बात हो रही थी। मैं भी अपनी जान-पहचान की एक लडकी बता सकता हूं।"

"बडी अच्छी बात है।"

उत्सुकतावश अनिल मित्र सीधे बैठ गये।

गुरुपद बोला, "देवव्रत नदी, फर्स्टक्लास-फर्स्ट, पानित कम्पनी में सिचाई इजीनियर है। हमारे टोले में नदी के बाध के काम मे लगा है। मेरा रिश्तेदार है। सरल स्वभाव का है, छल-फरेब से दूर रहता है!"

वह बोलता ही चला जा रहा था। मुस्कराते हुए अनिल मित्र ने उसे टोककर कहा, "इजीनियर का मैं क्या करूगा, मुंशीजी ? मुझे लडके की नहीं, लडकी की जरूरत है।"

"जी हा, मैं लडकी की बात पर ही आ रहा हूं। लडकी देवव्रत की छोटी बहन है। बड़ा लायक है भाई।"

अनिल मित्र ने उसकी बात पूरी कर दी, "लिहाजा बहन भी लायक होगी, बेशक। फिर भी, पहले रूप, फिर गुण। सूरत ही सबसे पहले सामने आती है। लड़की सुन्दर होनी चाहिए।"

गुरुपद बोला, "जीहा, देखने में बहुत सुन्दर है। भाई-बहन सब सुन्दर हैं। देवव्रत ने अभी हाल मे अपनी छोटी बहन का फोटो दिखाया था। लड़की सचमुच बहुत खूबसूरत है।"

अनिल मित्र ने कहा, "कल जब यहा आओ, वह फोटो लेते आना। बड़ी बहू देखेगी। और कुछ लोगो को दिखाऊगा। अब नहा लो जाकर, बहुत देर हो गई!"

सोमवार को गुरुपद ने लिफाफे मे बद फोटो लाकर अनिल मित्र को दिया। वे लोग एक जटिल मामले को लेकर घिरे थे। जिरह मे किस तरह गवाहो की धज्जिया उडायेंगे, इसी का मसविदा तैयार कर रहे थे। मुवक्किलों से बातचीत करते जाते थे। काम रोककर कुछ क्षण फोटो की ओर देखते रहे। एक बार दूर ले जाकर देखा। फिर पास से देखने लगे।

"थोड़ा बैठिये। मैं अभी आ रहा हूं।" मुवक्किलों को इंतजार करने को कहकर अनिल मित्र मकान के अंदर चले गये। पत्नी लक्ष्मीरानी के हाथ में फोटो देकर बोले, "देखो तो, देवरानी पसंद आती है या नहीं? इस वक्त दिमाग में मुकदमा घूम रहा है। कचहरी से लौटकर सब सुनूंगा। दोपहर को जो भी औरतें आएं, उन्हें भी दिखाना।"

कचहरी से लौटकर अनिल मित्र कुछ देर घर के भीतर बैठते हैं। पत्नी से बातचीत करते हैं, नाश्ता लेते हैं, छोटी बच्ची को गोद में खिलाते हैं। बड़ा लड़का मिल जाता है तो पढ़ने-लिखने की बातें पूछते हैं।

लक्ष्मीरानी टोकती हैं, "क्यों लड़के से पढ़ने-लिखने की बातें पूछते हो? तुम्हारी इस पूछताछ से क्या वह विद्यासागर बन जायगा? इसका नतीजा यह होता है कि स्कूल से आते ही वह मुझे जल्दी खाना देने के लिए परेशान कर देता है, जिससे फौरन खेल के मैदान में चला जाय और तुमसे मुलाकात न हो।"

इसी तरह की बातें होती हैं। इस समय अनिल मित्र वकील नहीं रहते, पूरी तरह घरबारी बन जाते हैं। आज कचहरी से आते ही सबसे पहले उन्होंने पूछा, "कैसी लगी लड़की?"

थोड़ा हिचकते हुए लक्ष्मीरानी ने कहा, "इस रिश्ते की बात को आगे मत बढ़ाओ। बातचीत खतम कर दो।"

अनिल मित्र हैरत में आ गए। बोले, "क्यों? क्या लड़की इतनी गई-गुजरी है कि मैं जाकर उसे अपनी आंखों से देख भी नहीं सकता? इस लायक भी नहीं है क्या?"

फिर वह हंस पड़े। बात को मजाक में बदलकर बोले, "समझ गया ईर्ष्या की वजह से ऐसा कह रही हो। देवरानी आकर हरा न दे कहीं जेठानी को, तभी तुम रास्ते में रोड़ा अटका रही हो।"

इस पर लक्ष्मीरानी हंसी नहीं। बोलीं, "बड़ा खूबसूरत और मीठा चेहरा है। फोटो देखकर ही उसे प्यार करने लग गई हूं। ऐसी लड़की देवरजी के पल्ले पड़ेगी, यह विचार ही हैरान कर रहा है।"

संध्या के कुछ बाद अनिल मित्र अपने दफ्तर में बैठे हैं। चेहरा गंभीर

बनाए कुछ सोच रहे हैं। गुरुपद को कुछ भी पूछने की हिम्मत नहीं पड़ रही है। अन्त में अनिल मित्र ने ही चर्चा शुरू की, "थोड़ा समय निकालकर अगर देवव्रतबाबू यहां आ जाते तो अच्छा होता। मैं अगले इतवार से पहले नहीं जा सकता। मैं इतनी देर नहीं करना चाहता।"

गुरुपद बोला, "गरज देवव्रत को है, उसे अपनी बहन की शादी करनी है। लिहाजा वह आयगा, आपको जाने की क्या जरूरत है ?"

अनिल मित्र बोले, "गरज मुझे भी है, मेरे भाई की शादी है। मां की सेहत ठीक नहीं रहती, इसी से वे सलिल की गिरस्ती बसाने को उतावली हो गई हैं। अगर मुमकिन हुआ तो सब लोग इतवार को जाकर लड़की देख आयगे।"

अगले दिन कचहरी से लौटकर अनिल मित्र ने देखा कि देवव्रत आकर उनका इंतजार कर रहा है। उसने उठकर प्रणाम किया। बहन का फोटो देख ही चुके हैं। भाई और बहन के चेहरे की रूपरेखा एक ही तरह की है। उसमें न जाने कैसी सम्मोहक शक्ति है। देखते ही प्यार करने को जी चाहता है।

बड़े स्नेह से अनिल मित्र बोले, "भई, थोड़ा बैठो, मैं अभी कपड़े बदलकर आता हूं। कितनी देर के आए हो? चाय-वाय पी या नहीं !"

जाने को पैर बढ़ाकर फिर लौट पड़े। बोले, "यहां क्यों बैठे हो? चलो, भीतर चलो। साथ-साथ चाय पीते हुए बातें होंगी।"

देवव्रत ने कहा, "जी, अभी-अभी मैं चाय-नाश्ता ले चुका हूं।"

"ठीक है। एक बार फिर ले लेना। बिना चाय के प्याले को सामने रखे बात ठीक से जमती नहीं।" इतना कहकर उन्होंने एक हाथ देवव्रत के कन्धे पर रख दिया। एक तरह से जबरदस्ती उठाकर अंदर ले गये।

तारानाथ नंदी रेलवे में काम करते थे। अपने कार्यकाल के अंतिम दिनों में उन्नति करके स्टेशन-मास्टर बन गए थे। उनके चार लड़कियां थीं, एक लड़का। नौकरी के सिलसिले में जाने कितने घाटों का पानी पीना पड़ा। अनेक कठिनाइयों के होते हुए भी तीन लड़कियों की शादी कर गए। तीन लड़कियों के बाद एक ही लड़का है यह देवव्रत। इसके बाद

अंतिम संतान भी है एक लड़की—मंदिरा । मंदिरा की शादी नहीं कर सके। शुरू में इसके लिए कोई आग्रह भी नहीं था। उन दिनों वह वाराणसी में काम करते थे। लड़का और लड़की, दोनों दत्तचित्त होकर पढ़ाई कर रहे थे। एकाएक तारानाथ को स्टेशन-मास्टर बनाकर एक गांव के स्टेशन में भेज दिया गया। सारी व्यवस्था उलट-पलट हो गई। देवव्रत इंजीनियरिंग हॉस्टल में है, फिर मंदिरा को भी हॉस्टल में रखकर पढ़ाते, इतना पैसा कहां से आता? लिहाजा लड़की को पढ़ाई छोड़नी पड़ी। वह लड़की की शादी के लिए बेचैन हो उठे, लेकिन उस गंवई गांव में सही रिश्ता मिलना संभव नहीं था। लंबी छुट्टी के लिए दरख्वास्त भेजी। इरादा था कि कलकत्ता जाकर अच्छी तरह देखभाल कर लड़की के हाथ पीले कर देंगे, जैसाकि बड़ी और मंझली लड़कियों के सम्बन्ध में किया था। पर उससे पहले ही यमराज ने उन्हें बुला लिया। रात के अंतिम पहर में हैजा हो गया। डाक्टर के अभाव में चिकित्सा नहीं हो पाई। शाम होते-होते ही सारा खेल खत्म हो गया। तार पाकर देवव्रत डाक्टर लेकर आया, उसके करीब चार घंटे पहले ही रोगी चल बसा था। इतना ही हुआ कि तारानाथ का दाह-संस्कार लड़के ने किया।

देवव्रत ने कहा, "हमारा घर इसी महकमे के भीतर है—दसघरा गांव में।"

अनिल मित्र ने सिर हिलाया, "जानता हूं उस जगह को। वहां के मुवक्किलों का मैंने काम किया है।"

देवव्रत ने कहा, "पुश्तैनी घर है और थोड़ी जमीन है। जमीन की देखभाल रिश्ते के एक चाचा करते थे। यह पैतृक स्थान बचा हुआ था तभी आकर पनाह ले पाया।"

अनिल मित्र एकाएक उठ खड़े हुए। बोले, "अभी आया, एक मिनट में।"

जरासी देर में एक फोटो हाथ में लिये लौटे। बोले, "मेरा भाई यहां नहीं रहता। उसी का फोटो है यह। ले जाओ, सबलोग देखना। पसंद का सवाल तुम लोगों का भी तो है। असुविधा न हो तो आने वाले रविवार को दसघरा जाकर लड़की को देखने आ सकता हूं। रविवार के अलावा

और कोई समय मेरे पास नहीं है। इस रविवार को अगर न हुआ तो फिर अगले रविवार तक इंतजार करना पड़ेगा। मैं नहीं चाहता कि सात दिन की और देर हो।"

हैरत में आकर देवव्रत ने कहा, "आप आयगे ?"

अनिल मित्र बोले, "मैं शहरी चाल-ढाल का नहीं हूं। मेरा भाई किसी भी हालत में अपनी दुलहिन को देखने नहीं जायगा। तब मेरे अलावा और कौन जायगा ?"

देवव्रत ने कहा, "आप अगर कहें तो बहन को गुरुपद दा के यहां ले आ सकता हूं। गुरुपद दा ने भी यही कहा है।"

"आखिर मामला क्या है, भई, मेरे वहां जाने में तुम्हें एतराज क्यों है ?" कहकर वह हंस पड़े। "नहीं, मैं कोई एतराज नहीं मानूंगा। मैं जाऊंगा। मां के हाथ का बनाया भोजन करूंगा। अगर भगवान की मर्जी हुई, तो तुम्हारी बहन शीघ्र हमारे ही घर चली आयगी, कहीं दूसरी जगह क्यों जायगी ?"

देवव्रत सोच ही नहीं पा रहा है कि अनिल मित्र जैसे एक प्रतिष्ठित और सम्पन्न व्यक्ति उसके जंगल से भरे दसघरा गांव में जा सकते हैं, जहां उन्हें फूस के छप्पर के नीचे टूटे तख्त पर बैठना पड़ेगा।

उसने बड़ी विनम्रता से कहा, "हमारा गांव स्टेशन से चार मील दूर है। इस समय धान की कटाई हो रही है। पालकी के लिए कहार भी नहीं मिलेंगे। रास्ता ऐसा है कि बैलगाड़ी से जाने पर शरीर का जोड़-जोड़ दर्द करने लगेगा।"

पर अनिल मित्र नहीं माने। वह हर हालत में जायगे। बोले, "पालकी या बैलगाड़ी की जरूरत नहीं, पैदल ही जाऊंगा। मुझे डरा क्या रहे हो जी, मैं भी गांव का ही आदमी हूं। शहर में वकीलसाहब बना हुआ हूं, इसका मतलब यह नहीं कि अपाहिज हो गया हूं।"

किवाड़ की आड़ में खड़े होकर लक्ष्मीरानी ने सारी बातचीत सुनी बोलीं, "तुम्हारा उद्देश्य पूरा नहीं होगा। बेकार क्यों जा रहे हो ? [illegible]

क्या लड़के के बारे में पता नहीं लगायंगे ?"

"इसमें हर्ज ही क्या है ? देख ही लिया जाय।"

नाराज होकर लक्ष्मीरानी ने कहा, "बेहतर होगा कि यह शादी न करके लड़की को हाथ-पैर बांधकर दरिया में डाल दें।"

२/

मंदिरा से बड़ी तीन बहनें और हैं। इन तीन बड़ी बहनों की शादी हो चुकी है। अपने जीवनकाल में तारानाथ को इसके लिए बहुत कोशिश करनी पड़ी थी। अपनी सामर्थ्य से ज्यादा खर्चा करना पड़ा था। पर लड़कियां सुखी नहीं हुईं। प्रायः तीनों की एक ही-सी दशा हुई। अन्तिम दिनों में तारानाथ के चेहरे से हंसी गायब हो गई थी। दो-चार कौर खाकर उठ जाते थे। लड़कियों की हालत से उन्हें बेहद सदमा पहुंचा था। एक दिन तारानाथ ने गिरिबाला से कहा था, "हमारा ऐसा भाग्य है कि छूते ही सोना राख हो जाता है। यह तुम्हारी कोख का ही दोष है, नहीं तो तीनों की एक-सी हालत क्यों होती?"

गिरिबाला की आंखें लड़कियों के दुःख के कारण सदा गीली रहतीं।

मालती सबसे बड़ी लड़की है। बहुत देखभाल कर सरमंगल के मजूमदारों के घर के लड़के अनुपम से उसका ब्याह किया। रिश्ते में अनुपम गुरुपद का भाई लगता है। हीरा दामाद मिला था। शक्ल-सूरत का जितना अच्छा था, उतना ही पढ़ने-लिखने में भी तेज था। एम०ए० अव्वल दर्जे में किया, विनम्र, स्वभाव का खरा। आखिर में इसका यह स्वभाव ही उसका काल बन गया। छल-फरेब से कोसों दूर, बहुत ही सरल। आज ही किसी से जान-पहचान हुई है। थोड़ी ही देर में बिना कुछ भी छिपाये उसे अपने दिल की सारी बातें बता देगा। नौकरी की खबर मिलते ही अर्जी भेजता, नतीजा कुछ न निकलता। डाक-खर्च बेकार जाता। पिता पूछते, "किसी वसीले का पता भी लगाया है?"

अनुपम सिर हिलाकर कहता, "नहीं तो।"

मुंह पिचकाकर पिता कहते, "नहीं तो! क्या आसमान से टपकेगी तुम्हारे लिए नौकरी या घर पहुंचा जायगा कोई?

सरल भाव से उनकी ओर देखते हुए अनुपम पूछता, "क्या करना पड़ेगा तब ?"

"वही सब, जिनका सहारा सब लिया करते हैं। तिकड़म, तदबीर।"

अनुपम को पिता का मुंह चिढ़ाना बुरा लगा होगा। उसने पिता को अर्जी का एक छपा फार्म लाकर दिखलाया, कहा, "पढ़ो, क्या लिखा है—कैनवेसिंग स्ट्रिक्टली प्राहीबिटेड (सिफारिश पहुंचाना सख्त मना है)। सबसे ऊपर बड़े-बड़े अक्षरों में छपा दिया है।"

"ये छपे अक्षर तुम जैसे बेवकूफों के लिए हैं। दरअसल ये अक्षर याद दिला रहे हैं कि 'सिफारिश' नाम की एक चीज होती है और नौकरी के उम्मीदवारों के लिए यह अत्यावश्यक है।"

अनुपम लगातार नौकरी पाने की कोशिश में लगा है, पर अभी तक मिली नहीं। जो शिक्षा नौकरी नहीं दिला सकती, उसको क्या कोई चाटेगा ? अब सबकी धारणा बन गई है कि अनुपम एकदम निकम्मा है, उससे कुछ नहीं होगा। मालती की भी यही धारणा है। वह तमाम दिन इधर-उधर का चक्कर लगाकर मालती से आकर कहता, "कुछ पैसे तो दो, एक प्याली चाय पी आऊं।" चाय के कुछ पैसे भी जुटाने की सामर्थ्य उसमें नहीं है, पत्नी के सामने हाथ फैलाना पड़ता है। पैसों का पेड़ लगा रखा है जैसे उसकी पत्नी ने ! निरंतर लोगों के कटाक्ष सहते-सहते मालती का जी भी खट्टा हो गया है। मुंह फेरकर अवज्ञा से वह एक चवन्नी फेंक देती है। अनुपम बिना कुछ ख्याल किये उसे उठा लेता है और खुशी-खुशी चला जाता है।

लेकिन एक दिन मामूली-सी एक बात पर कुछ-का-कुछ हो गया। उड़द की दाल मिलने लगी है। उस दिन बड़ी साध से अनुपम ने कहा था, "तले हुए उड़द की दाल मुझे बड़ी अच्छी लगती है। मैंने मां की मृत्यु के के बाद कभी नहीं खाई। आज जरूर बनाना।"

इसमें दिक्कत कुछ भी नहीं थी। नई उड़द की दाल घर में मौजूद थी, शायद वही दाल बनती वैसे भी, पर फरमाइश पर मालती को क्रोध आ गया। उसने मसूर की दाल पकाई। उस दिन अनुपम को घर लौटने में देर हो गई। सबका खाना-पीना खतम हो गया था, मालती का भी।

जिनको काम पर जाना था, चले गए थे। बाकी आराम कर रहे थे। थके-भूखे अनुपम ने आकर खुद ही आसन बिछाया, खाना ढका रक्खा था, मालती ने सामने लाकर रख दिया।

न जाने आज अनुपम को क्या हो गया था, उसने सबसे पहले दाल की कटोरी पर नजर डाली। पूछा, "कौनसी दाल पकाई है?"

"देख लो। आंखें तो हैं।"

सदा के निरीह-शान्त उस व्यक्ति ने उस दिन वह किया, जो पहले कभी नहीं किया था। आंखें तरेरकर उसने पत्नी से पूछा, "उड़द की दाल पकाने को कहा था न, क्यों नहीं पकाई?"

मालती ने भी तेज आवाज में जवाब दिया, "यह मुझसे नहीं होगा। जो तुम्हारी नौकरानी हो, उससे बनवाओ।"

इतना सुनकर अनुपम उठ खड़ा हुआ। बात नई थी, पहले कभी उसने ऐसा नहीं किया था। बोला, "मैं नहीं खाऊंगा।"

मालती बोली, "नहीं खाओगे तो मत खाओ। बेकार आदमी की जीभ क्यों ललचाती है इतनी? इसे काट क्यों नहीं डालते?"

बिना खाये अनुपम अपने कमरे की ओर चला गया।

कहीं कोई प्रतीक्षा नहीं। दरअसल वे दोनों पति-पत्नी घर के लोगों के लिए बोझ बन गये हैं। अभी घर के बूढ़े मौजूद हैं, तभी खुले आम कोई खास लड़ाई-झगड़ा नहीं हो पाता। उनके बर्ताव और बातचीत में जहर का काफी पुट रहता है, जिसे प्रति क्षण सहन करना पड़ता है। अनुपम अगर समझता होता तो अबतक कुछ-न-कुछ जरूर हासिल कर लेता। दुनिया में और लोग भी तो कमा-खा रहे हैं।

उस पर अब मालती को तनिक भी ममता नहीं है। होती कैसे? वह बड़ी जेठानी के कमरे में जाकर फर्श पर आंचल बिछाकर लेट गई।

अनुपम कबतक घर में रहा और कब बाहर गया, कोई नहीं जानता। रात को घर नहीं आया, अगले दिन भी नहीं आया। इसके बाद वाले दिन दोपहर को मालती के नाम एक चिट्ठी आई। लिखावट अनुपम के हाथ की थी। किसी की नजर पड़ने से पहले ही कमरे को बंद कर मालती ने लिफाफा खोला। सभी चारों ओर हो-हल्ला करके, रोना-पीटना

रही है। अनुपम को उसी ने तो मार डाला है। अब घड़ियाल के आंसू बहा रही है।"

तारानाथ छुट्टी लेकर आ गये। वे परिस्थिति को समझकर लड़की को ले आये। उन्होंने कहा, "बेटी, उस नरक में तुझे फिर जाने की कोई जरूरत नहीं है। देबू के भाग्य में अगर खाना बदा होगा तो तू भी भूखी नहीं रहेगी।"

तभी से मालती पिता के घर है। इसके बाद पिता की मृत्यु हो गई। साथ ही मां भी जैसे एकाएक बूढ़ी हो गई। मालती पर ही अब बहुत हद तक गिरस्ती की देखभाल की जिम्मेदारी आ पड़ी।



मालती के पास है माधवी। तारानाथ ने उसकी भी शादी एक अच्छे लड़के के साथ की थी। वह भी किस्मत की खोटी निकली। उस समय तारानाथ एक बहुत अच्छे स्टेशन पर थे। अच्छे स्टेशन से मतलब यह है कि ऊपरी आमदनी अच्छी थी। शादी में उन्होंने बहुत खर्च किया था। दामाद मानसकुमार सरकारी नौकर था। देश के बंटवारे के बाद झुंड-के-झुंड शरणार्थी चले आ रहे थे। मानस इसी बीच उन्हीं के पुनर्वास दफ्तर में अच्छे-खासे ओहदे पर पहुंच चुका था। काम में चुस्त होने के साथ-साथ अपने ऊपर वालों की खुशामद में भी पक्का था। इन दोनों गुणों के समन्वय के कारण वह तेजी से ऊपर चढ़ने लगा। ऊपर से और ऊपर, उससे सर्वोच्च शिखर पर पहुंचना भी असम्भव नहीं लगता था।

लेकिन तभी धड़ाम से जमीन पर आ गिरा। एक शरणार्थी तरुणी मां बन गई और उसने मानस पर पितृत्व की जिम्मेदारी लादकर मुकदमा दायर कर दिया। कितनी शर्म की बात है! मानस ने कहा कि यह सब उसके खिलाफ साजिश है। वह कुछ लोगों के लिए अपनी द्रुत पदोन्नति से आंख की किरकिरी बन गया है। वे ही पर्दे के पीछे से यह सब करा रहे हैं। इस सिलसिले में दफ्तर के एक वरिष्ठ सहकर्मी का नाम सुना जा रहा था। यह असंभव नहीं था। वादी की ओर से बहस के लिए एक बैरिस्टर नियुक्त हुआ। एक बेसहारा औरत की इतनी सामर्थ्य नहीं हो सकती कि अपने मुकदमे के लिए वह बैरिस्टर खड़ा कर सके। मानस ने भी अपने

बचाव में सर्वस्व की बाजी लगा दी। माधवी गहनों से लदी थी। एक-एक गया। तालाब के पानी में बहती हुई अनुपम की लाश बरामद हुई। इतने दिन बाद नौकरी ढूढ़ने की जिम्मेदारी से छुट्टी मिल गयी।

गजब! बड़े-से-बड़े लांछन को जो रोज यों ही मुस्कराकर अनसुना कर देता था, वही आदमी मामूली-सी उड़द की दाल के लिए जान दे बैठा! और यह काम उसने आवेश में किया हो, सो भी नहीं। ठंडे दिमाग से सोच-विचार कर पूरी सतर्कता बरतते हुए उसने ऐसी योजना बनाई कि किसी भी हालत में उसे मौत धोखा न दे पाये। वह तैरना नहीं जानता था, फिर भी उसे भरोसा नहीं हुआ। आखिरी समय जान बचाने की गरज से हाथ-पैर पीटते हुए संयोगवश अगर किनारे तक चला आये तो? इसलिए जितनी धोतियां थीं, एक पर एक करके सब पहन ली थीं। गले में कसके मफलर बांधा, मोजे पहने, जूते पहने। उसने अपने को जितना वजनी बना सकता था, बनाया, क्योंकि पानी में भीगकर वही वजन चौगुना हो जायगा, तब नीचे की ओर ही जायगा, दम लेने की खातिर हर संभव कोशिश करने पर भी फिर ऊपर नहीं उठ पायगा। इतनी गहराई से सोचकर उसने योजना बनाई थी! तालाब के पास ही एक ओर घना जंगल था। लगता है, वहीं उसने अपने ऊपर यह मौत का बाना चढ़ाया था। अगर घर से वह इस विचित्र वेश में आता तो किसी-न-किसी की नजर उस पर जरूर पड़ जाती। दो चिट्ठियां भी लिख गया है—एक मालती को। उसमें क्या लिखा है, इसे सिर्फ वही जानती है, और कोई नहीं। एक और लंबी चिट्ठी कुरते की जेब में मिली है, जिसकी स्याही बुरी तरह भीग जाने से चारों ओर फैल गई। उसका एक भी अक्षर पढ़ा नहीं जा सका।

लाश के पानी के ऊपर आ जाने के साथ ही अनुपम के सब दोष भुला दिये गए। उसके लिए सबकी ममता उमड़ पड़ी। बूढ़े ससुर ने तेज निगाह से मालती की ओर देखा। अन्तःपुर में जेठानियां भी तरह-तरह की बातें कहने लगीं। अन्त में मुहल्ले वालों ने भी कहना शुरू कर दिया, "इतना पढ़ा-लिखा लायक लड़का हमेशा थोड़े ही बेकार बैठा रहता। हर रोज की किचकिच बेचारा कबतक सहन करता? अंगूठा दिखाकर चला गया।" इन बातों से यही लगता था, जैसे सारा दोष अकेली मालती

का ही हो। उसकी आंखों में पानी देखने पर लोग कहते, "क्या स्वांग कर-करके सारे गहने चले गये। बी०आई० पी० रोड पर एक प्लाट था, वह भी चला गया। सबकुछ जाकर भी बात नहीं बनी। पांच साल के लिए जेल हो गई।

तारानाथ आये। बाप के सामने ही माधवी ने हाथों की शंख की चूड़ियां फोड़ डालीं। कहा, "जब सारे सोने के गहने चले गए, तब ये शंख की चूड़ियां ही क्यों बची रहें? इन्हें पहने रहने में घृणा होती है।" मांग का सिन्दूर भी पोंछ डाला। बोली, "मैं दीदी की तरह विधवा ही हूं। मैं ज्यादा हतभागिनी हूं। तुम्हारा बड़ा दामाद तो मर गया है, लेकिन मंझले दामाद ने तो जिन्दा रहकर ही मुंह काला कर लिया। अपना ही नहीं, मेरा और अबोध बच्चे तक का।"

वह बच्चे को लेकर वहीं रही। बाप के साथ किसी तरह नहीं गई।

तारानाथ बोले, "शहर में रहकर खर्चा कैसे चलायगी? यहां सब चीजें तो मंहगी हैं।"

"मैंने बस्ती में, तीन रुपये किराये की कोठरी देख रखी है, वहीं जाकर रहूंगी। कुछ न करने को मिला तो कागज के थैले बनाऊंगी। लेकिन अब मैं अपना यह कालिख-पुता मुंह लोगों को नहीं दिखा सकती, पिताजी!" कहकर जोर-जोर से रोने लगी।

तारानाथ लौट गये। उन्होंने सोचा कि दो-चार महीने में जब बची-खुची पूंजी खतम हो जायगी, तब इतनी जिद नहीं रहेगी, मिजाज ठंडा हो जायगा।

पूरा साल गुजर गया। माधवी बस्ती की कोठरी में नहीं गई। अपने पहले वाले घर में ही रही। तरह-तरह की बातें कान में आतीं। उसके खाली हाथों में फिर सोने की चूड़ियां आ गईं। भानु सरकार मानस के ठीक नीचे डिप्टी-आफिसर था। इनसे उसका बहुत मेल-जोल था। मानस को दादा कहता था, माधवी को भाभी। अब मानस की जगह भानु आफि-सर था। माधवी की गिरस्ती की वही देखभाल कर रहा था। सबसे ज्यादा खटकने वाली बात यह थी कि वह खाने-पीने का पैसा देकर उसी घर में रह रहा है। यह सब सुनी हुई बात है, ऐसा कहकर उड़ाई नहीं जा

सकती। किसी काम से देवव्रत एक बार जब कलकत्ता आकर मंझली दीदी से मिलने गया था, तो वह सब अपनी आंखों से देख आया है।

अपने आप माधवी ने ही उससे पूछा, "मैं बहुत बदनाम हो गई हूं न ?"

हिचकते हुए देवव्रत बोला, "मैंने सुना है कि भानुबाबू ने ही चुपचाप उधर के पक्ष को मुकदमे में पूरी मदद देकर मंझले जीजाजी को फंसाया है, जिससे वह स्वयं उनकी कुर्सी पर बैठ सकें।"

उपेक्षा के भाव से माधवी ने कहा, "हो सकता है। मैंने उनसे पूछा नहीं है। सड़े घाव को कुरेदने की तबीयत नहीं करती। पर उसने गढ़कर कोई झूठी चीज नहीं बनाई। इतना ही किया कि सचाई न दबाई जाय और गुनाह की पूरी सजा मिले। बुरा क्या किया ?"

कहते-कहते वह उत्तेजित हो उठी, "बता तो, किस चीज की कमी थी। घर की बीवी कोई ऐसी बदशक्ल नहीं थी। फूल जैसा सुन्दर एक लड़का भी गोद में आ गया था। हमारा परिवार सुखी था, फिर भी उन्होंने रुपये का लालच देकर उस गरीब लड़की का सर्वनाश कर दिया। वह रुपया भी उनका अपना नहीं था। खैरात में देने के लिए सरकारी रुपया था। अदालत में वह लड़की बिलख-बिलखकर रो रही थी। सगे-सम्बंधियों ने उसे त्याग दिया था। वह एकदम बेसहारा हो गई थी। उस वक्त अगर मुझे हाथ के पास कुछ मिल जाता तो कठघरे में खड़े अपराधी को वहीं खत्म कर देती।"

कुछ क्षण चुप रहकर माधवी ने अपने को संयत किया। फिर कहा, "जेल से बाहर न आने तक बिना खाये-सोये और अपने अबोध बच्चे की ओर बिना देखे मैं रात-दिन बस उन्हीं का ध्यान करती रहूं, ऐसी पतिव्रता साध्वी मैं नहीं बन पाई, भाई। लेकिन घर के लोग मेरी वजह से बदनाम क्यों हों ? जाकर प्रचार कर दे कि मैं मर गई हूं।"

•

माधवी के बाद है मंजरी। चारों बहनों में सबसे ज्यादा सुन्दर। उसकी शादी तारानाथ के प्रयत्न से नहीं हुई। उसका अनकेश नाम के एक तरुण से प्रेम हो गया। कानूनी विवाह हो गया। उस समय तारानाथ वाराणसी में थे। शादी के बाद नवदम्पति ने घरवालों को आकर

दबी आवाज में लड़की को कुछ डांटा-डपटा गया, ज्यादा नहीं, क्योंकि लड़का बड़ा रूपवान था, घर की हालत भी अच्छी थी। शायद जाति एक नहीं थी। इसे आसानी से अनदेखा किया जा सकता था। भीतरी बात को तारानाथ ने प्रकट नहीं होने दिया। पुनः हिन्दू रीति से शादी की व्यवस्था की। अलकेश के मां-बाप की भी यही इच्छा थी। निमन्त्रण-पत्र छापकर, पुरोहित बुलाकर, शुद्ध शास्त्रीय विधि से फिर विवाह-अनुष्ठान हुआ। अलकेश अपने मां-बाप का इकलौता लड़का था। मंजरी को भी सास-ससुर का स्नेह मिला।

लेकिन न जाने कैसा भाग्य लेकर आई हैं ये लड़कियां! जिन्दगी में किसी को सुख नसीब नहीं हुआ। अलकेश पागल हो गया। क्यों हो गया, यह चिकित्सकों की गवेषणा का विषय है। बहुत इलाज हो चुका, अब भी हो रहा है, फायदा कुछ नहीं हुआ। देव-सेवा की भांति मंजरी अलकेश की सेवा-टहल में लगी रहती। लोग देखकर धन्य-धन्य करते और उसके लिए अफसोस जाहिर करते, "हाय, ऐसी सुलक्षणा लड़की के भाग्य में विधान ने यह क्या लिख दिया!" वह उद्दीप्त पागल नहीं है, धीर-शान्त है। कुछ विशेष हरकतें होती हैं। हमेशा ओंठ हिलते रहते हैं, मन-ही-मन बड़बड़ाता रहता है। पेड़-पौधे, पशु-पक्षी आदि की भाषा समझने का दावा करता है। वनप्रान्तर में घूमता फिरता है। पेड़, लता, गिलहरी आदि को पुकारकर बातें करता है। देखकर लोग कहते हैं, "पागल नहीं, कवि है।" वास्तव में, उसने कवि-प्रकृति ही पाई है। लिखता भी है, लेकिन छिपाकर। अगर ढूंढ़ी जायगी तो उसकी कविता की कापी मिल जायगी।

फिर, अलकेश के दिमाग में एक अजीब बात घर कर बैठी है। उसकी मृत्यु कभी नहीं होगी। किसी भले आदमी को देखते ही हैरानी के साथ कहता है, "लय हो जायगा यह ब्रह्माण्ड, अकेला मैं ही बचा रहूंगा। कितनी मुसीबत की बात है! बताइये तो मैं अब क्या करूं?"

यही प्रश्न डाक्टर से भी होता, "कौन-सा उपाय करूं, डाक्टर साहब? मैं अमर हूं। मैं न जहर से मरूंगा, न बन्दूक की गोली से, न तलवार के वार से। पानी में डूबकर, फांसी लगाकर या छत से कूदकर भी नहीं। बड़ी मुश्किल हो गई।"

आसुओं की झड़ी लग जाती है, "मैं क्या करूं ? मैं क्या करूं ?"

डाक्टर रोगी के मन की दुश्चिन्ता को हंसी-मजाक के जरिये उड़ा देना चाहता है, "अभी इतनी कम उमर में मरने के लिए क्यों इतने उतावले हो रहे हैं ?"

अलकेश कहता है, "अभी की बात नहीं, मैं हजारों, लाखों या करोड़ों साल की बात सोच रहा हूं। समूची पृथिवी समाप्त हो गई है, मैं ज्यों-का-त्यों बना हूं। सोचिये, कितने अफसोस की बात है !"

डाक्टर मुस्कराकर कहता है, "जब पृथिवी नहीं रहेगी, तब आप किस पर रहेंगे ?"

"ग्रह-उपग्रह की तरह शून्य में चक्कर लगाता रहूंगा। अजीब-सा लगता है सोचने पर, डाक्टर साहब।"

डाक्टर ढाढ़स बंधाते हैं, "नहीं-नहीं, अभी से आगे के लिए इतने सोच-विचार की कोई जरूरत नहीं। हजार साल तक चुपचाप बैठे रहिये। इस दरमियान कोई-न-कोई रास्ता जरूर निकल आयगा। मैं ही निकाल दूंगा।"

आशान्वित होकर अलकेश कहता है, "निकाल सकेंगे ?"

"जरूर निकाल सकूंगा। अगर न निकाल सकता तो इतना जोर देकर क्यों कहता !"

डाक्टर ने मंजरी को अलग से समझाया, "बड़ी चिन्ता की बात है, बेटी। और तो कुछ नहीं, अगर यह जाचने गया कि छत पर से कूदकर या पानी में डूबकर मरेगा या नहीं, तो अनर्थ हो जायगा। इस विषय मे बहुत सावधान रहना पड़ेगा।"

मंजरी को यह कहने की जरूरत नहीं थी। वैसे ही वह अलकेश को हमेशा अपनी नजरों के सामने ही रखती है।

पागल हो या जो हो, स्त्री पर अपने अधिकार के विषय मे पूर्णतया सचेत है। मंजरी रूपवती है, उसे यह बोध पूरी तरह है। एक दिन दोनों पार्क मे बैठे थे। दूर की एक बेंच से एक आदमी बार-बार उस ओर देख रहा था। उसकी हरकत पर अलकेश की निगाह पड़ गई। मंजरी के चेहरे को दोनों हाथों की ओट देकर खिलखिलाकर हंसने लगा।

अपने पागल पति को छोड़कर मंजरी कहीं नहीं जाती। अबोध बालक

दबी आवाज में लड़की को कुछ डांटा-डपटा गया, ज्यादा नहीं, क्योंकि लड़का बड़ा रूपवान था, घर की हालत भी अच्छी थी। शायद जाति एक नहीं थी। इसे आसानी से अनदेखा किया जा सकता था। भीतरी बात को तारानाथ ने प्रकट नहीं होने दिया। पुनः हिन्दू रीति से शादी की व्यवस्था की। अलकेश के मां-बाप की भी यही इच्छा थी। निमन्त्रण-पत्र छापकर, पुरोहित बुलाकर, शुद्ध शास्त्रीय विधि से फिर विवाह-अनुष्ठान हुआ। अलकेश अपने मां-बाप का इकलौता लड़का था। मंजरी को भी सास-ससुर का स्नेह मिला।

लेकिन न जाने कैसा भाग्य लेकर आई हैं ये लड़कियां! जिन्दगी में किसी को सुख नसीब नहीं हुआ। अलकेश पागल हो गया। क्यों हो गया, यह चिकित्सकों की गवेषणा का विषय है। बहुत इलाज हो चुका, अब भी हो रहा है, फायदा कुछ नहीं हुआ। देव-सेवा की भांति मंजरी अलकेश की सेवा-टहल में लगी रहती। लोग देखकर धन्य-धन्य करते और उसके लिए अफसोस जाहिर करते, "हाय, ऐसी सुलक्षणा लड़की के भाग्य में विधान ने यह क्या लिख दिया!" वह उद्दीप्त पागल नहीं है, धीर-शान्त है। कुछ विशेष हरकतें होती हैं। हमेशा ओंठ हिलते रहते हैं, मन-ही-मन बड़बड़ाता रहता है। पेड़-पौधे, पशु-पक्षी आदि की भाषा समझने का दावा करता है। वनप्रान्तर में थूकता फिरता है। पेड़, लता, गिलहरी आदि को पुकारकर बातें करता है। देखकर लोग कहते हैं, "पागल नहीं, कवि है।" वास्तव में, उसने कवि-प्रकृति ही पाई है। लिखता भी है, लेकिन छिपाकर। अगर ढूंढ़ी जायगी तो उसकी कविता की कापी मिल जायगी।

फिर, अलकेश के दिमाग में एक अजीब बात घर कर बैठी है। उसकी मृत्यु कभी नहीं होगी। किसी भले आदमी को देखते ही हैरानी के साथ कहता है, "लय हो जायगा यह ब्रह्माण्ड, अकेला मैं ही बचा रहूंगा। कितनी मुसीबत की बात है! बताइये तो मैं अब क्या करूं?"

यही प्रश्न डाक्टर से भी होता, "कौन-सा उपाय करूं, डाक्टर साहब? मैं अमर हूं। मैं न जहर से मरूंगा, न बन्दूक की गोली से, न तलवार के वार से। पानी में डूबकर, फांसी लगाकर या छत से कूदकर भी नहीं। बड़ी मुश्किल हो गई।"

आंसुओं की झड़ी लग जाती है, "मैं क्या करूं? मैं क्या करू?"

डाक्टर रोगी के मन की दुश्चिन्ता को हंसी-मजाक के जरिये उड़ा देना चाहता है, "अभी इतनी कम उमर में मरने के लिए क्यों इतने उतावले हो रहे हैं?"

अलकेश कहता है, "अभी की बात नहीं, मैं हजारों, लाखों या करोड़ों साल की बात सोच रहा हूं। समूची पृथिवी समाप्त हो गई है, मैं ज्यों-का-त्यों बना हूं। सोचिये, कितने अफसोस की बात है!"

डाक्टर मुस्कराकर कहता है, "जब पृथिवी नहीं रहेगी, तब आप किस पर रहेंगे?"

"ग्रह-उपग्रह की तरह शून्य में चक्कर लगाता रहूंगा। अजीब-सा लगता है सोचने पर, डाक्टर साहब।"

डाक्टर ढाढ़स बंधाते हैं, "नहीं-नहीं, अभी से आगे के लिए इतने सोच-विचार की कोई जरूरत नहीं। हजार साल तक चुपचाप बैठे रहिये। इस दरमियान कोई-न-कोई रास्ता जरूर निकल आयगा। मैं ही निकाल दूंगा।"

आशान्वित होकर अलकेश कहता है, "निकाल सकेंगे?"

"जरूर निकाल सकूंगा। अगर न निकाल सकता तो इतना जोर देकर क्यों कहता!"

डाक्टर ने मंजरी को अलग से समझाया, "बड़ी चिन्ता की बात है, बेटी। और तो कुछ नहीं, अगर यह जानने गया कि छत पर से कूदकर या पानी में डूबकर मरेगा या नहीं, तो अनर्थ हो जायगा। इस विषय में बहुत सावधान रहना पड़ेगा।"

मंजरी को यह कहने की जरूरत नहीं थी। वैसे ही वह अलकेश को हमेशा अपनी नजरों के सामने ही रखती है।

पागल हो या जो हो, स्त्री पर अपने अधिकार के विषय में पूर्णतया सचेत है। मंजरी रूपवती है, उसे यह बोध पूरी तरह है। एक दिन दोनों पार्क में बैठे थे। दूर की एक बेंच से एक आदमी बार-बार उस ओर देख रहा था। उसकी हरकत पर अलकेश की निगाह पड़ गई। मंजरी के चेहरे को दोनों हाथों की ओट देकर खिलखिलाकर हंसने लगा।

अपने पागल पति को छोड़कर मंजरी कहीं नहीं जाती। अबोध बालक

के नहाने, खाने-सोने की जिम्मेदारी जैसे मां पर होती है, वैसे ही अलकेश की सारी जिम्मेदारी उसने अपने ऊपर ले ली है।



लड़कियां देखने-सुनने में सुन्दर हैं तो क्या हुआ, किस्मत की खोटी हैं। मंदिरा आखिरी लड़की है। तारानाथ नहीं रहे, सारी जिम्मेदारी अब देवव्रत पर है।

"गिरिबाला आज काली-माई के चित्र के सामने आकर माथा टेक रही हैं, "वे नहीं हैं मैया, देवू अभी बच्चा है, दुनिया के दांवपेंच नहीं समझता। अच्छी तरह कारज हो जाय, मंदा सुख-चैन से रहे, माता, तुमसे यही प्रार्थना है।"

३/

नाटे कद की गिरिबाला हंसी-खुशी अपनी घर-गिरस्ती के काम में लगी रहती थीं। पति की मृत्यु के बाद उनमें बेहद तब्दीली आ गई, फिर किसी ने उनका हंसता हुआ चेहरा नहीं देखा। घर में सयानी लड़की है, यह विचार आते ही दिमाग परेशान हो जाता। लड़का पढ़ने-लिखने में चाहे जितना अच्छा क्यों न हो, दुनियादारी के मामले में एकदम अनाड़ी है। बड़ी लड़की असमय में विधवा होकर दिन गुजार रही है। उसके लिए किसी स्थायी व्यवस्था के लिए तारानाथ बेचैन रहा करते थे। पर उनकी उम्र ने साथ नहीं दिया। जितना सोचती, उतना ही गिरिबाला का दिमाग परेशान हो उठता।

पिता की मृत्यु के बाद मंदरा में भी परिवर्तन आ गया। यकायक जैसे पक्की गृहिणी बन गयी। न जाने क्या किया करती है मां को लेकर।

गिरिबाला कहती हैं, "मैं जैसे दुधमंही बच्ची हूं, न कुछ समझती हूं, न कुछ जानती हूं। तभी बात-बात में तू मुझे आखें दिखाती है।"

"बच्ची ही तो हो तुम। अगर कोई अनजान आदमी तुम्हें और मुझे साथ-साथ देखे, तो तुम्हें ही लड़की कहेगा और मुझे मां।"

•

गिरिबाला की आंखों में नीद नही। बेटी भी जग पड़ती है थोड़ी देर बाद।

"क्यों, नींद नहीं आ रही है, मां?"

गिरिबाला फौरन आखें मूंद लेती हैं।

मंदिरा कहती है, "मैं तुम्हारी चालाकी समझती हूं। दुनिया भर की चिन्ताएं दिमाग में भर रखी हैं। नींद कैसे आये? नींद का बहाना करके पड़े रहने से नहीं छोड़ूंगी। सचमुच, सो जाओ।"

बिस्तरे पर से उठकर आलथी-पालथी मारकर मंदिरा बैठ जाती

है, मां का सिर अपनी गोद में उठा लेती है, पंखा झलने लगती है, गुन-गुना कर लोरी गाना शुरू कर देती है—"आ जा री निंदिया"...

तारानाथ के एक चचेरे भाई हैं श्रीनाथ। एक ही जमीन पर दोनों के घर बने हैं। व्यवहार-कुशल व्यक्ति हैं, खुशहाल हैं। दूध जैसा रंग होने की वजह से श्रीनाथ की स्त्री को सब 'रांगाकाकी' कहते हैं। देवरानी-जेठानी में अच्छी पटती है। रांगाकाकी से गिरिबाला अपनी बेटी के विषय में कह रही हैं, "मेरी हालत का अंदाजा लगाओ। बिस्तर पर बैठी है लड़की, लालटेन टिमटिमा रही है। पंखा झलते-झलते लड़की का हाथ दुःखने लगा है। चुपचाप पड़ी हूं मैं, तो भी पीछा नहीं छोड़ती। शैतान कहीं की! झुक-कर ध्यान से देखती है कि सचमुच मैं सोई हूं या नहीं। अपनी छोटी उमर में खिलौनों से खेला करती थी, मुझे भी उसी तरह का एक खिलौना बना लिया है इसने।"

रांगाकाकी ने क्षण भर गिरिबाला के चेहरे की ओर देखकर कहा, "तुम्हारी इस संतान के हाथ पीले हो जाने पर तुम्हें बड़ी हैरानी होगी।"

"यह सोचने से काम थोड़े ही चलेगा। उसकी किस्मत में जिस घर का अन्न-जल बदा है, वहां तो उसे जाना ही पड़ेगा। कहां है वह घर, इसी बात का पता नहीं चल रहा है। मेरा देवू, जो दुनियादारी की कोई बात नहीं समझता, सारा बोझ अपने कंधों पर लिये हुए है। जबतक यह लड़की अपने ठिकाने नहीं पहुंच जाती, वह भी किसी अच्छी नौकरी के लिए दूर नहीं जा सकता।"

फिर झट से रांगाकाकी का हाथ पकड़कर बोलीं, "तुम इस विषय में देवरजी से अच्छी तरह कहना। बिना उनकी मदद के यह काम नहीं होगा।"

•

शनिवार की छुट्टी लेकर देवव्रत एक दिन पहले ही दसघरा पहुंच गया। कल स्टेशन से अनिल मित्र को आदर-सत्कार से अपने साथ यहां लायगा।

अनिल मित्र जैसे व्यक्ति गांव में पैदल आ रहे हैं, यह सुनकर श्रीनाथ को बड़ा ताअज्जुब हुआ। बोले, "भई, मुझे तो विश्वास नहीं हो रहा

है इस बात पर। मन की मौज से बड़े आदमी कभी-कभी बड़ी-बड़ी बातें कर लिया करते हैं। पर ट्रेन के आने पर देखोगे, कोई नहीं आता। फौजदारी के वकील हैं। झूठ बोलना तो उनकी आदत में शामिल है। तुम बच्चे हो, ऐसे वकील की बात को इतने से पत्थर की लकीर समझ बैठे हो।"

आपस में खड़े-खड़े बात हो रही थी। मालती बोल उठी, "इसलिए हाथ-पर-हाथ रखकर चुपचाप तो नहीं बैठे रहा जा सकता। तीन-चार आदमी आयेंगे, भोजन करेंगे। यह उन्होंने अपने मुँह से कहा है। हाट में जाना पड़ेगा, तभी देबू एक दिन पहले भेजा जाता है।"

श्रीनाथ ने फौरन अपनी सम्मति देकर कहा, "अच्छा है, ठीक किया। अगर आ ही गए तब क्या होगा। देबू को हाट जल्दी जाना चाहिए, देर हो जाने पर अच्छी चीजें नहीं रहतीं।"

हाट जाने के लिए ही देवव्रत रुपये निकालने घर के अंदर आया है, आते ही मंदिरा से सामना हो गया। अपनी बहादुरी दिखाकर बोला, "सुना है, कितने बड़े घर से रिश्ता आया है?"

बजाय खुश होने के मंदिरा नाराज होकर बोली "क्यों लाता है रिश्ता! बता? फिर वही मान-मनौवल, रोना-धोना मचेगा। मुझे अच्छा नहीं लगता।"

फिर चेहरे पर एक हल्की मुस्कराहट चमकाकर बोली, "यह सब तू अपने लिए करता है। मुझे धकेलकर फिर अपनी बीवी लाना चाहता है मगर तेरा यही रवैया रहा तो तेरी कभी शादी नहीं होगी।"

"इस बार ऐसा नहीं होगा। लड़के के बड़े भाई बड़े उदार हैं, दकियानूस नहीं हैं। किसी को बहकाने वाली बातों में भी नहीं आने वाले हैं।"

श्रीनाथ ने कहा, "जब बाहर से लोग आ रहे हैं, उनमें कोई भी मामूली आदमी नहीं है। उनके उठने-बैठने का भी तुम लोगों ने कोई इंतजाम किया है? मेरी बैठक में ही लोग उठें-बैठें। क्यों?"

देवव्रत ने भीतर से उनके पास आकर कहा, "मेरा भी यही मतलब है, चाचा। मैं आपसे यह बात कहना ही चाहता था।"

श्रीनाथ ने कहा, "यह सिर्फ तुम्हारे ही कहने की बात नहीं है। कुछ

मेरी भी तो जिम्मेदारी है। दसघरा के नन्दियों में मैं भी तो शामिल हूं।"

मालती मुंह ओट में किये व्यंग्य की हंसी हंसने लगी।

श्रीनाथ बोले,"तारानाथ दा और मैं हमउम्र थे। एक ही साथ हमारा पालन-पोषण हुआ। नौकरी करके वे तो अपनी जिन्दगी बाहर-ही-बाहर काट गए। गांव की जमीन की देखभाल करके और लगान देकर मैंने ही यह बचाकर रक्खी थी। किसीने मुझसे ऐसा करने को नहीं कहा था, अपनी जिम्मेदारी महसूस करके अपने आप ही किया था, क्योंकि मैं जानता था कि बाप-दादे के थान पर एक-न-एक दिन आना ही पड़ेगा। अगर यह हाथ से निकल जायगी तब क्या होगा ?"

गद्‌गद्‌ भाव से देवव्रत ने कहा, "आपने हम लोगों के लिए बहुत किया है, चाचा। यह रिश्ता पक्का हो जाय, [illegible]ोशिश भी आप ही को करनी पडेगी।"

तुम सब हमारे यहां खाओगे वह यही बात कहने आये थे, पर भूल गये। तभी मुझे भेजा है। कि जल्दी जाकर कह आओ कि कल तुम्हारे घर चूल्हा नहीं जलेगा। दीदी का शाकाहारी भोजन भी सबसे पहले बनाकर यहां रख जाऊंगी।"

मुहरूट मालती चुप नहीं रह सकी। बोली, "क्या कह रही हो रांगा काकी, तुम? भोजन तो हमारे यहां ही बनेगा। सिर्फ तुम्हारे ओसारे में बैठकर खायेंगे। खाने के बरतन वहां से मिल जायेंगे। बस।"

"यह कैसे हो सकता है?" हैरान होकर रांगाकाकी बोलीं, "हमारे यहां क्या रसोईघर नहीं है? हमारे यहां खाना नहीं पकता?"

"कौन जाने, चाचा तो यही कह गये हैं कि खाना यहीं से बनकर जायगा।"

नाराज होकर रांगाकाकी ने कहा, "यह कहा है उन्होंने? सठिया गये हैं। एक बात कहने जाकर दूसरी बात कह डालते हैं! घर पहुंचकर उन्होंने ही फिर मुझे ठेलकर भेजा है, कहने के लिए कि सबका भोजन हमारे ही घर बनेगा।"

इसके बाद रांगाकाकी गिरिबाला के पास चली गईं।

मालती ने कहा, "चाचा की खुशहाली इन्हीं के पुण्य के बल पर आई है। जायदाद के मामले में चाचा में एकाएक सुमति आ गई और लिखापढ़ी करके सबकुछ उन्होंने अपने आप लौटा दिया, इसके मूल में हैं रांगा-काकी। इन दौरान उन्होंने खाना-पीना छोड़ दिया था। कह दिया था, "जबतक उनका सबकुछ नहीं लौटा दोगे, मैं अन्न-जल ग्रहण नहीं करूंगी!' चार दिन तक वे इसी तरह पड़ी रहीं। तब चाचा कुछ नरम हुए, लेकिन पूरी तरह नहीं। बोले, "मैंने अबतक जमीन का जो लगान दिया है, वह रकम पहले मुझे दे दें।" रांगाकाकी ने यह भी नहीं होने दिया। कहा, "तुमने लगान दिया था तो जमीन की फसल भी तो पायी थी। एक पैसा भी नहीं देंगे वे।"

देवव्रत यह सब आश्चर्य से सुन रहा था। बोला, "ये बातें मैंने पहले नहीं सुनी थीं। तुम्हें कैसे पता चला, दीदी?"

मालती ने कहा, "चाचा के अच्छाई के सारे काम वास्तव में रांगा-

काकी के होते हैं। लेकिन बताती हैं कि चाचा ने किये हैं। स्वयं कुछ नहीं हैं, परम दयालु पति ही सबकुछ हैं। सबके सामने यही प्रकट करती फिरती हैं। घर पास-पास होने के कारण मुझे सब पता चल जाता है।"

थोड़ा रुककर फिर बोली, "कल जो अपने घर बुलाकर हमें और हमारे मेहमानों को खिलाया जा रहा है, इसकी तह में भी काकी हैं। चाचा ने अपनी मर्जी से यह नहीं होने दिया है। ऐसे आदमी ही नहीं हैं वे।"

घर के बरामदे में बैठी गिरिबाला आसन्न संध्या की दीया-बत्ती के लिए बत्तियां बंट रही थीं। मुस्कराती हुई रांगाकाकी वहां जा पहुंचीं।

"तुम्हारी निगाह में देबू का कोई महत्व नहीं था, लेकिन देखो, वही कितना बढ़िया रिश्ता लाया है!"

निरुत्सुक भाव से गिरिबाला ने कहा, "पक्का न हो जाने तक कोई भरोसा नहीं।"

लड़की देखने में अच्छी है, इसलिए पहले भी कई जगहों से सम्बन्ध की बात हो चुकी है। दो जगहों से तो इस दसघरा गांव में आने के बाद भी हुई थी। एक जगह तो बात करीब-करीब पक्की हो चुकी थी कि एका-एक बड़े रहस्यजनक ढंग से लड़के वाले पीछे हट गये। दूसरी जगह लड़के-लड़की की जन्मपत्री नहीं मिली।

सम्बन्ध टूटते और गिरिबाला आंसुओं के समुन्दर बहातीं। अपना गुस्सा लड़की पर उतारतीं, "तेरे भाग्य में शादी नहीं बदी है। जिन्दगी भर ऐसी ही रहेगी। साथ में देबू भी।"

मंदिरा ने एक दिन कहा था, "मुझे ऐसे ही रहने दो न! तीन-तीन दामादों को तो लाकर देख चुकी हो, फिर भी दामाद देखने की तुम्हारी हवस पूरी नहीं हुई!"

इस बात पर, गिरिबाला फट पड़ीं, "जा, ढिंढोरा पिटवाकर अपनी बहनों के दुर्भाग्य का प्रचार कर। जब तू ही ऐसा कहती है तो दूसरे तो रिश्ता तोड़ने से लिए बरगलाने की बातें करेंगे ही।"

इन दो सम्बन्धों के टूटने का दुःख गिरिबाला के मन में भरा है। रांगाकाकी को इसी का हवाला देकर कहा, "अच्छे रिश्ते पहले भी तो आ चुके हैं।"

रांगाकाकी ने भौंएं नचाकर कहा, "उनका इस रिश्ते में मुकाबला नहीं हो सकता। यह बहुत ऊंचा रिश्ता है। सदर के जितने वकील-मुख्तार हैं, वे सब उनको जानते हैं। वकील अनिल मित्र की बहुत प्रशंसा करते हैं, उनकी वकालत बहुत अच्छी चलती है। फिर लड़के का अपना भी अच्छा धंधा है। और घर की जो हालत मैंने सुनी, उससे तो लगता है कि कई पीढ़ियों तक बिना कुछ किये ही वे आराम से जिन्दगी बसर कर सकते हैं।"

बुझी-सी आवाज में गिरिबाला बोली, "तभी मुझे तनिक भी भरोसा नहीं हो रहा है। देवरजी बहुदर्शी आदमी हैं, उन्हें भी नहीं हो रहा है। लगता है, रईस आदमी ने मन की मौज में बात कह डाली है। होना-हवाना कुछ भी नहीं।"

"क्या वे ऐसा कह गये हैं?"

रांगा काकी का चेहरा कड़ा पड़ गया, पर आवाज मुलायम ही बनी रही। बोलीं, "हिसाबी आदमी हैं। ज्यादा अच्छी बातों पर कभी विश्वास नहीं कर पाते। ठीक है, कल देख ही लिया जायगा कि वे आते हैं या नहीं और लड़की को देखकर क्या कहते हैं।"

४/

देवव्रत स्टेशन गया। श्रीनाथ का सन्देह गलत साबित हुआ कि उसे अमीर वकील ने झांसा दिया है। गंवई स्टेशन के प्लेटफॉर्म पर अनिल मित्र सचमुच गाड़ी से उतरे। साथ में तीन आदमी और थे। गुरुपद और बलाई, दोनों मुहर्रिर आए हैं, और आए हैं वकील जीवनमय चौधुरी—अनिल मित्र के जूनियर। अनिल मित्र के मना करने पर भी देवव्रत ने दो बैल-गाड़ियों की व्यवस्था कर रक्खी थी। लेकिन वह उन्हें गाड़ियों में नहीं बैठा पाया। वे सब पैदल ही चल पड़े, सो भी सीधे रास्ते पर होकर नहीं, बांसवन-आमवन में से, खेतों की मेंड़ों और घरों के पीछे वाले पोखरों के किनारों पर होकर, झाड़झंखाड़ और पानी में होकर। अनिल मित्र सबसे आगे थे। सबकी ओर सगर्व दृष्टि से देखते हुए कहते, "देखते क्या हो जी, मैं भी गांव का ही आदमी हूं। हमारे कैखाली गांव के रास्तों के मुकाबले तो ये कलकत्ता के चौरंगी के रास्ते जैसे हैं।"

नन्दी बाड़ी के करीब आते ही रास्ते पर आकर श्रीनाथ ने "आइए, आइए" कहकर अगवानी की और बैठकखाने में ले जाकर कालीन पर बैठाया। बोले, "आप महान व्यक्ति हैं। तभी आपने इस गंवई गांव में आने की तकलीफ उठाई है, नहीं तो भाई की शादी करना चाहते हैं, यह खबर लगते ही एक-से-एक बड़े आदमी खुद लड़की ले जाकर आपके चरणों में रख आते।"

श्रीनाथ के बात करने के ढंग से ही अनिल मित्र समझ गए कि वह बहुत घाघ बह है। वह कुछ परिचित-सा भी लग रहा था।

श्रीनाथ ने आत्म-परिचय दिया, "मेरा भतीजा है देवव्रत। दादा के अचानक उठ जाने से ये लोग बिलकुल असहाय हो गए थे। ये मेरे ताऊजी के लड़के थे, सगे भाई नहीं। मैंने भाभी से कहा कि दस दरवाजे ठोकर खाती क्यों फिर रही हैं। गांव के अपने पूर्वजों के घर में चली

आइए। मेरे बच्चों को अगर भोजन नसीब हुआ तो आपके बच्चे भी भूखे नहीं रहने पायेंगे।"

मंद-मंद मुसकाते हुए श्रीनाथ फिर बोले, "श्रीमान, मुझे पहचाना नहीं आपने ? मैं आपका पुराना मुवक्किल हूं। हजारों मुवक्किलों की भीड़ में पहचानना मुश्किल भी है। चार-पांच साल पहले मेरा आपके यहां आना-जाना था।"

अनिल मित्र को श्रीनाथ की याद आई हो या न आई हो, जीवनमय को आ गई। उन्होंने सीधे पूछा, "नकली पट्टे वाला मामला था न, क्यों ?"

पांच साल पहले हुए, इस फौजदारी मुकदमे में ये ही सब थे। यही दोनों वकील और दोनों मुहर्रिर भी। गुरुवर रिश्ते में मालती का देवर लगता था। तभी श्रीनाथ ने उसे खासतौर से सिफारिश के लिए पकड़ा था। यहां कोई बाहरी आदमी नहीं है। तोभी श्रीनाथ को शर्म आने लगी। बोले, "दुश्मनों ने झूठ-मूठ षड्यंत्र रचकर जालसाजी के मामले में फंसा दिया था। धरम का सहारा था। उसीसे दुश्मनों के जाल को काटकर निकल आया।"

जीवनमय जोर से हंस पड़े, "साहब, धरम के अलावा आपको और भी सहारा हासिल था। आपके वकील, अनिल मित्र थे, मैं असिस्टेंट था। मैंने सफाई के दोनों गवाहों को हफ्ते भर तक तोते की तरह पढ़ाकर बयान तैयार कराया था, तब आप जाल से निकल पाए थे। धरम को लेकर पड़े रहते तो क्या निकल पाते ? आप चतुर आदमी हैं, क्या इसे नहीं समझते ?"

•

घर में लड़की दिखलाने की सरगर्मी छाई है। श्रीनाथ के बैठकखाने में से जाकर दिखायेंगे। गिरिबाला का चेहरा मुरझाया हुआ है। मालती से कह रही हैं, "जूठी पत्तल का धुआं स्वर्ग पहुंचेगा ! मुझे तो विश्वास नहीं होता। उन्हें सुन्दर लड़की चाहिए, यानी परकटी परी जैसी। मदा तो वैसी नहीं है, अगर सजी होती तो भी कुछ बात बन जाती !"

मालती ने नाराजी के साथ कहा, "मरे बिना ही भूत क्यों बन रही हो, मां ? हमलोग तो हैं ही, तुम्हें इसमें दखलन्दाजी करने की कोई जरू

नहीं। फिर, उन्होंने मंदा का फोटो देखा है और लोगों को भी दिखलाया है। चेहरा, रंग, पढ़ाई-लिखाई, घर-गिरस्ती के काम-काज वगैरा के बारे में देवू से अच्छी तरह पूछताछ कर चुके हैं। इसके बाद कष्ट भी उठाकर लड़की को घर पर देखने आए हैं। बात तय न होने की गुंजायश फिर कहां रहती है?"

देर हो रही देखकर रांगाकाकी समझाने चली आईं। उनकी नजर सब तरफ रहती है। अपने यहां रसोई के इन्तज़ाम में थीं, उसी के बीच फट् से पिछवाड़े की खिड़की में होकर इस घर में चली आई हैं।

मालती से बोलीं, "अधिक साज-शृंगार की जरूरत नहीं है, बेटी। साधारण वेश ही अच्छा रहेगा। साफ-सी एक साड़ी पहनाकर ले आ। देर हो गई है, खाने का वक्त हो रहा है। खा-पीकर थोड़ा विश्राम करके वे लोग तीन बजे वाली गाड़ी से लौटेंगे। झटपट एक बार दिखला दे। अगर चाहेंगे तो जाते वक्त फिर देख लेंगे।"

मालती कमरे के अंदर चली गई।

"सुनो।" गिरिबाला ने हाथ के इशारे से रांगाकाकी को पास बुलाया। कहने लगीं, "जीवन भर पानी की काई की तरह एक स्टेशन से दूसरे तक बहते-बहते आखिर में अपने ससुर के ठौर पर आ पहुंची हूं। यहां अब तुम्हीं लोगों का भरोसा है—तुम्हीं लोगों का क्यों, सिर्फ तुम्हारा ही। तुमसे क्या छिपाना! वे तीन लड़कियों का ब्याह कर गये हैं। लड़के को इंजीनियरिंग पढ़ा गये हैं। इन कामों के बाद हाथ बिलकुल खाली हो गया है। उन्होंने भविष्य-निधि कोष से भी उधार लिया था। इसलिए कटने-कुटने के बाद अढ़ाई हजार ही मिला। उस रुपये को मैंने लड़की की शादी के लिए संजोकर रख छोड़ा है। अंतिम संतान है मेरी। उनकी भी आखिरी दिनों में आंख की पुतली बनी हुई थी।"

रांगाकाकी ने कहा, "जब दहेज नहीं लेंगे तो रुपये किसमें खर्च होंगे?"

"उन्हें नकद कुछ न देने पर भी लड़की के गहने, वर-सज्जा वगैरा में तो खर्च होगा, फिर ब्याह-शादी में और भी दस तरह के खर्च होते हैं। मेरे पास एक हार और एक जोड़े कड़े हैं, ये पुराने दिनों की वजनी चीजें हैं। इन्हीं को तुड़वाकर आजकल के फैशन के तीन-चार गहने बनवा दूंगी।"

रांगाकाकी ने 'उहं-उहं' करके हाथ हिलाया, "दीदी, मुझे तुमने जो कुछ कहा, कहा, रुपये-गहने की बात फिर जबान पर मत लाना। अपना आखिरी सहारा चुकाकर विपत्ति में क्यों पड़ना चाहती हो? कितने दिन जीओगी, क्या भरोसा है! क्या लड़के का मुंह जोहती होगी? मदा की शादी के बाद देबू की बहू आयगी। पराए घर की लड़की ने अगर सीधे मुंह बात न की, तब क्या करोगी? दीदी, इन सबके बारे में अपनी तरफ से कुछ मत कहो। इस वक्त एकदम चुप रहो। देने की इच्छा होने पर शादी के बाद भी देने के बहुत मौके मिलेंगे।"

मंदिरा का हाथ पकड़कर रांगाकाकी खुद ही बैठकखाने में घुस गई, लज्जा का अनुभव नहीं किया। आंख के इशारे से मालती को भी अन्दर बुला लिया। *मंदिरा को यहां अकेले मालती के भरोसे नहीं छोड़ा,* आवश्यकता पड़ने पर स्थिति को संभालने के लिए स्वयं भी रहीं।

सबको नमस्कार करके मदा एक चौकोर स्टूल पर बैठ गई। रांगा-काकी बोलीं, "देखिए, आप लोग जो कुछ पूछना हो, पूछिए। साज-शृंगार करके नहीं आई है, विधाता ने उसे जैसा बनाया है, उसी रूप में है। मालती, उसके बाल खोल दे।"

अनिल मित्र ने हाथ हिलाकर मना किया। जबान से कुछ बोल नहीं रहे हैं, एकटक लड़की को देख रहे हैं।

गुरुपद के कान में बलाई ने फुसफुसाकर कहा, "बहुत सुन्दर है लड़की।"

गुरुपद सगर्व बोला, "देखा नहीं था, पर जानता था। वह जो कोने की ओर खड़ी हैं, लड़की की बड़ी बहन हैं। रिश्ते में मेरी भाभी लगती हैं। विधवा हैं। कुछ उमर भी हो गई है। तो भी देखो, कितनी सुंदर लग रही हैं!"

कमरा निस्तब्ध हो गया। दीवार की घड़ी के लटकन के डोलने की टिक्-टिक् सुनाई पड़ रही थी। अब कुछ बोलना जरूरी हो गया।

जीवनमय ने पूछा, "तुम्हारा नाम क्या है?"

मंदिरा ने नाम बताया।

"नाम जान लिया न?" अनिल मित्र हंस पड़े। "नाम।

तो पहले से ही है। पता चल गया कि लड़की गूँगी नहीं है। पैरों से चलकर कमरे में आई है, इसलिए लँगड़ी भी नहीं है। जीवन ! और क्या पूछने को है ? चुप बैठ रहो।"

सवाल तो जबान पर और भी आए थे, लेकिन जीवनमय अपने बड़े के आदेश को समझकर चुप हो गए।

शोभाकान्ती को अजीब-सा लगने लगा। बात क्या है, लड़की देखने आकर सब चुप क्यों हो गए ? बाहर से किसी ने उन्हें हाथ के इशारे से बुलाया। सिर हिलाकर इशारे का जवाब देकर मालती से बोलीं, "बेटी, तू इसके साथ रह, नहीं तो घबरा जायगी। रेलवे क्वार्टर में अकेली रहती थी न, इसलिए दूसरी लड़कियों की तरह नहीं है। डरपोक है।"

इतना कहकर आ रही थीं कि अनिल मित्र ने पुकारकर कहा, "लड़की को भी लिया जाइए। हमलोगों की बातचीत हो गई।"

शोभाकान्ती मुड़कर खड़ी हो गईं, स्तंभित। मालती को इशारा किया, दोनों बहनें चली गईं। अनिल मित्र से बोलीं, "बहुत सुन्दर लड़की ढूँढ़ रहे हैं आप लोग। मंदिरा को तो सब अच्छा ही कहते हैं। उसका चेहरा-मुहरा, रंग, शकल किसी में कोई कमी नहीं है। तो भी कोई उसे परी तो नहीं कहेगा। देवव्रत को लड़की के विषय में आप लोगों को और भी अच्छी तरह बतलाना चाहिए था।"

अनिल मित्र ने मुस्कराकर कहा, "लड़की को बहुत देर तक नहीं देखा गया। पूछताछ बहुत कम हुई। इसीलिए शायद आप यह कह रही हैं जो देखना था हम लोगों ने देख लिया, लड़की तो अच्छी ही है।"

शोभाकान्ती कहती गयीं, "शहर की शादी हो जाने पर देवव्रत भी यहाँ से चला जायगा। इस मामूली-सी नौकरी को लेकर देवव्रत जैसा लड़का गाँव में ही पड़ा-पड़ा सड़ता नहीं रहेगा। ज्यादा जल्दी इसी बात के लिए है। आप लोगों के घर लड़की जायगी, लड़की की माँ बड़ी उम्मीद बाँधे हुए है।"

अनिल मित्र ने जोर देकर कहा, "लड़की नापसन्द करने योग्य नहीं है। फिर भी बात पक्की करने से पहले बहुत-कुछ सोचना-विचारना पड़ता है। मेरे साथ और भी तीन आदमी आए हैं, उनकी भी राय मुझे जाननी

पड़ेगी। ख़ैर, जो भी होगा, जाने से पहले साफ़-साफ़ सब बता जाऊंगा। आप लोगों को असमंजस में पड़ा नहीं छोड़ जाऊंगा।"

जब लड़की दिखाई जा रही थी, उस समय श्रीनाथ वहां नहीं थे। बंटाईदार आया था, उससे धान का हिसाब समझ रहे थे। काम ख़त्म होने पर उस आदमी को विदा करके आये और बरामदे के नीचे खड़े होकर अंगड़ाई लेने लगे। एक छोटी चौकी पर बैठे अनिल मित्र उस समय बदन पर तेल मल रहे थे। वे गंभीर और चिन्तामग्न थे।

कुछ ही दूर पर जलाशय है। जीवनमय अच्छे तैराक हैं। सबसे पहले पानी में कूद पड़े हैं, मौज से तैरते हुए इस पार से उस पार आ-जा रहे हैं। गुरुपद और बनाई दोनों मुहर्रिर भी जलाशय के घाट पर मौजूद हैं। गुरुपद पानी से डरता है, उसने घाट पर खड़े-खड़े ही सिर पर दो लोटे पानी डालकर स्नान समाप्त कर लिया है, अब गमछा पहनकर घाट की सीढ़ी पर बैठा कपड़े धो रहा है। बनाई दोनों कानों में उंगली डाले लगातार डुबकी लगाए जा रहा है।

इसी बीच उनमें लड़की की चर्चा छिड़ गई।

उच्छ्वसित होकर बनाई बोला, "ख़ूबसूरत लड़कियां तो बहुत-सी देखी हैं, लेकिन यह लड़की उन सबसे बढ़कर है।

गर्व के साथ गुरुपद ने कहा, "मेरी भाभी चार बहनें हैं। सब एक-से-एक सुन्दर हैं।"

बनाई ने कहा, "बाबूजी राय तो जरूर पूछेंगे। क्या कहेंगे तब?"

"शुभस्य शीघ्रम, अगहन में ही शादी हो जाय तो अच्छा, नहीं तो माघ के उधर हरगिज न जाय।"

बनाई ने नाराज होकर कहा, "यही कहेंगे?"

"जरूर कहूंगा। घटक का काम मैंने ही किया है। देखा जाय तो मैं ही बाबूजी को अपने साथ यहां लाया हूं। अनुपम दादा अगर जिन्दा रहते तो शायद वे ही आते। उनकी जगह मैं आया हूं।"

बनाई ने कहा, "अपने आदमी होकर भी आप रिश्ता जुड़वा रहे हैं? मेरा क्या है आज बढ़िया-बढ़िया चीजें खाऊंगा, शादी में फिर खाऊंगा, इसीलिए आया हूं। लेकिन जब से लड़की को देखा है, बुरा लग रहा है।

माथे पर सिंदूर का टीका लगाकर और गले में माला पहनाकर जिस तरह बकरे को बलि के लिए ले जाया जाता है, मुझे कुछ-कुछ वैसा ही लग रहा है।"

सुभाष बिगड़ उठा, "शुभ कार्य के आरंभ में इस तरह ऐसी बुरी बात क्यों बोल रहे हो? सोलहो आने निर्दोष व्यक्ति कहां मिलेगा तुम्हें? हीरा गंदा नहीं होता, समझे। धो लेने पर साफ हो जाता है। मर्द बच्चे की भी यही बात होती है।"

तभी श्रीनाथ आगे बढ़कर अनिल मित्र के पास जाकर बोले, "लड़की कैसी लगी, श्रीमान?"

अनिल मित्र किसी विचार में डूबे थे। चौंककर बोले, "ऐं!"

"आप लोग जब लड़की देख रहे थे, एक जरूरी काम आ पड़ने की वजह से मैं यहां मौजूद न रह सका। एक तरह से अच्छा ही हुआ। तब पूछताछ करने में आप लोगों को हिचक हो सकती थी, उत्तर देने में लड़की भी हिचकिचा हो सकती थी। मेरे ही भरोसे ये लोग दसघरा में आए हैं। लड़की कैसी लगी, बताइए। आपकी राय जानना चाहता हूं।"

उनके बात करने के ढंग से साफ प्रकट हो रहा था कि वे सुनना नहीं चाहते, कुछ कहना चाहते हैं। तब कहते क्यों नहीं, कहने की क्या बात है! अनिल मित्र ने उन्हें उकसाने के लिए कहा, "दो-चार मिनट में क्या देखा जा सकता है। आप लोग तो रोज देख रहे हैं। आप ही बताइए न, लड़की सचमुच कैसी है?"

बुरा चेहरा करके, जैसे जान निकली जा रही है, ऐसी भूमिका बनाकर बोले, "आपकी आज्ञा शिरोधार्य है, पर मेरा कुछ कहना क्या उचित होगा? एकदम अपने भाई की लड़की है।"

अनिल मित्र ने कहा, "मैं भी कोई पराया नहीं हूं। आप मेरे पुराने मुलाकाती हैं। मेरी आपसे पांच साल पुरानी पहचान है। बताइये है कि है या नहीं? और लड़की के बाप आपके भाई होने पर भी, सगे भाई तो नहीं थे, परदेश में रहते थे। देखा जाय तो आप लोगों में ठीक-ठीक जान-पहचान भी नहीं थी।"

"सो तो है ही!"

इसके बाद श्रीनाथ जैसे जान पर खेल रहे हों, बोले, "तारा दादा की सभी लड़कियां देखने में अच्छी हैं, लेकिन इस गुण के साथ कुछ अवगुण भी हैं। बड़ी लड़की झगड़ालू है। उसकी जबान में इतना जहर है कि बेचारे दामाद को पानी में डूबकर मरना पड़ा। इसके बाद वाली लड़की का किस्सा, मुझे माफ कीजिये श्रीमान, मेरी जबान से बात बाहर नहीं निकल पायेगी। तारा दादा ने देखभाल कर, काफी पैसा खर्च करके, लड़कियों की अच्छे-से-अच्छे लड़कों के साथ शादी की थी, पर एक भी शादी नहीं टिक पाई। एक दामाद ने आत्महत्या कर ली, एक पागल हो गया और एक अभी तक जेल में सड़ रहा है। बड़ी सत्यानाशी लड़कियां हैं। जिस परिवार में जाती हैं, उसे बरबाद कर देती हैं। अन्तिम लड़की यह मंदिरा है। पहले भी इसके सम्बन्ध आये हैं, लेकिन बहनों की कहानियां सुनकर सब छिटक पड़ते हैं। किसका लड़का इतना सस्ता है कि इस घर की लड़की को अपने यहां बहू बनाकर ले जायगा?"

अनिल मित्र का तेल-मर्दन समाप्त हो चुका था। खड़े होकर बोले, "तब क्या रिश्ते की बातचीत बंद करके चला जाऊं?"

श्रीनाथ कुछ नहीं बोले।

यकायक अनिल मित्र ने पूछा, "क्या आपकी अपनी कोई लड़की है? हो तो बताइये, बहू बनाकर ले जाऊं।"

सकपकाकर श्रीनाथ ने कहा, "मेरी सब लड़कियों की शादी हो चुकी है।"

"आपकी बहन या साले की तो लड़की होगी?"

श्रीनाथ बोले, "सो तो है, लेकिन मैंने यह सब इसलिए नहीं कहा।"

"तब क्यों कहा, निष्काम परोपकार के लिए? पिता की मृत्यु के बाद देवव्रत आप ही को अपना अभिभावक मानकर यहां आया है। आपके अभिभावक होने का यही प्रमाण है?"

फिर मुंह फेरकर अनिल मित्र दनदनाते हुए जलाशय की ओर चले गये।

तभी तेज आवाज आयी, "सुनो।"

बैठकखाने में रांगाकाकी आ गई। हाथ में दूध का कलश

घर में दूध गरम कर रही थीं, उसी हालत में चली आई। सीधे आक्रमण किया, "कुटलपन करने गये थे ?"

विस्मय का भाव दिखाकर श्रीनाथ बोले, "किसने कहा ?"

"वे भी जाने-माने वकील हैं। उन पर रंग जमाने गये थे तुम ? जवाब अच्छा मिला।"

"आखिर हुआ क्या ?"

"मैं न बहरी हूं, न अन्धी। तबसे आकर तुम यहां खड़े बड़-बड़ कर रहे हो। मैं तभी समझ गई थी कि बिना जहर उगले नहीं मानोगे। वही किया भी।"

थोड़ा रुककर रांगाकाकी फिर गरज उठीं, "तुम आदमी नहीं हो, आदमी की शकल में काले सांप हो। मनुष्य इतना नीच कभी नहीं हो सकता।"

श्रीनाथ बिना कोई जवाब दिये ही चले जा रहे थे, रांगाकाकी ने डपटते हुए कहा, "रुको।"

"क्या है ?"

रुआंसी होकर वह बोलीं, " 'पति परम गुरु', उन्हें भला-बुरा कहना पाप है। मेरा भी ऐसी किस्मत है कि बुरा-भला कहकर पाप की गठरी भारी करती हूं। रुको !"

श्रीनाथ को खड़ा करके उनके पैरों पर सिर रखकर प्रणाम किया। बोलीं, "अब जाओ। लेकिन तुम पर मुझे विश्वास नहीं होता। मेहमानों से और कोई बात नहीं करोगे। मेरी आंखों में धूल नहीं झोंक सकते, यह तुम अच्छी तरह जानते हो। अगर कुछ कहने की कोशिश की तो···"

फिर हाथ के कलछे को उठाकर बोलीं, "तो इसी से तुम्हारी खोपड़ी बराबर कर दूंगी। फिर अपने सिर पर मारकर अपनी जान दे दूंगी।"

श्रीनाथ बोले, "ये लोग हमारे घर आये हैं और मैं उनसे कोई बात नहीं कर पाऊंगा, यह तुम मुझ पर जुल्म कर रही हो।"

इस पर रांगाकाकी ने सदय होकर यह छूट दी, "सिर्फ इधर-उधर की बातें ही करोगे, वह भी तब जब वहां और लोग हों। अकेले में कोई गुप-चुप बात नहीं करोगे।"

५/

शाम को अनिल मित्र ने देवव्रत को बुलाकर कहा, "मां तो उस मकान में हैं। हमलोगों को उनके पास ले चलो। राखा काकी को भी बुला लाओ वहां।"

गिरिबाला रसोईघर में जल्दी-जल्दी पूड़ियां तल रही थी, मालती उन्हें बेलकर दे रही थी। जाने से पहले मेहमानों को चाय के साथ पूड़ी-मोहनभोग दिया जाना था। नासमझ देवू बिना कोई इत्तिला दिये, इसी के बीच उन्हें लेकर वहां हाजिर हो गया। अच्छा यही हुआ कि रसोईघर में नहीं ले आया, बरामदे में तख्त पर बैठा आया।

देवव्रत ने पुकारा, "मां, थोड़ा इधर तो आओ।"

हाथ धोने के बाद वहां आकर गिरिबाला मिट्टी-सी खड़ी हो गई। पैर छूकर प्रणाम करके अनिल मित्र ने कहा, "सवेरे का आया हुआ हूं और अब जाकर मां से मुलाकात हुई। अबतक आप अपने को छिपाये फिर रही थीं।"

राखाकाकी आ गईं। श्रीनाथ भी आते हुए दिखाई पड़े। वे और जीवनमय किसी दिलचस्प मुकदमे के बारे में बातचीत करते आ रहे थे।

सब चुप, हाकिम का फैसला सुनने के पहले मुजरिम के दिल में जैसी धुकधुकी होती है, वही सबकी हालत थी।

अनिल मित्र ने कहा, "आपकी लड़की सचमुच सुन्दर है। आप लोगों की सहमति हो तो घर की लक्ष्मी बनाकर ले जाऊंगा।"

गिरिबाला खुशी के मारे रो पड़ीं। राखाकाकी ने फुसफुसाकर धमकाया, "यह क्या करती हो, दीदी? शुभ कार्य के अवसर पर कोई रोता है! छीः!"

अनिल मित्र बोले, "अब लड़के को देखने कब जा सकेंगे, बता दीजिये। यह कार्य अगले इतवार को ही पूरा हो जाने दीजिये न।

शनिवार को अगर सदर आ जायं तो मैं खुद साथ अपने घर लिवा चलूंगा। कोई दिक्कत नहीं होगी, नाव सीधे हमारे घर के घाट पर जाकर लगेगी। यही ठीक रहेगा। क्यों ?"

गिरिवाला बोलीं, "फोटो तो देख ही चुकी हूं, फिर देखने को क्या बचा है, बेटा ? आपको देख ही रही हूं और देवू तो आपकी बड़ाई करते नहीं थकता। आपको अपनी आंखों से देख लिया। आपने 'मां' कहा मुझे।"

बीच में ही अनिल मित्र बोल पड़े, "लेकिन मां बेटे को 'आप'-'आप' नहीं कहती।"

पर गिरिवाला के मुंह से 'तुम' निकलता ही नहीं। बोलीं, "गरीब घर की लड़की पर अहसान कर रहे हैं, यह कम बात है। इसके बाद देखने-सुनने का सवाल ही नहीं उठता।"

सिर को जोर का झटका देते हुए अनिल मित्र ने कहा, "यह नहीं हो सकता। लड़के वालों का काम तो सरल होता है, अपनी आंखों से देखकर लड़की को दुलहिन बनाकर ले जाते हैं। लड़की वालों का काम बहुत कठिन होता है। लड़की कैसे घर में जा रही, वे कैसे लोग हैं, सब-कुछ देखना होता है। जीवन-भर का बंधन है,बिना देखेभाले यों ही बात तय नहीं की जाती।"

जीवनमय ने श्रीनाथ से कहा, "पक्के कानूनदां होकर इन्होंने यह क्या बात कही ! अब जीवन-भर का बंधन कहां है, अब सम्बन्ध पद्मपत्र पर जल-बिन्दु के समान है—अभी है, क्षण-भर बाद नहीं। खेलते-खेलते बच्चे लड़ाई-झगड़ा करके कहते हैं न, 'जाओ, हम तुम्हारे साथ नहीं खेलेंगे।' बस यही तो अब होता है।"

अनिल मित्र अपनी बात का सिलसिला जारी रखे रहे, "लड़की के घरवाले हमारे यहां जाकर लड़के को देखेंगे, तमाम जरूरी बातों का पता लगायंगे। एक बार जाने से अगर काम नहीं होता तो दस बार जायंगे। अच्छी तरह देख-सुनकर, जानबूझकर तब अपनी लड़की दीजिये। मैं अपने ऊपर कोई जिम्मेदारी नहीं लेना चाहता।"

"कितने महान व्यक्ति हैं, ओह !" श्रीनाथ जोर-से बोल उठे। फौज-दारी के जाने-माने वकील होते हुए भी भीतर से इतने निर्मल हैं। दुनिया-दारी के मामले में सिद्धहस्त श्रीनाथ आश्चर्यचकित हो गये। थोड़ा बजा-

कर देखने की दृष्टि से एकदम पास जाकर बोले, "ऐसा न देखा था, न सुना था, अचरज में पड़ गया हूं, श्रीमान। शादी में कुछ नहीं लेंगे, यह भी सुना है।"

अनिल मित्र ने विस्मित होकर उनकी ओर सिर घुमाकर देखा, कहा, "नहीं तो! किसने कहा यह?"

अब आए रास्ते पर! मुसाहिबों के बीच में बैठकर अमीर लोग दरियादिली दिखाते हैं, लेकिन दरअसल दिल उनका कबूतर का-सा होता है। इनका भी यही हाल है। गर्व से श्रीनाथ ने चारों ओर नजर घुमाई। गिरिबाला का चेहरा फक पड़ गया। सब भौंचक्के हो गये, विशेषतया गुरुपद। बात पक्की करने के नाम पर इतनी भूमिका तब इसीलिए बांधी जा रही थी।

सहसा जोर-से हंसकर अनिल मित्र ने वातावरण के भारीपन को हल्का कर दिया, "कुछ नहीं लूंगा, यह मैंने नहीं कहा था, न कह ही सकता हूं। आपकी लड़की, सदा चाहिए मुझे, यही प्रार्थना लेकर मैं पैदल इतनी परेशानी सहकर आया हूं। उसे देना, न देना आप लोगों की मर्जी पर है। सिर्फ शंखा और साड़ी पहनाकर ही दीजिये, गहने-वहने नहीं चाहिए। मेरी मा के बहुत गहने हैं, आधे बड़ी बहू को दे दिये हैं, बाकी आधे छोटी बहू के लिए रखे हैं। मां खुद उन गहनों से दुलहिन को सजायंगी। उन्हें पहनकर ही आपकी दुबली-पतली लड़की पसीने-पसीने हो जायगी और अधिक देंगे तो बोझ के मारे बेचारी के मुंह के बल गिर पड़ने का डर है।"

•

लक्ष्मीरानी ने पूछा, "कैसी है लड़की?"

अनिल मित्र बोले, "फोटो में तो तुम्हें उसके चेहरे का आभास मात्र ही मिला है। तुमने उसकी चितवन नहीं देखी है। चौकी पर बैठकर जब उसने आखें उठाकर देखा, उसकी चितवन कितनी सुन्दर थी। हमलोगों का वह पालतू खरगोश कैसे ताकते हुए आकर गोदी में छिप जाता था, याद है न? उसकी दृष्टि वैसी ही है। मैंने उससे कुछ नहीं पूछा। तुम्हारी बातें ही तब मन में तूफान उठाये हुए थीं। एक बार मन में आया भी था

कि 'लड़की नापसन्द है,' कहकर रिश्ते की बात खतम कर दूं।"

लक्ष्मीरानी बोलीं, "उचित यही होता। यह काम अच्छा नहीं हो रहा है।"

अनिल मित्र हंसने लगे, "बड़ी बहू, तुम कौन-सी नई बात सुना रही हो! हमलोगों का तो पेशा ही है खराब काम करने का। खूनी को बेकसूर छुड़वा देते हैं, जिनके यहां खून हुआ है, उलटे वे ही अपनी नोटों की गड्डी से हाथ धोकर रोते हुए चले जाते हैं। इसी तरह का अन्याय-अनाचार अक्सर होता रहता है। ऐसा ही एक काम मां की आज्ञा से हो रहा है तो क्या हर्ज है?"

फिर बोले, "जैसे उन्हें मैंने फंदे में फंसाया है, वैसे ही उसे काटकर निकलने का रास्ता भी छोड़ दिया है। वे लोग लड़के को देखने कंखाली जा रहे हैं। मैंने ही जोर देकर जाने के लिए कहा है। जाकर खुद सब देख-सुन लें। रिश्ता तोड़ना हो तो वे ही तोड़ें। अगर नहीं तोड़ते हैं तो मैं जिम्मेदारी से मुक्त हो जाता हूं। वे नहीं जा रहे थे, मैंने ही जाने को लाचार किया है।"

लक्ष्मीरानी बोलीं, "तुम्हारे काम में क्या कभी कोई नुक्स रहता है? क्या मैं तुम्हें नहीं जानती हूं? तुम्हारे काम में कोई गलती नहीं निकाल सकता।"

"एक और झंझट है। पेशकार साहब ने आकर निमन्त्रण दिया है। उनके नाती का अन्नप्राशन है। यह लड़का बहुत मनौतियों के बाद हुआ है, बहुत लाड़ला है।"

अनिल मित्र बोले, "घर के लोग जायंगे। मैं नहीं जा सकूंगा, मजबूरी है।"

"क्यों?"

"इतवार को घर जा रहा हूं। मां की बीमारी बढ़ गई है। तबीयत ठीक नहीं है।"

बाद में जीवनमय ने कहा, "अगर आप जाते तो अच्छा होता, श्रीमान। वृद्ध भलेमानस निमन्त्रण देने खुद आये थे। जज साहब के खास आदमी हैं। ऐसे आदमियों को खुश रखने से बहुत से काम निकल जाते हैं।"

"एक अच्छा-सा उपहार भेज दूंगा, उसी से काम चल जायगा। मैं खुद जज साहब का निमंत्रण होने पर भी नहीं जाता। उन लोगों के साथ कैंग्वाली जाऊंगा।"

इसके बाद भी जीवनमय बोले, "उन्हें तो गुरुपद भी ले जा सकता है। रास्ते में कोई परेशानी नहीं है। यहां नाव पर चढ़ेंगे, घर के घाट पर जाकर उतरेंगे।"

"अगर ऐसा संभव होता, तो मैं क्यों जाता? गुरुपद जाए तो जा सकता है, मुझे तो जाना ही है।"

•

शनिवार की रात को खा-पीकर सब पानसी (छतरीदार नाव) पर सवार हुए। लड़की वालों की ओर से देवव्रत है और है गुरुपद, अगर उसे भी कुछ हद तक उस ओर का कहा जाय तो।

अनिल ने देवव्रत से पूछा, "तुम अकेले ही आये हो?"

देवव्रत ने कहा, "आप हुक्म दे आये हैं, तभी जा रहा हूं। मां ने कहा, 'जाओ, घूम आओ। नाव की यात्रा का अनुभव हो जायगा।' हम लोगों को हमेशा बंगाल से बाहर रहने की वजह से नाव की यात्रा का अवसर बहुत कम मिला है।"

मंदस्मित के साथ फिर बोला, "रांगाकाकी ने कहा, 'एक क्यों—तुम दोनों ही लड़की वालों की ओर से हो। तुम तो हो ही, हमारी ओर के अंदर में भी तो हैं एक और।' मेरी मां को आपने 'मां' कहा था न, इसीलिए।"

लेकिन भीतरी मामला कुछ और था। श्रीनाथ का जाना पहले ही तय था। देवव्रत की समझ ही कितनी है। वे अनुभवी हैं, दूरदर्शी हैं। गिरिबाला की इच्छा थी कि वे जरूर जायं। श्रीनाथ भी जाने को राजी थे। वे धोबी के यहां कपड़ों पर इस्तरी कराकर, नाई से बाल कटवाकर, जूतों पर पालिश करवाकर पूरी तैयारी कर चुके थे। पर रांगाकाकी ने बाधा खड़ी कर दी, "नहीं, तुम्हारी तबीअत अच्छी नहीं है, इसलिए दूसरे के घर जाना ठीक नहीं।"

जैसे श्रीनाथ एक अबोध शिशु हैं, अपनी सेहत की अच्छाई-बुराई नहीं समझते, समझाने के लिए रांगाकाकी की जरूरत पड़ती है।

रांगाकाकी ने कहा, "यात्रा की परेशानियों का सेहत पर बुरा असर पड़ेगा। इसके बाद वहां ठूसकर मेहमानी खायंगे। यह सब सहन नहीं हो पायेगा, दस्त होने लगेंगे, फिर मुझे हैरान होना पड़ेगा।"

गिरिबाला बोलीं, "ये बेकार की बातें हैं। देवरजी हमेशा सदर जाते हैं, जाकर वहां रहते हैं। कभी कुछ नहीं हुआ। असल बात यह है कि छोटी बहू जाने नहीं देना चाहती।"

वे मालती से कह रही थीं। मालती ने कहा, "तुम ठीक कह रही हो, मां। रांगाकाकी उन पर जरा भी भरोसा नहीं करतीं, कहीं कुछ गड़बड़ न कर दें। इस असली बात को छिपाकर तरह-तरह की मनगढ़न्त बातें कह रही हैं।"



भोर के समय नाव अनिल मित्र के घर के घाट पर कैखाली पहुंची। मित्रबाड़ी के अहाते की दीवार जेलखाने की तरह ऊंची थी, सदर दरवाजे पर लंबी-नुकीली कीलें जड़ी हुई थीं, दरवाजे के पल्लों पर मोटे-मोटे लोहे के कड़े थे। कड़ों के खटखटाते ही गुमाश्ता चूड़ामणि दास दरवाजा खोलकर व्यस्त भाव से बाहर आए।

छूटते ही अनिल मित्र ने सवाल किया, "सलिल आ गया ?"

चूड़ामणि ने सिर हिलाया, "जीहां। खुद ही जाकर लिवा लाया हूं।"

"भम्बल ?"

"वह भी आया है।"

अहाते के बाद ही आंगन है, गोबर-मिट्टी से साफ-सुथरे ढंग-से लिपा-पुता, इतना साफ कि अगर एक सुई भी गिर पड़े तो नजर आ जाय। दीवार के पास बखार थे, और एक ओर धान के कई पूले थे। आंगन के बीचोंबीच धान की मलाई के कुछ उपकरण थे। विशाल पक्की दीवार के भीतर किसी किसान के घर का-सा एक आंगन था।

अनिल मित्र ने देवव्रत को बताया, "अभी धान सब खेतों में ही है, तभी आंगन खाली है। हमलोग पहले पूरी तरह किसान ही तो थे। आंगन धान के पूलों से भर जाता था। तब उस ढेर को पार करके बरामदे तक

पहुंचना कठिन हो जाता था। बचपन में हम उन्हीं के बीच में खेला करते थे। नए कानून के अनुसार ज्यादा जमीन-जायदाद नहीं रखी जा सकती, तभी तो शहरी बाबू बनना पड़ रहा है।"

बरामदे में दरी पर सफेद चादर बिछी थी, गाव-तकिया था। शशिमुखी आकर खड़ी हो गईं। अनिल ने परिचय कराया, "मेरी मां हैं।" देवव्रत ने पैर छुए।

महिला सुशील हैं। फिर, एक प्राचीन और प्रतिष्ठित परिवार की गृहस्वामिनी हैं—उन्हें हजारों की भीड़ में से अलग पहचाना जा सकता है।

मुस्कराते हुए शशिमुखी बोलीं, "गुमाश्ताबाबू ने आकर कहा कि आज कुछ भले आदमी आ रहे हैं। मैंने सोचा कि न जाने कैसे-कैसे लोग आएंगे। तुम तो बेटा इतने छोटे हो—मेरे सलिल से भी छोटे हो। सलिल को भेज रही हूं, बातचीत करो। इसके बाद थोड़ा घूम-फिर कर देखभाल करना। दक्षिण की ओर पोखर के उस पार बड़ा रास्ता है, उत्तर की ओर भी रास्ता है। इन दोनों रास्तों के बीच बित्ते भर भी जमीन और किसी की नहीं है। सारी-की-सारी इनकी है।"

देवव्रत उत्तर में कुछ विनम्र वचन बोलने जा रहा था; पर कहता किससे? शशिमुखी विशाल-काय हैं, उस पर सुना है, उन्हें रक्त-चाप की शिकायत है। वे वहां से चिड़िया की तरह फुर्र से उड़कर चली गईं।

"आइए, छोटेबाबू!" कहकर मुकुन्द तटस्थ होकर खड़ा हो गया।

सलिल आ रहा था, सुन्दर, स्वस्थ। ऐसे भाई के लिए अगर अनिल मित्र कोई बेहद खूबसूरत लड़की ढूंढ रहे थे तो कुछ बेजा नहीं कर रहे थे। सलिल के पीछे-पीछे एक और व्यक्ति उसी की उम्र का आ रहा था, यही शायद नन्दन है।

देवव्रत का वदन देखकर मुकुन्द ने फुसफुसाकर कहा, "जो कुछ पूछना हो, पूछ लो। अभी यहां से सब हट गए हैं, जिससे खुलकर बातचीत कर सको।"

देवव्रत समझ नहीं पा रहा है कि क्या पूछे! सुना है, पहले लड़की को अपना नाम लिखने के लिए कहा जाता था, चलवा कर उसकी चाल

देखी जाती थी। अब कोई ऐसा करके देखे तो उसे आटे-दाल का भाव मालूम पड़ जायगा, उलटे लड़की ही कहेगी, "आप चलिये, मैं देखूंगी आपकी चाल।" लड़कियों का ही जब इस जमाने में यह हाल है, तब एक तगड़े-तन्दुरुस्त युवक से पूछताछ करते हुए डर लग ही सकता है। उधर गुरुपद लगातार कोंचे चला जा रहा है।

लाचार होकर देवव्रत ने धीमी आवाज में पूछा, "व्यापार करते हैं आप?"

सलिल ने केवल सिर हिलाया, पर पास बैठे भम्बल ने फौरन जवाब दिया, "जी हां।"

इसके बाद फिर चुप्पी। गुरुपद लगातार बदन दबाए जा रहा है, किन्तु देवव्रत कोई प्रतिक्रिया नहीं करता, सिर नीचा किये हुए है। तब शशिमुखी ने आकर उसे थोड़ा हल्का करने के लिए कहा, "भीतर चलकर अब थोड़ा नाश्ता कर लो, बेटा। बातचीत के लिए पूरा दिन बाकी है। जी भरकर, कर लेना।"

बाद में उसे अकेले पाकर गुरुपद ने बिगड़कर कहा, "जबान पर ताला पड़ गया था क्या, तभी एक से ज्यादा बात नहीं पूछ पाए? बाबू के दफ्तर में नौकरी करता हूं, मैं सवाल कैसे करता?"

"सलिल न अंधा है, न लंगड़ा है, न गूंगा है। विशाल मकान अपनी आंखों से देख रहा हूं। बड़े-बड़े बखार हैं, झील जैसा पोखरा है। बड़े भाई को जानता हूं, मां से भी परिचय हो गया। लड़का ज्यादा पढ़ा-लिखा नहीं है, यह इन्होंने पहले ही बता दिया था। व्यापार करता है, वह भी पूछकर पता लगा लिया। इसके बाद और पूछने को क्या रहता है, मेरी समझ में नहीं आता।"

कैखाली से देवव्रत सीधे अपने घर दसघरा जायगा, उसने अपने मन में यही तय किया था। यहां की खबर जानने को मां छटपटा रही होंगी। मां को जबतक यहां की खुशखबरी खुद नहीं सुना देगा, उसे भी चैन नहीं मिलेगा। यदि संभव होता तो पक्षी की तरह या वायुयान पर उड़कर तुरन्त मां के पास चला जाता। पर यह संभव नहीं, रेलगाड़ी में भी ढाई घंटे की देर है। इसलिए अनिल मित्र ने उसे नहीं छोड़ा। भोजन इत्यादि

के लिए जबरदस्ती उसे अपने सदर के डेरे पर ले आए।

अंदर जाकर अनिल मित्र बोले, "लड़की का भाई सब देख-सुनकर बेहद खुश होकर आया है।"

लक्ष्मीरानी ने अवज्ञापूर्वक कहा, "अपने सब कामों को छोड़कर तुम कैथाली तक दौड़े, तभी मैं जानती थी कि तुम नहीं हारोगे। मैंने सुना है कि मुकदमों में भी तुम नहीं हारते।"

"वाह, मैंने तो कुछ नहीं किया, खुद उसने देखा-सुना है, पूछताछ की है।"

लक्ष्मीरानी बोली, "तुमने तो सब पर मोहिनी-मंत्र डाल रखा था, इसके बाद वह और क्या देखता ! तुम साथ गये थे, तभी सही बात बताने वाला भी कोई पास नहीं फटक पाया। इतने दिन से तुम्हारी गिरस्ती में हूं, क्या मैं तुम्हें नहीं जानती?"

विजयी वीर की हंसी हंसते हुए अनिल मित्र बोले, "काम पक्का करके लौटा हूं, और घर में सब चुप ! यह क्या बात है ? खुशी के गीत गाओ।"

"मुझे नहीं आते।"

"तब शंख बजाओ, जैसे संध्या के समय गाल फुलाकर बजाती हो।"

"यह मुझसे नहीं होगा।"

कहकर लक्ष्मीरानी दनदनाती हुई भोजन का इन्तजाम करने रसोई-घर की ओर चली गयी।

६/

तारानाथ के न होने की वजह से देवव्रत को ज्यादा सतर्क होना पड़ गया है। पहले की तीन बहनों की शादी में जो-जो हुआ था, उससे किसी मायने में कम आडम्बर नहीं होने देना चाहता। सबसे छोटी बहन है, मां की बहुत लाड़ली है, पिताजी भी उसे बेहद प्यार करते थे। लोगों से यह नहीं सुनना चाहता कि देवू ने किसी तरह बहन के हाथ पीले करके अपना कर्तव्य निभाया है। इससे खुद मंदिरा को भी दुःख होगा।

हुआ उलटा। मंदा ने ही आकर उस पर हमला बोल दिया, "पिताजी मालबाबू थे। उनकी ऊपरी आमदनी थी। सब जानते थे। नौकरी में घुसते ही तूने तो पिताजी को भी मात दे दिया!"

देवव्रत बोला, "कैसे?"

"राजसूय यज्ञ जैसा आयोजन तो कर डाला है। तेरी तनख़्वाह कितनी है, वह तो पता ही है, ऊपरी आमदनी न होने पर इतना रुपया तू कहां से पा रहा है? सब सरकारी सीमेन्ट की चोर-बाज़ारी करके गारे की चिनाई करवा रहा है क्या?"

"अनिलबाबू की दया से नकद और गहना कुछ नहीं देना पड़ा। मैंने केवल वरसज्जा का कुछ सामान और कुछ साड़ियां ही खरीदी हैं। इन्हें देखकर ही तेरी आंखें दर्द कर रही हैं!"

फिर मंदिरा को धमकाने लगा, "तू बड़ी बेहया हो गई है। तेरी शादी होने वाली है, तुझे घर के कोने में चुपचाप छिपकर बैठे रहना चाहिए। यह तो करती नहीं, नायब-गुमाश्ता की तरह हिसाब लगाने बैठ गई है।"

•

देवू बहनों को लाने स्वयं चला गया। मंजरी फौरन तैयार हो गई। उसने कहा, "तू क्यों चला आया लिवाने? ब्याह की तारीख लिखकर चिट्ठी भेज देता, मैं चली आती। मंदा की शादी में मैं न जाऊं, यह कैसे हो सकता था।"

थोड़ा रुककर फिर बोली, "तबीयत तो कर रही है कि अभी तेरे साथ ही निकल पड़ूं। लेकिन यह हो नहीं सकेगा। उन्हें भी तो साथ ले जाऊंगी, यहां छोड़कर नहीं जा सकती। फिर इतने पहले कैसे चली जाऊं?"

उसका पति अलकेश पलंग पर पैर लटकाए बैठा, भाई-बहन की बातों पर चुपचाप हंसता जा रहा था। उसे यकायक देखकर कोई नहीं कह सकता कि इसका दिमाग खराब है, यदा-कदा मारपीट पर उतारू हो उठता है।

मंजरी कह रही थी, "सास-ससुर, जेठ-जिठानी सब हैं। इन्हें इतना बड़ा उन्होंने ही किया है। तो भी वे आज इन्हें नहीं समझ पाते, मुझे भी इनको किसीके पास छोड़कर चैन नहीं मिलता। तू सास-ससुर को कहकर चला जा। शादी के दो दिन पहले मैं शाम की गाड़ी से पहुंचूंगी। इन्हें भी ले जाऊंगी। स्टेशन पर बैलगाड़ी भेज देना, बस। चिन्ता की कोई बात नहीं, जरूर आऊंगी, बिलकुल पक्की बात है। हम दोनों पहुंचेंगे।"

देवव्रत स्तंभित-सा होकर मंजरी की बात सुन रहा था। बोला, "तेरी और अलकेश की रजिस्ट्रीशुदा शादी पर लोग उस समय क्या कहते थे, याद है?"

मंजरी मुस्कराने लगी, बोली कुछ नहीं।

देवव्रत ने कहा, "कहते थे कि रजिस्ट्री से आई बीवी घर-गिरस्ती के योग्य नहीं होती, न ऐसी शादी ही टिकाऊ होती है। तू भी जल्दी ही कोई बहाना ढूंढ़कर तलाक ले लेगी।"

मंजरी ने कौतुकपूर्ण स्वर में कहा, "मुझे आज तलाक के लिए बहाना नहीं ढूंढ़ना पड़ेगा। मेरी शादी चाहे रजिस्ट्री की हो या सात-फेरे की, मैं अगर तलाक लेना चाहूं तो फौरन मिल जायगा। लेकिन यह जो..."

पागल अलकेश की ओर देखकर उसका कण्ठस्वर अनिर्वचनीय माधुर्य से पूरित हो गया।

"यह जो भले आदमी की तरह पलंग पर बैठे पैर झुला रहे हैं, बस शैतान हैं यह! विवाह के बाद सिर्फ तीन ही साल ठीक-ठाक रहे। इतने ही समय में मुझे तबाह कर दिया है। मेरे हाथ-पैरों को फौलाद की बेड़ियों से जकड़ दिया है। इन्हें तोड़कर इस जनम में तो बाहर नहीं निकल

पाऊंगी।"

●

माधवी के मकान में जाकर देवव्रत ने कहा, "मंदिरा की शादी है। चलो, मंझली दीदी। कितनी दिक्कत में है मंजरी दीदी, पागल को घर पर छोड़ नहीं सकती, साथ लेकर आ रही है। आखिरी कारज है। जल्दी हो तो शादी के वाद ही चली आना।"

माधवी ने राजी होकर कहा, "आऊंगी।"

कुछ क्षण वाद फिर हंसकर वोली, "अकेली नहीं आऊंगी, भानु को साथ लेकर आऊंगी। क्यों, राजी है?"

हिचकते हुए देवव्रत ने कहा, "इससे क्या फायदा होगा?"

"भानु को मुझसे जोड़कर तुमलोग मुझे वदनाम करते हो, शादी के मौके पर दोनों एक साथ जाकर दिखला देंगे कि हम किसीकी परवा नहीं करते हैं।"

तभी दरवाजे के वाहर एक काली स्वस्थ युवती दिखलाई पड़ी। माधवी ने पुकारा, "यशोदा, मेरा भाई है। वहन की शादी में आने का वुलावा देने आया है।"

देवव्रत को प्रणाम करके यशोदा क्षण भर में वाहर चली गई।

माधवी वोली, "वही शरणार्थी लड़की है।"

देवव्रत को अचंभे में आता देखकर माधवी ने मुस्कराकर कहा, "वही जो मेरी सौत है। वेचारी वेसहारा दर-दर मारी-मारी फिर रही थी, यह सुनकर भानु को कहकर वुलवा लिया है। वच्चा भी साथ है। तेरे मंझले जीजाजी के जेलखाने से निकलने पर कहूंगी, 'शादी करो'।"

यशोदा जलपान ले आई। माधवी ने स्नेहसिक्त स्वर में कहा, "कुछ कहना नहीं पड़ता। वड़ी लक्ष्मी लड़की है।"

देवव्रत खाकर उठ खड़ा हुआ। माधवी ने कहा, "क्यों रे, वोला नहीं कुछ। खैर, हम लोग आयंगे—मैं, खोका (वबुआ) और भानु।"

देवव्रत सड़क पर चला आया। पीछे से माधवी की खिलखिलाहट की आवाज आई।

●

डाकिया आया। तीन मनीऑर्डर और कुछ चिट्ठियां थीं। गिरिबाला लड्डुओं के लिए चावल धो रही थीं और धो-धोकर सुखाने के लिए खजूर की चटाई पर फैला रही थी। मंदा को पुकारा, "भीतर क्या कर रही है? दस्तखत करके मनीऑर्डर ले ले। ये बचारा खड़े रहेंगे?"

इस समय तो उनका हाथ खाली नहीं था, लेकिन जब उन्हें कोई काम नहीं रहता है, लेटी या बैठी रहती हैं, तब भी दस्तखत करने की जरूरत पड़ने पर लड़की को ही बुलाती हैं। मां के बदले मंदा को दस्तखत करने पड़ते हैं, उन्हें चिट्ठियां पढ़कर सुनानी पड़ती हैं।

गिरिबाला कह रही थी, "वे लोग नहीं आयेंगे, इसीलिए रुपये भेज रहे हैं। चिट्ठियों में भी तरह-तरह की टाल-मटोल की बातें लिख रहे हैं। रिश्तेदारी में आने-जाने का रिवाज खत्म हो रहा है। लोग अब किसी तरह के झमेले में नहीं पड़ना चाहते।"

एक चिट्ठी हाथ में लेकर मंदा ने, "भैया-भैया" की रट लगा दी, "जल्दी आओ भैया, देखो, तुम्हारी नौकरी की चिट्ठी आई है।"

देवव्रत दौड़ा आया।

मंदा ने कहा, "सरकारी लिफाफा है—'एस०पी० लिवम, सुन्दरनगर' छपा है। जो शिमला में साक्षात्कार हुआ था, उसी का नतीजा इतने दिन बाद आया है, ऐसा मालूम हो रहा है।"

देवव्रत ने लिफाफा ले लिया और बिना फाड़े खोलने की कोशिश करने लगा। बाकी चिट्ठियों में गिरिबाला ने जो कहा था, बिलकुल वही लिखा था, नहीं आ सकेंगे, यह हुआ है, वह हुआ है, शुभ कार्य के निर्विघ्न सम्पन्न होने की आशा व्यक्त की गई है। इनमें एक पोस्टकार्ड भी था। आश्चर्य की बात है कि लेखक ने अपना नाम नहीं दिया था। उसे पढ़कर मंदा का चेहरा कागज की तरह सफेद पड़ गया।

उधर देवू कूद-कूदकर और चीख-चिल्लाकर एक अलग ही दृश्य उपस्थित कर रहा था, "देखो मां, सुन्दरनगर वाला काम मुझे मिल गया। मेरी नौकरी और मंदा की शादी साथ-साथ हो रही है। हमारे पुराने प्रिंसीपल चुनाव समिति के विशेषज्ञ होकर गए थे। लगता है —

कार्य उन्हीं के कारण संभव हुआ है।"

उस समय मंदिरा वहां नहीं थी। पोस्टकार्ड को मुट्ठी में गोला बनाकर झट से कमरे के अन्दर घुस गई थी। उसने फिर एक बार अच्छी तरह से उसे पढ़ा। पोस्टकार्ड लिखने वाले का उद्देश्य यह था कि उसमें लिखी हुई बातें फौरन सब लोग जान जायं। लेकिन यह उद्देश्य पूरा नहीं हो सका। संयोग से वह कार्ड मंदा के हाथ ही पड़ गया। सचमुच ईश्वर दयामय हैं, नहीं तो अगर चिट्ठी में लिखी हुई बातों का मां को पता चल जाता तो वे जहां बैठी चावल धो रही हैं, वहीं बेहोश होकर लुढ़क जातीं।

मंदा तख्त पर बैठी पढ़ रही थी। चिट्ठी को तकिये के नीचे रखकर वह औंधे मुंह बिस्तर पर पड़ गई। अंधेरा हो गया था, अभी कमरे में दीपक नहीं जलाया गया था। मंदिरा यकायक सिर पर मां के हाथ का स्पर्श पाकर चौंक पड़ी। उसे देखना नहीं पड़ता, स्पर्श से ही वह समझ जाती है। चावल धोने का काम समाप्त होने पर शायद मां को शंका हुई थी, अभी तो यहां थी। अकस्मात कमरे में क्यों घुस गई? चुपचाप आकर गिरिबाला मंदा के पास बैठ गईं। मंदा सुबक-सुबककर रो रही थी। गिरिबाला से यह सहन नहीं हो पाया। ओह, आंखों से आंसुओं की झड़ी लगी हुई थी। तकिया भीग गया था। जोर लगाकर उल्टा किया। कौन कहेगा कि यह लड़की बाईसवें में पड़ी है। बाईस नहीं, बारह या उससे भी कम की मालूम पड़ रही है। अपने आंचल से आंखें पोंछकर उसके दोनों गालों को गिरिबाला ने चूमा, "क्या बात है, बेटी? अरे, हमेशा क्या तू अपनी मां का आंचल पकड़े ही रहेगी? बड़ी नहीं होगी, अपनी गिरस्ती नहीं संभालेगी?"

खैर, रोने का कारण नहीं बताना पड़ा। उसके लिए झट से झूठी बात गढ़ना भी मुश्किल होता, जल्दी में न जाने क्या-का-क्या कह बैठती! खुद ही मां ने उसके रोने की वजह का अनुमान लगा लिया है, मां को छोड़कर चले जाना पड़ेगा, बेटी को यही दुःख है। यह बात गलत भी नहीं है, इसीका दुःख बेटी को भी है, मां को भी। लेकिन इस बार भी उसकी शादी न होना मां के लिए और अधिक कष्टकारक होगा। देवू के लिए भी। मंदा उसके पैर की बेड़ी बनी हुई है। देवू जैसे लायक नवयुवक को गांव

में रहकर बहन की शादी की तदबीर करते, एक टटपूंजिये ठेकेदार की गुलामी करके दिन गुजारने पड़ रहे हैं। मतलुज-व्यास लिंक जैसी परियोजना में अब उसे डिजायन इंजीनियर की जगह मिल गई है, ऐन इसी मौके पर यकायक निशाना साधकर बम का गोला किसने मार दिया? मंदा सोच रही है, मां, तुम कल्पना भी नहीं कर सकती कि डाकिये की दी हुई चिट्ठियों में स्वजनों की मंगलकामनाओं और भैया की नौकरी की खबर के साथ ही यह खतरनाक चीज भी है। वह जिस तकिये पर मुंह दबाए रो रही थी, उसी के नीचे सावधानी से उसने उस चिट्ठी को छिपा दिया है।

अच्छी तरह से बैठकर मां ने बेटी को अपनी गोद में लिटा लिया। मंदा का मुंह गिरिबाला की छाती में छिपा था, सिर बाहर था। रोना बंद हो गया था, वह चुपचाप पड़ी हुई थी।

अभी शादी की भीड़ नहीं जमी थी। सिर्फ पड़ोस के घरों से कुछ लोग आ-जा रहे थे, रिश्तेदारों में भी कुछ ही आए थे। मंजरी-अलकेश कल आयेंगे। वद दरवाजे ठेलकर मालती अंदर आई; "अरे, यहां हो तुम? तिल कहां रखे हैं। लड्डू बनाने का सब सामान एक जगह सहेजकर रख दूं, नहीं तो लड्डू बनाने वालियों के आ जाने पर दिक्कत होगी।"

गिरिबाला तिल देने चली गईं। इस बीच मंदिरा उठकर रसोईघर में चली गई और दरांती लेकर तरकारी काटने लगी। गिरिबाला लौटकर चिल्लाने लगी, *"यह सब करने को तुझे किसने कहा है? उंगली-वुंगली कट जायगी। उठ, जल्दी।"*

मंदा खच्-खच् तेजी से थोड़ (केले के पेड़ का कोमल अंग) को काटती रही। फिर शांत भाव से बोली, "उंगली ही तो कटेगी, कटकर दो टुकड़े भी हो जाए तो क्या!"

"खून जो निकलेगा। शुभ कारज में खून-खराबी नहीं होनी चाहिए।"

"अगर हो जाय तो क्या होगा, मां? काम बिगड़ जायगा?"

लाडभरी आवाज में मंदा ने फिर कहा "मैं अगर चाहूं तो अभी सब उलट-पुलट कर सकती हूं। अगर चाहो तो कहो, इसी क्षण कर दूं।"

"चुप, चुप! बहुत बढ़-बढ़कर रही है। खबरदार, भूलकर भी जबान

पर फिर ऐसी वात न लाना।"

नाराज होकर गिरिवाला वेटी के सामने से हट गयीं।

●

मंजरी-अलकेश को लेकर वैलगाड़ी से आंगन में आ पहुंची। श्रीनाथ भी उसी समय वहां आ पहुंचे। वोले, "अरे, यहां नहीं। यहां जगह कहां है? अपना सामान यहां न उतार। चल, मेरे यहां।"

मंजरी पहले ही उतर पड़ी थी। श्री नाथ उसी से कह रहे थे, "वेटी, जितने दिन है, मेरे ही यहां रहना। एक ही तो घर है। वस, इधर और उधर के आंगनों का ही तो फर्क है।"

मंदा वोली, "तुम्हारे यहां भी तो ज्यादा कमरे नहीं हैं, काका।"

"इनके लिए पूरव वाला कमरा खाली कर दिया है।"

विस्मित होकर मंदा ने कहा, "रांगाकाकी कहां चली गई?"

श्रीनाथ अवतक किसी तरह प्रसन्न ही वने थे, अव गुस्सा होकर वोले, "कौन, जाने कहां है! अपनी रांगा काको से जाकर पूछ। अभी मैंने सुना कि विजय भवसिन्धु के घर सोयेगा। सव वातों के लिए मुझीको तेवर देखने पड़ते हैं। काम-काज की भीड़ में जगह की कमी भी जैसे मेरा ही कसूर है।"

गिरिवाला के कमरे में रांगाकाकी थीं, पति की सब वातें सुन रही थीं। वोलीं, "सुन लो, दीदी। ओफ, कैसे आदमी हैं! सुवह से मेरे पीछे पड़े हैं। विजय शादी के वाद कई दिन किसी दूसरी जगह रहेगा, वहू हमारे ही यहां रहेगी, यह इन्हीं की व्यवस्था है। लेकिन अव सब मुझपर लादे दे रहे हैं। अलक-मंजी को साथ लेकर अभी जा रही हूं, नहीं तो मेरी मुसीवत हो जायगी।"

गिरिवाला वोलीं, "पर इंतजाम ठीक नहीं हुआ है। अकेली वहू होती तो कोई वात नहीं होती, तीन छोटे-छोटे वच्चे भी तो साथ में हैं।"

रांगा काकी ने थोड़ा उत्तेजित होकर कहा, "दो दिन के लिए आकर दामाद तकलीफ पाये और लड़के-वहू मौज करें, यह कहीं हो सकता है दीदी! इसे वे कभी गवारा नहीं करेंगे। समझा सको तो जाकर समझाओ उन्हें।"

मालती ने कहा, "बचपन से ही बेहद हसमुख है मजी। हंसने-बोलने के आगे कुछ नही भाता उसे। पर विधाता ने सब उलट दिया। रांगा काकी, उन लोगों के लिए तुम्हारा कमरा बहुत उपयुक्त रहेगा। पागल दामाद एकान्त मे ठीक रह पायगा, नही तो ब्याह-शादी के हल्ले-गुल्ले मे न जाने क्या हो जाय, कोई नहीं कह सकता।"

सब 'धन्य-धन्य' करने लगे। गृहणियो ने गिरिबाला से मंजरी की प्रशंसा के पुल बांध दिये, "तुमने बड़ी उत्तम संतान को कोख में धारण किया था। तुम्हारी बेटी आजकल की गैर जिम्मेदार छोकरियों की तरह नही है। पुराने जमाने की सती-सावित्री जैसी है। अपने पागल पति की सेवा-जतन मे खुद ही पूरी तरह पागल बन गई है।"

•

शादी के एक दिन पहले की बात है। हल्दी चढ़ गई है। मदिरा के लिए पास-पड़ोस के घरो से निमंत्रणों का ताता लगा हुआ है। वह पड़ोस के एक घर से दोपहर के बाद भोजन करके लौटी। मंजरी के कमरे मे घुसकर हैरत मे आ गई, "आख के ऊपर क्या हो गया, दीदी?"

"गेंदे के पत्तों का लेप लगाया है।"

"यह तो देख रही हूं। लेकिन क्या हुआ था?"

"यह तेरे जीजाजी की मुहब्बत का नमूना है। रांगा काकी से कहा है कि चौखट से टकरा गई थी।"

अलकेश लेटा था, तड़ाक से उठकर बैठ गया। बोला, "पान का डिब्बा फेंककर मारा है मैंने।"

सीधी आवाज मे मदिरा ने कहा, "बड़ी बहादुरी की है! क्यों मारा इस तरह? थोड़ा नीचा लगने पर आख ही फूट जाती।"

"फूटी क्यों नहीं? तब यार जुटाकर ठट्ठेबाजी बद हो जाती।"

कुछ और अशालीन ग्राम्य विशेषणो का प्रयोग करके अलकेश गरजने लगा। मंजरी दांत निपोरकर हसने लगी, जैसे उसकी स्तुति हो रही हो। बोली, "वही ठीक होगा। मुझे अधा ही बना देना। फिर जिन्दगी-भर हाथ पकड़े घूमते फिरना। उठ क्यों पड़े, सो जाओ।"

मंजरी ने उसे पकड़कर फिर सुला दिया। बदन और सिर पर हाथ

फेरने लगी, पंखा झलने लगी। लोरी गाने जैसी धीमी आवाज में बोली, "सो जाओ, सो जाओ।"

धीरे-धीरे अलकेश ने आंखें मूंद लीं।

अब मंजरी ने छोटी बहन की ओर अच्छी तरह देखा। बोली, "कुनैन खाने-जैसा मुंह क्यों बना रक्खा है, री? यह संदेह ही उसके रोग का सबसे बड़ा लक्षण है। बहुत प्यार करता है, तभी बिना किसी अपवाद के मुझे पाना चाहता है। डिब्बा फेंककर मारना भी इसी प्यार की निशानी है।"

मंदा ने कहा, "प्यार की यह पक्की निशानी माथे पर हमेशा रहेगी।"

"केवल माथे पर ही नहीं···क्यों देखेगी! ले···"

मजरी ने कपड़ा हटाकर दिखाया, छाती और पीठ में चार-पांच जगहों पर नीले-काले दाग पड़े हुए थे। मुस्कराकर बोली, "पूरे बदन पर प्यार की सीलें लगी हैं।"

सिहर कर मंदा ने कहा, "जल्लाद कहीं का!"

"अरे, ऐसी बात न कह, वह अब होश में थोड़े ही हैं। जब ठीक थे, तब इन्होंने तीन साल के उस समय में मुझे अपने प्यार से सराबोर कर दिया था। मेरा वह समय जब भी लौटेगा, तो उसके साथ ही वह प्यार भी लौट आयगा। अपने बदन के इन दागों को दिखाकर तब मैं हंसूंगी और वह रोवेंगे।"

कहते-कहते मंजरी का कंठस्वर बदल गया। लगा कि जैसे किसी सपने के देश में पहुंच गई हो और वहीं से बोल रही हो। उसने कहा, "सिर्फ तीन साल का यह छोटा-सा समय मिला था मुझे। इसी बीच उनसे मुझे अमृत मिल गया है, मैं नहीं मरूंगी। मेरा वह दिन जरूर वापस आयेगा, उसी की उम्मीद में हूं। वापस लाकर ही छोड़ूंगी, हार नहीं मानूंगी।"

मंदिरा अवाक् होकर सुन रही थी। यकायक मंजरी के पैरों पर गिर पड़ी।

"यह क्या, रे!" कहकर मंजरी ने पैर हटा लिये। बोली, "क्या बात है? यकायक भक्ति से इतनी गद्‌गद् होकर तू पैर क्यों छू रही है?"

मंदिरा ने कहा, "जिस विधाता ने तेरे मन में इतना बल दिया है,

मेरे लिए भी उनसे थोड़ी प्रार्थना करना, दीदी।"

मंजरी को उसकी आवाज बड़ी अजीब-सी लगी। एक दिन बाद उसकी शादी है। शादी भी एक ऐसे लड़के के साथ हो रही है, जिससे गांव भर के लोग ऊपर से तो खुशी दिखा रहे हैं, पर भीतर-ही-भीतर जले-भुने जा रहे हैं। ऐसी हालत में लड़की के चेहरे पर खुशी की चमक होनी चाहिए लेकिन यहां उस पर एक विपण्ण छाया नजर आ रही है।

मंदिरा उद्विग्न होकर बोली, "क्या हुआ है, री?"

दोनों हाथों से बहन के चेहरे को ऊपर उठाते ही आंसू की कुछ बूंदें धरती पर ढुलक पड़ीं।

"खुशी के दिन तेरी आंखों में यह आंसू क्यों?"

जल्दी से आंखें पोंछकर गलज्ज हंसी के साथ मदा बोली, "धत्तेरे की! न जाने कैसे आ गया आंखों में पानी! आंख में कोई तिनका-विनका पड़ गया होगा।"

मंजरी ने कहा, "तेरा जवाब एकदम उपन्यास की नायिका जैसा है। क्या हुआ है, बता मुझे। बिना सुने नहीं छोड़ूंगी।"

मंदिरा ने कुछ क्षण सोचा, फिर सिर हिलाकर दृढ़ स्वर में बोली, "हां बताऊंगी। तू नहीं जानती, दीदी कि तू मेरे लिये कितनी बड़ी मिसाल है। मैं तुझे देख-देखकर हैरान हो रही हूं। अगर तुझे नहीं बताऊंगी तो और किसे बताऊंगी।"

उठकर दरवाजा बंद कर आई। कांपती हुई आवाज में बोली, "छाती पर पत्थर जैसा बोझ लदा है। किसीको बता नहीं पा रही हूं, मेरा दम-लिए दम घुट-सा रहा है।"

कहते-कहते ब्लाउज के भीतर से चिट्ठी निकालकर मंजरी के हाथ में थमा दी। चिट्ठी पांच-सात लाइन से अधिक की नहीं थी, पर थी वज्र जैसी।

"सुना है लड़की देखने में सुन्दर है। जब डाक्टर-वैद्य रोग के इलाज में हार जाते हैं तो लोग दैव की शरण लेते हैं। झाड़-फूंक करवाते हैं, कवच-आशीष धारण कराते हैं। यह शादी आपकी लड़की को तावीज की तरह इस्तेमाल करने के लिए हो रही है। अपने बुद्धू लड़के को थोड़ा

तरह पता लगाने के लिए कहिये। लड़का शराबी है, लंपट है। सिराज-काटी बाजार की वेश्या (नाचनेवाली) से उसका प्रेम है। सब जानते हैं..."

वज्राहत-सी होकर मंजरी बहन की ओर कुछ क्षण तक देखती रही। फिर बोली, "चिट्ठी म कें नाम लिखी गई है।"

"बड़े-बड़े हरफों में लिखी गई है, जिससे केवल अक्षर-ज्ञान वाले व्यक्ति भी इसे पढ़कर आसानी से समझ सकें। लेकिन मैंने भी हाथ का ऐसा खेल दिखाया, दीदी, कि पेशेवर जादूगर भी हार मान जायं। मां को इसका कुछ भी पता नहीं है।"

मंदा अपनी बहादुरी के गौरव से हंस पड़ी। मंजरी ने धमकाकर कहा, "हंस रही है ! पागल हो गई है क्या ?"

मंदा ने कहा, "मां घर-वर की बात सबको कहते-कहते विह्वल हुई जा रही हैं। यह चिट्ठी अगर उनके हाथ लगती तो फौरन सम्बन्ध तोड़ देतीं और इतना बड़ा धक्का खुद सहन भी न कर पातीं। इस चिट्ठी को छिपा करके मैंने मातृवध को रोका है।"

मंजरी ने कहा, "और बदले में आत्म-वध चुन लिया।"

उदासीन भाव से मंदा बोली, "क्या लिया और क्या नहीं लिया, नहीं जानती। पर अब रात बीतने पर शादी जरूर हो जायगी। अबतक तीन बार सम्बन्ध टूट चुका है, इस चौथी बार भी अगर टूट जाता तो फिर इस जिन्दगी में कभी शादी नहीं होती। लड़की का जन्म लेकर शादी न होना लज्जा की बात है।"

मंजरी ने नाराज होकर कहा, "तूने पुराने जमाने की लड़कियों को भी मात कर दिया। तभी बूढ़ी दादियों के जमाने की बात कर रही है।"

"हम लड़कियां वैसी ही हैं, दीदी। तब और अब में कोई फर्क नहीं है।"

मंदा मुस्कराते हुए कहने लगी, "एम० ए० पास इला सरकार को नहीं भूली है न ? बाप दो लाख नकद और शहर में एक बड़ा मकान छोड़ गये थे। जवानी में देखने में भी वह बुरी नहीं थी। उसका दिमाग आसमान पर पहुंच गया था। विवाह के जितने सम्बन्ध आते थे, कोई-न-कोई नुक्स

निकालकर सबको नकार देती थी—कोई ठिगना है, कम है, किसी का रंग मैला है, कोई चुस्त नहीं है, आदि-आदि। अब उस इला सरकार की अजीब हालत हो गई है। सजने-धजने पर बेहद भद्दी लगती है। अब उसे कोई नहीं पूछता। फिर भी रंग-बिरंगी पोशाक में सजकर वर फांसने की कोशिश में लगी है। पीठ-पीछे लोग उसे 'आदमखोर बाघिन' कहते हैं। मैंने अपने कानों से सुना है।"

मंजरी ने डाटकर कहा, "इस तरह न कह, नहीं तो मुझसे मार खायगी।"

"मेरे भाग में यही बदा है। तू नहीं मारेगी तो कोई दूसरा मारेगा, गुमनाम चिट्ठी इसका सबूत है। तू घबड़ा क्यों रही है, दीदी? पहले जमाने में तो ऐसा अक्सर होता था। कुलीन घर के लड़के को कम-से-कम दो शादियां तो करनी ही पड़ती थीं। इसे भी वैसा ही मान लिया जा सकता है।"

मंजरी के चेहरे की ओर देखकर अपने स्वर को परिवर्तित करके फिर बोली, "यह भी हो सकता है कि चिट्ठी की बातें सच न हों, मनगढ़न्त हों। ग्रामीण समाज में झूठी बातों का प्रचार करके विवाह-सम्बन्ध में अड़चन पैदा करना मामूली बात है। मेरे सम्बन्ध में तो यह कई बार हो चुका है। पहले गुमनाम चिट्ठियां वर के घर जाती थीं कि कन्या की एक बहन झगड़ालू है, एक बदचलन है आदि। अब ढंग बदलकर लड़की के घर चिट्ठी भेजी गई है।"

इतनी आसानी से मंजरी भुलावे में आने वाली नहीं है। बोली, "चिट्ठी एकांत में देवू को तो दिखा सकती थी। वह पता लगाकर जो करना चाहिए था, करता। इस जमाने की लड़की होकर तू पुराने जमाने की तरह अपने भविष्य को मानकर चुपचाप बैठी रहेगी?"

"इस जमाने की हूं, तभी जल्दी नहीं है। कहा खत्म नहीं हुआ जा रहा है। शादी के बाद अच्छी तरह और शान्ति से सारी बातों का पता लगाया जा सकता है। उस जमाने में सात फेरे पड़ जाने पर सात हजार सात सौ सततर उलटे फेरे लगाने पर भी विवाह-बंधन नहीं खुलता था। तभी विवाह-सम्बन्ध तय होने से पहले ही सब बातें अच्छी तरह देख ली

जाती थीं, क्योंकि बाद में नुक्स निकलने पर उसे दूर करने का कोई रास्ता नहीं रहता था।"

कहकर मंदा खिलखिलाकर हंस पड़ी। फिर बोली, " 'प्रजापतये नमः' कहकर कल फांसी की रस्सी से पहले बंध तो जाऊं। अपील का रास्ता तो खुला ही हुआ है। खुशियां मना दीदी, मुंह न फुला। अगर मान भी लिया जाय कि चिट्ठी में जो कुछ लिखा है, वह सही है, इससे क्या वह आदमी सड़ गया बिलकुल? उस समय के समाज में इन सब बातों पर गौर किया जाता था, अब हमलोग इन बातों की थोड़े ही परवा करती हैं।"

कैथाली के मिश्र प्रतिष्ठित और सम्पन्न गृहस्थ हैं। इस परिवार के
रसे रोबदाब के साथ जिन्दगी बसर कर गये। पढ़ाई-लिखाई की बात
न्होंने नहीं सोची। जब नौकरी ही नहीं करनी है तब कोई बेकार की
हमत किसलिए उठायें? जायदाद की देखभाल करने लायक मामूली
ढ़ना काफी है।

ऐसे मिश्र वंश में अनिल एक अपवाद है। वे पढ़ने ही चले गये। मांगा-
रक विषय में प्रवीण पिता की अकाल मृत्यु हो गयी। पट्टीदारों ने मुकदमे
दायर करके परेशान करना शुरू कर दिया। शशिमुखी सिर पीटने लगीं,
पढ़ने चले जाने की बेवकूफी छोड़कर अब घर बैठ आकर, अपना जो कुछ
चा-खुचा है, उसे समझ-बूझ लें।" अनिल ने उनकी बात को अनसुनी कर
दिया, अपनी पढ़ाई जारी रखी। उन्होंने अच्छा ही किया। नये कानून के
नुसार जमींदारी-इलाकेदारी चली गई, जायदाद पर जीने वालों के दिन
त्म हो गये। कानून को अंगूठा दिखाकर पिता अपने नाम और बेनाम
र कुछ बगिया बागान की जमीन जरूर छोड़ गये हैं, फिर भी बाहरी आय
रहने पर पुरखों की इज्जत बनाये रखनी संभव नहीं था।

छोटे भाई सलिल ने वंश की परम्परा को कायम रखा। स्थानीय स्कूल
थोड़ा-सा पढ़कर वह मुनशाय कैथाली नाट्य समिति की उन्नति में लग
या। लेकिन अनिल ने अड़ंगा लगाया कि भाई को भी आदमी बनना
होगा। विद्यार्जन की कोई नियत आयु नहीं होती, शहर के डेरे में उनकी
आँखों के सामने रहकर पढ़ाई करेगा। जैसे-तैसे अगर मैट्रिक हो जाता है
तो उसे मुख्तार बनाकर बैठा देंगे। एक ही मकान में रहकर दोनों भाई
वकालत करेंगे। ज्यादा पैसा खर्च करने वाले के लिए अनिल मिश्र वका-
लत करेंगे। कम पैसे वाले के लिए छोटा भाई रहेगा मुख्तार।

शहर से आकर सलिल को हाई स्कूल में भर्ती करा

कैखाली नाट्य समिति के गर्दिश के दिन आ गये। सिराजकाटीगंज में मित्र परिवार की कचहरी है, चूड़ामणिदास गुमाश्ता हैं। गुमाश्ताबाबू का लड़का भंवल गंज के स्कूल में पढ़ता है। स्कूल में भंवल को निःशुल्कता की सुविधा मिल गई है, शुल्क-उल्क कुछ भी नहीं देना पड़ता। यहां की सबसे बड़ी दिक्कत यह है कि मास्टर स्कूल में टिकते नहीं। किसी तरह भुलावा देकर स्कूल वाले उन्हें ले तो आते हैं लेकिन कुछ ही दिनों में वे नये मास्टर समझ जाते हैं कि उनकी नौकरी तो जरूर पक्की है, मगर तनख्वाह मिलेगी कि नहीं, इसका कोई ठिकाना नहीं। फिर मौका मिलते ही स्कूल वालों की नजर बचाकर गंज से जाने वाली नाव पर सवार हो जाते हैं।

सिराजकाटीगंज की कचहरी में जाकर एक दिन अनिल मित्र ने चूड़ामणिदास से कहा, "भंवल को भी शहर में पढ़ने दीजिये न। वहां मेरे घर रहेगा, सलिल और वह एक साथ स्कूल जायंगे। आप जैसे बड़ों के आशीर्वाद से मेरी वकालत अच्छी चल रही है। सलिल बहुत अकेला पड़ गया है, दोनों का साथ हो जाने पर अच्छा रहेगा।"

उम्र के हिसाब से सलिल का दर्जा नीचा है। इसके बाद अगर अनुत्तीर्ण हो गया तो जिन्दगी बर्बाद हो जायगी। इसलिए सोच-विचारकर दक्ष अध्यापक गंगाधर भट्टाचार्य को सलिल का गृह-शिक्षक नियुक्त किया गया। भट्टाचार्य महाशय बहुत अच्छा पढ़ाते हैं, फिर भक्त जीव हैं। गले में तुलसी की माला है, सिर पर चोटी है, नंगे बदन पर चादर डालकर स्कूल जाते हैं, बालों से भरी छाती और वर्तुलाकार उदर पर सफेद जनेऊ का मोटा गुच्छा पड़ा रहता है।

•

एक ताल के किनारे होकर जाने का रास्ता है। उलटी तरफ इकमंजिले पक्के मकान हैं, टिन और फूस के छप्पर वाले घर हैं। सुबह-शाम स्कूल जाने-आने के वक्त अक्सर दिखलाई पड़ता है कि ताल के घाट पर स्त्रियां बरतन मल रही हैं, कपड़े धो रही हैं, खुले में नहा रही हैं। हर तरह का काम करती रहती हैं। घर के सामने बैठकर मूड़ी (लाई) खाती हैं, बीड़ी पीती हैं, दो-तीन गुड़-गुड़ करके हुक्का भी पीती हैं—काली-कलूटी, हाथ और गले में ढेर सारे लोहे और तांबे की ताबीज पहने। पांच-सात

इकट्ठी बैठकर गप्पें मारती हैं, कभी आपस में गाली-गुफ्तार करती हैं।

सलिल और भवन इस मुहल्ले को तेज कदमों से चलकर पार करते हैं। एक दिन सलिल बुरी तरह से ठोकर खाकर गिर पड़ा। भवन 'ही-ही' करके हंस पड़ा, "लगता है, एकदम लट्टू हो गया है। रास्ते को देखकर क्यों नहीं चलता है? क्या इस तरह जान देगा?"

सलिल ने कहा, "तू ठीक कह रहा है, जान ही जायगी मेरी। यहां आकर आंखें मूंद लेता हूं न।"

"क्यों रे, आंखें क्यों मूंदता है?"

"इन औरतों के दिखाई देने के डर से। देखने पर उबकाई आने लगती है, कहीं सचमुच उलटी न हो जाय, इस डर से आंखें बंद कर लेता हूं। सोच रहा हूं कि कल से हम थाने के रास्ते से होकर जायंगे। क्यों?"

भवन बोला, "चक्कर का रास्ता है, बहुत चलना पड़ेगा।"

सलिल ने कहा, "क्या किया जाय, सीधे रास्ते में यह कठिनाई है! आज तो गनीमत हुई कि रास्ते में ही गिरा, किसी दिन मुड़कर द्वार के भीतर ही चला जाऊंगा।"

सरस्वती पूजा के उपलक्ष्य में बसंत पंचमी के दिन स्कूल में संध्या के बाद एक संगीत-गोष्ठी का आयोजन था। और किसी बात में न सही, गाने-बजाने में सलिल ने इसी बीच कुछ नाम जरूर कमा लिया था। समारोह के अंत में वह और भवन ताल के किनारे वाले रास्ते से घर लौट रहे थे। गजब! लगा, जैसे स्वर्गलोक की सारी अप्सराएं आकर ताल के किनारे के इस मुहल्ले में इकट्ठी हो गई हैं। चोटी से एड़ी तक गहने-कपड़े में सजी-संवरी जगमगा रही हैं। समर भंगिमा में चल रही हैं, इत्र की तीव्र गन्ध हवा में बसी है। गैस की तेज रोशनी से सारा इलाका चमचमा रहा है। बड़ी-बड़ी कजरारी आंखों में मोहक दृष्टि है। हंसने की मीठी आवाज। गायन का स्वर। थिरकते हुए पैरों में बंधे घुंघरुओं के बजने का स्वर। दिन का मुहल्ला नहीं है, यह रात की इन्द्रपुरी है।

इन्द्रपुरी ही है, बेशक इन्द्र, चन्द्र, वायु, वरुण आदि का आना-जाना चल रहा है। सब चेहरे ढंके हुए हैं। एक बंद बग्घी गुलारी के पेड़ वाले मकान के सामने आकर रुकी। बग्घी का दरवाजा बंद है, खिड़कियों

भी बंद है। न जाने इस बग्घी के अन्दर क्या रहस्य समाया है। थोड़ा दरवाजा खोलकर सिर से पैर तक दुशाले से ढकी एक स्त्री मकान के अन्दर चली गई। गाड़ी का दरवाजा फिर बंद हो गया, कोचवान गाड़ी को तेजी से हांककर ले गया।

सलिल जाती हुई बग्घी की ओर देखता हुआ स्तंभित खड़ा है। भंवल बोला, "दोनों गये थे कहीं आनंद लूटने।"

सलिल ने कहा, "अगर साइकिल होती तो बग्घी का पीछा करता। अच्छी तरह देख भी नहीं पाया, फौरन दरवाजा बंद कर दिया।"

भंवल ने पूछा, "कौन था, रे ?"

सलिल कुछ बताता नहीं, हंसता है। कहता है, "जासूस का बाप भी उसका अनुमान नहीं लगा सकता। पहले रंगे हाथ पकड़ लूं, तब देख लेना।"

उस पर एक नई सनक सवार हो गई। वह संध्या के बाद मौका मिलते ही ताल के किनारे चला आता है। अकेले, भंवल तक को कुछ नहीं बताता। तब वह स्थान आनन्द-लोक बन जाता है। साइकिल पर चढ़कर जाता है, इमली के पेड़ के सहारे साइकिल को टिकाकर छायान्धकार में चुपचाप खड़ा रहता है। यहां दिन में जो घूमते-फिरते हैं, वे अब नहीं हैं। चेहरा ढके झट से एक घर में घुस गये, कौन महाशय हैं ये ? फिर बहुत देर बाद चेहरा ढके ही बाहर निकले। चेहरे पर का परदा कभी तो हटेगा ही, सलिल ने भी प्रण किया कि वह उस चेहरे को देखकर ही रहेगा। वह एक अजीब जासूसी के खेल में रम गया है। कभी-कभी इसके लिए उसे अलक्ष्य भाव से एक-दो मील तक चुपचाप पीछा भी करना पड़ जाता है।

●

अनिल को भाई को पढ़ाने का संकल्प त्यागना पड़ा। अब उसे उलटा आदेश दिया, "पढ़ने-लिखने की कोई जरूरत नहीं है। घर चला जा। जाकर वही कर जो वहां कर रहा था। जात्रा, थियेटर और गंवई दादा-गीरी। जिसके भाग्य में जो लिखा है, वह वही करता है।"

बड़े भाई के आदेश के पहले अंश को सलिल ने फौरन मान लिया। पढ़ाई छोड़ दी। लेकिन उसका घर वापस जाने को जी नहीं कर रहा है। यह शहरी जिन्दगी की बुराई है। गांव लौटकर फिर कीचड़-धूल में चलना

पड़ेगा, सबने सोचा, 'तभी नहीं आना चाहता।'

कैंथानी जाकर अनिल ने शशिमुखी से कहा, "बेहद बदनामी की बात हो गई। यह तो मैं था कि किसी तरह बात को दबवा दिया है। सलिल ने मास्टर की चुटिया ने काट ली है।"

स्कूल के मास्टर और सलिल के गृहशिक्षक गगाधर भट्टाचार्य एक निष्ठावान व्यक्ति हैं। वे शिखाविहीन दशा में कक्षा में आये। नंगे बदन नहीं, चुन्नटदार बाहों वाला कुरता पहने। पूरा खाका ही बदल गया। इस दृश्य को देखकर लड़के एक-दूसरे की ओर देखकर हंसने लगे।

सलिल उस दिन स्कूल नहीं गया था। मंबल ने आकर यह महत्वपूर्ण खबर उसे सुनाई, "गगाधर मास्टर ने चुटिया काट डाली है!"

"तुझे चाहिए वह?"

सलिल ने मंबल को असमंजस में डाल दिया। मोटी चुटिया एक जगह रखी थी, बात-की-बात में उसने मंबल को दे दी "यह ले।"

उसकी यह करतूत छिपी नहीं रही। लक्ष्मीरानी ने दुःखी होकर कहा, "देवरजी, तुमने मास्टर साहब की चुटिया काट डाली है! छि छि!"

"मास्टर साहब ने ही कहा था मुझसे। गुरु की आज्ञा थी।"

यह बात अनिल के कान में भी पहुंची। इस बात को लेकर उनकी 'तू-तू','मैं-मैं' करने की तबीयत नहीं हुई। गगाधर पढ़ाने नहीं आ रहे हैं, शर्म-हया त्याग कर कैसे आयें। अनिल रविवार को मंबल को साथ लेकर उनके यहां गये। जैसे कुछ भी नहीं जानते, इसी ढंग से बोले, "पढ़ाने नहीं आ रहे थे। कहीं तबीयत तो नहीं खराब हो गई। सोचा, आज चलकर देख आऊं।"

इस भूमिका के बीच में ही झट से उनका हाथ अपने हाथ में लेकर बोले, "आपसे माफी मांगने आया हूं, मास्टर साहब। बदनामी ज्यादा न फैले, यही चाहता हूं, यह हमारे और आपके दोनों के लिए शर्म की बात होगी। वह घर का दुलारा है। स्कूल से हटाकर उसे घर भेज रहा हूं।"

गगाधर तो माफ किये ही बैठे थे। बोले, "ऐसा क्यों कहते हैं छात्र ... पुत्र तुल्य होता है। थोड़ा शरारती जरूर है, नहीं तो वो बुरा नहीं है ...

महीने का आया हुआ था, फिर भी पारिश्रमिक पूरा ...

अलावा दस-दस के तीन नोट और दिये।

विस्मित होकर गंगाधर मास्टर बोले, "यह किसलिए ?"

"सलिल चला जा रहा है। नया ट्यूशन ढूंढ़ने में कुछ समय तो लगेगा ही।"

भंवल से सब हाल सुनकर सलिल खूब हंसा, बोला, "वह चुटिया का दाम था। इसके लिए नकद रुपये देने की क्या जरूरत थी। चुटिया तो तेरे पास थी, दे देता। और उनके कहने पर ही मैंने चुटिया काटी है। गुरु की आज्ञा का उल्लंघन नहीं कर सकता।"

गंगाधर ने स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि कोई उनका पीछा कर रहा है। सलिल दनदनाता हुआ मकान के अंदर दाखिल हो गया, सुपारी के पेड़ वाले उस मकान में। दरवाजा खटखटाते ही न जाने किसने खोल दिया। अंदर दाखिल होकर सलिल ने कहा,"नमस्कार, श्रीमान जी !"

फिर चिल्लाकर बोला, "इतना ढोंग क्यों रचते हैं ? कुरता-जूता पहनकर अच्छे-खासे तो आए हैं यहां, अबसे यही भेस रखिये। तुलसी की माला तोड़ डालिये अभी, चुटिया भी काट डालिये।"

करुण स्वर में गंगाधर बोले, "अपने आप कैसे काटूं ?"

यह सुशीला का घर है। हंसते-हंसते लोटपोट हुई जा रही है। झट से कैंची निकालकर उसने सलिल को थमा दी। चुटिया काटकर सलिल ने गुरु के आदेश का पालन किया। इसके बाद गुरु-शिष्य दोनों एक साथ बाहर निकले।

गंगाधर ने उसके हाथ को पकड़कर कहा, "तुमने जो कुछ कहा, मैं सब करूंगा। लेकिन बेटा, देखना, इसका प्रचार न हो। यों ही प्रधानाध्यापक नाराज हैं मुझपर, फिर बहाना मिलने पर मेरी नौकरी खत्म कर डालेगा।"

"नहीं प्रचार क्यों होगा। कुछ दिनों से इस मुहल्ले की छान-बीन में लगा हूं, श्रीमान्। लग रहा है, बदमाश को ढूंढ़ने में सालिम गांव ही उजड़ जायगा। सिर्फ साधु का बाना देखने पर मिजाज बिगड़ जाता है। आपने बाना बदल दिया, अब और कोई झमेला नहीं होगा।"

शिखा-कर्तन का यह इतिहास है। अनिल का प्रण है, सलिल को शहर

छोड़ना ही पड़ेगा। सलिल नहीं जाना चाहता, टाल-मटोल कर रहा है। इस बारे में भी अनिल तरह-तरह की अफवाहें सुनने लगा। गांव से उसे शहर वे ही लाये थे, फिर उसे वापस भेजकर उस पाप से मुक्त होना चाहते हैं। गांव में नहीं, सलिल अब सिराजकाटी में जाकर रहेगा, वहां उसके लिए वे कोयले का डिपो खोल रहे हैं। कोयले का डिपो इस इलाके में एकदम नई चीज है। और सौभाग्य यह है कि भंवल की भी स्कूल की पढ़ाई खत्म हो गई है। वह भी मदद के लिए मिल जायगा।

कचहरी न जाकर अनिल भाई को साथ ले जाकर डिपो में बैठा आये। खबर मिली कि इस काम में सलिल भी जी-तोड़ मेहनत कर रहा है। लग रहा है, जल्दी काम जम जायगा।

कैथाली गांव में दुर्गोत्सव समारोह होने वाला है। पहले मौज-जश्न के अवसर पर सलिल खाना-सोना भूल जाता था, अब उलटी बात हो रही है। खबर-पर-खबर आ रही है, फिर भी एक दिन के लिए घर नहीं आया। तब कुछ खास-खास आयोजक सिराजकाटी जा पहुंचे। बोले, "आखिर मामला क्या है, कहो तो ड्रामा बंद कर दें?"

सलिल ने कहा, "तुम लोग किसी तरह काम चला लो, मेरा जाना संभव नहीं। पूजा-थेटर के लिए गंज के आदमी कोयले से रसोई बनाना तो बंद करेंगे नहीं।"

सलिल ने इस तरह की बहुत-सी बातें कहीं। पर लोग मुश्किल से उसे पूजा के सिर्फ एक हफ्ते पहले ही कैथाली ला सके।

और अनिल महासप्तमी के दिन शाम को, उस दिन की पूजा हो जाने के बाद, आए। अनिल के घर आने पर गांव के प्रतिष्ठित लोग उनसे मिलने आते हैं।

"कचहरी तो परसों बंद हो गई है, इतनी देर क्यों लगा दी तुमने?"

अनिल ने कहा, "विषय (सम्पत्ति) सचमुच ही विष है, गुमाश्ता-खान का हिसाब ठीक करने के लिए सिराजकाटी में अटक गया था।"

"बहू मां को नहीं लाये, इस बार अकेले ही चले आए?"

अनिल ने कहा, "बड़ा साला मद्रास में रहता है, कुछ दिन के लिए घर आया है। बाल-बच्चों के साथ वे भाई के घर चली गई हैं।"

शशिमुखी को देखकर अनिल बोले, "सलिल की दुकान भी देख आया हूं, मां।"

कुछ सहमती हुई-सी शशिमुखी बोलीं, "सुनती हूं अच्छी चल रही है।"

"बिक्री बहुत अच्छी है। लकड़ी की कीमत बढ़ गई है, आसानी से मिलती भी नहीं है। लाचार होकर लोगों को कोयला जलाना पड़ रहा है।"

उच्छ्वसित होकर शशिमुखी बोलीं, "काम में मन लग गया है। पहले गाने-बजाने-थेटर पर जान देता था, अब यह हालत हो गई है कि उसे जबरदस्ती लाया गया है। कहता है, 'दादा ने शुरुआत कर दी है, अब इसको आगे बढ़ाना मेरा काम है'।"

लोगों के चले जाने पर अनिल ने दरवाजे भेड़ दिये। बोले, "सुनो, मां।"

अजीब किस्म की आवाज को सुनकर शशिमुखी का बदन कांप उठा।

अनिल ने कहा, "हिसाब-किताब की बात गलत है। बड़ी उम्मीद से मैंने कोयले का डिपो खोला है। मेरा लायक भाई उसकी क्या गति कर रहा है, यह देखने सिराजकाटी गया था। बिक्री अच्छी है और मुनाफा भी काफी है, तो भी रुपयों के अभाव में कोयले का वैगन खाली नहीं होता, डैमरेज लगता रहता है।"

शशिमुखी बोलीं, "मुझे पता है। भादों के महीने में एक दिन बदहवास-सा मेरे पास आया था। बोला, 'रुपये दो मां, माल को बेचकर रुपया वापस कर दूंगा'।"

शान्तभाव से अनिल बोले, "रुपये नहीं थे, इसलिए तुमने मगर के मुंह वाला अपना कंगन का जोड़ा दे दिया था न?"

"अगर देखा जाय तो कंगन का जोड़ा उसीका था।"

कैफियत के लिहाज से शशिमुखी ने कहा, "बड़ी बहू के आने पर अपना कंठहार पहना दिया था, छोटी बहू के लिए यह कंगन का जोड़ा रख छोड़ा

था। जिद कर रहा था, देना पड़ा। खरीदारों को बेहिसाब उधार देकर अब संभाल नहीं पा रहा है।"

"दुकान के कागजपत्र में भी मैंने यही पाया, बेहिसाब उधार। मुझे देखकर कुछ शक हुआ। मंगल को साथ लेकर दो-चार जगह पता लगाने गया। पावना जरूर था, लेकिन कच्ची रसीद देकर सब रुपया वसूल कर लिया था। रकम खाते में जमा नहीं की थी। इस डर से कि कहीं मैं या और कोई उसे पकड़ के रुपये का हिसाब न मांगे।"

मां की ओर देखकर झट से अनिल ने पूछा, "अपने कंगन का हाल जानती हो?"

"बंधक-अंधक रखकर अपना काम चलाया होगा। रुपया आने पर छुड़ाकर वापस कर जायगा।"

"कर दिया वापस उसने! हमेशा के लिए चला गया। जो पहले दादी ने तुम्हें पहनाये थे, तुमने रख छोड़े थे बेटे की बहू के लिए। जानती हो अब कौन पहनकर घूम रहा है उन्हें?"

डरी हुई आवाज में शशिमुखी बोली, "कौन?"

"कसबी परी वाला।"

क्षणभर शशिमुखी चुप बनी रही। अनिल ने कहा, "नदी के किनारे कसबियों का मुहल्ला है। बदकिस्मती मेरी, चुपचाप उस मुहल्ले में जाकर कंगन का जोड़ा पहने हुए चुड़ैल को अपनी आंखों से देख आया। स्कूल के जमाने से वह तुम्हारे छोटे बेटे के सिर पर सवार है। इसी वजह से मैंने उसे स्कूल छुड़ाकर सिराजकाटीगंज में लाकर बैठाया। लेकिन उस चुड़ैल ने उसका पिंड नहीं छोड़ा, धावा बोलकर उस गंज तक चली आई है।"

कुछ क्षण चुपचाप बीत गए। शशिमुखी की आंखों में पानी आ गया। बोली, "अभी गंज की दुकान उठा दो, वह यहां घर आकर रहे।"

अनिल बोले, "यहां से गंज का रास्ता ही कितना है! क्या वह घर से नहीं जा सकेगा?"

बूढ़ी गरज उठी, "घर लाकर हाथ-पैर बांधकर रखूंगी।"

अनिल शांतभाव से बोले, "मां, बोलते ही दुकान नहीं उठाऊंगा

रहकर मैंने अच्छी तरह देखा है। सारी बातों का पता लगाया है। थोड़ी-सी कोशिश से ही धंधा चमक उठेगा। पर अभी जो तुमने कहा न कि सलिल के हाथ-पैर बांधने पड़ेंगे, यही करना पड़ेगा, जिससे उस मुहल्ले की ओर जा ही न पाये।"

अनिल ने उपाय सोच लिया है। थोड़ा मुस्कराकर बोले, "लड़के की शादी कर दो, मां, जल्दी से।"

८/

मा से सलिल बेहद झगड़ रहा है, "मुझसे नही चलेगी गृहस्थी। साफ कहे दे रहा हू।"

"तुझे कौन कह रहा है गृहस्थी चलाने को?" शशिमुखी ने कहा, "शहर के डेरे को छोडकर बडी बहू का हिलना कठिन है। मैं बूढी हो गई हू, जब-तब बेहोश हो जाया करती हूं। हो सकता है, किसी दिन होश फिर न आए। तू सिर्फ बहू ला दे शादी करके। वही अपने ऊपर सब जिम्मेदारी ले लेगी।"

भंवल ने भी इसी तरह समझाया उसे, "घबड़ा मत। अगर मन न लगे, खिसक जाना। तू देखना, ऐसे घर, सम्मान, धन-जन की मालकिन बनकर वह गरीब घर की लड़की, अपने को कृतार्थ मानेगी। वह तेरी इच्छा मे बाधा देने की हिम्मत ही नही करेगी।"

सलिल चुप हो जाता है, पर अपनी जिद नही छोडता। इसके बाद वह गुमनाम चिट्ठी गई। चिट्ठी रवाना करके उम्मीद लगाए बैठा है। लड़की की कोई आकस्मिक बीमारी की खबर देते हुए बडे दुःख के साथ... जैसे कोई जवाब आने ही वाला है या उस तरफ का कोई आदमी। दिन-पर-दिन इंतजार करता रहता है। कुछ नही होता। उलटे अनिल ही जीवन-भय पर मुकदमो की जिम्मेदारी लादकर सबके साथ फैसाली चले आए।

लो, हो गया अब सफाया! मां से झगडा करके उन पर थोडा-बहुत अपना गुस्सा उतार रहा था, उसका भी खात्मा हो गया। उसे नजरबद कर रखा है। उधर भंवल, शायद अनिल के निर्देश से ही, लगातार उसे सभाल रहा है, "खबरदार, खबरदार! अगर कोई बुरा विचार बनाया हो, तो उसे छोड़ दे। रुपया-पैसा नही है, पर, लड़की तो भले घर की है। तू अगर कही भाग जाता है, तो उन लोगों की क्या हालत होगी, इसे न भूल।"

सलिल बिगड़ उठता है, "लड़की नहीं, जी का जजाल है ! तभी घर वाले जंगल-झाड़ी, खादर-घूरा, जहां मन चाहा फेंककर अपने को हलका कर रहे हैं।"

भागेगा नहीं, जिद चढ़ गई है उस पर। किसके डर से भागेगा ? किससे डरता है वह ? उस बार जब घुरघुराते हुए जंगली सूअर ने हमला बोल दिया था, सब भाग गए, सलिल नहीं हिला अपनी जगह से। बांस की एक मुंगरी मिल गई, उसीको हाथ में ताने खड़ा रहा। जंगली सूअर ही हट गया। धर्म के सामने निर्दोष है वह। दादा ने जो बात छिपा रक्खी थी, चिट्ठी लिखकर उसने सब भंडाफोड़ कर दिया है। जायदाद, घर-द्वार, बड़े भाई की ख्याति वगैरा देखकर ही उनका दिमाग फिर गया है, मेरी जगह अगर इस घर का कुत्ता या बकरा होता तो भी वे लड़की को शादी कर देते, तब यही हो...

भंवल नाव पर सवार होते हुए सलिल को समझाता है, डराता भी है, इसमें जरूर अनिल की शह है, "दूल्हा के रूप में जाकर बहादुरी मत दिखाना वहां। छिपी हुई बात कतई जाहिर न होने पावे। बड़ा पाजी गांव है। वहां के संडे-मुस्टंडे छोकरे जमीन पर फावड़े चलाते हैं, कुश्ती लड़कर सेहत बनाते हैं। छोटी-छोटी बातों पर फौरन मारपीट शुरू कर देते हैं। वह ऐसी अजीब जगह है।"

दो बड़ी नावें घाट पर बंधी हैं। एक में दूल्हा जायगा और साथ में उसके यार-दोस्त रहेंगे और भंवल तो अवश्य ही। जब नाव छूटने वाली थी, यकायक तभी अनिल भी इसी पर चढ़ बैठे। छोकरों का सिगरेट पीना और मजेदार बातचीत, सब बंद, सबके मुंह पर ताले लग गये। लेकिन अनिल जैसे आदमी को कौन चेतावेगा ! नाव चल पड़ी, सवारियां भी मुंह कड़वा किये ध्यानस्थ बनी बैठी रहीं।

नाव छोड़कर रेल पर बैठने चले। स्टेशन जाने के रास्ते पर भी अनिल साथ लगे हैं, जैसे कि वर कहीं भाग जायगा। अगर सचमुच वह भाग ही जाय, अनिल क्या उसके पीछे 'पकड़ो, पकड़ो' कहते हुए दौड़ेंगे ? रेल के डिब्बे में बैठकर मुक्ति मिली। अनिल दरवाजे के सामने चहलकदमी कर

रहे थे, सीटी देकर गाड़ी के छूटते ही वे पास वाले डिब्बे में चढ़ गये।

सलिल ने मुस्कराकर भंवल से कहा, "नाव पर दादा को विश्वास नहीं था, पानी में कूद कर डुबकी लगाकर शायद भाग जाऊं। चलती हुई गाड़ी से नहीं कूदूंगा, यही समझकर चले गये।"

पनेग स्टेशन छोटा-सा है। सब तरफ कमाड की झाड़ियां, बास और बेंत के वन, खड्ड-खंदक वगैरा ही नजर आ रहे हैं। इन्हीं सबके भीतर होकर जो तंग रास्ता गया है, उस पर करीब चार मील तय करने पर दनघरा गांव पड़ता है। चारों ओर नजर डालकर भवल फिर सलिल को सावधान कर देता है, "वरासन पर बैठकर भी कोई बेतुकी बात न करना! दूल्हा है इसलिए सींग नहीं निकल आये हैं तेरे, चाहे तो सिर पर हाथ फेरकर देख ले।" दूल्हा होने की वजह से तुझे शायद ज्यादा जोखिम न उठाना पड़े, मरना हमीं लोगों को पड़ेगा। बास हाथ में लेकर पिल पड़ेंगे, भागकर भी नहीं बच पायेंगे, मारते-मारते कचूमर निकाल देंगे, फिर कमाड की झाड़ी में डाल देंगे या खड्ड की कीचड़ में गाड़ देंगे, किसीको पता तक नहीं चलेगा।"

•

सलिल श्रीनाथ के बैठकखाने में वरासन पर बड़े कायदे से बैठा है। सेहरा राजमुकुट की तरह नीचे रक्खा हुआ है। पीछे और इधर-उधर *वृत्ताकार गावतकिये हैं। फिर बारातियों का व्यूह वेष्टित किये हुए है।* और मौजूद है भंवल, सबको पार करके जो दो-एक प्रश्न वर की ओर आ रहे हैं, बीच ही में उन्हें पकड़कर भवल जवाब दे रहा है।

लड़की वालों की ओर से सवाल हुआ, "दूल्हा एकदम चुपचाप बैठा है, गूंगा है क्या?"

भवल ने कहा, "मामूली सिपाही का ही जब मुकाबला नहीं कर पा रहे हैं, तब सिपहसालार जंग के मैदान में क्यों आयगा?"

बूढ़े पुरोहित ने समझाकर कहा, "इस उमर में ये लोग लोहे के चने चबाकर हजम कर सकते हैं। दूल्हा तमाम दिन कैसे फाके से मुरझा गया है। तिसपर रास्ते की कठिनाई उठानी पड़ी है। बातचीत भागी थोड़े ही जा रही है, अब नहीं हुई, तो सुबह हो जायगी।"

वरासन से मंडवे में पहुंचने तक का समय निर्विघ्न वीत गया। खतरा विवाह के वाद वासर (वर-वधू के प्रथम रात्रि-यापन स्थान) में है। इससे निस्तार पाकर जव सुवह होगी तभी जान-में-जान आयगी। भंवल को यह चिन्ता वहुत सता रही है, और अनिल को भी। लेकिन वे इसे जवान पर लाने वाले शख्स नहीं हैं। वीच-वीच में सिर्फ भंवल की ओर देख रहे हैं, भंवल के प्राण सूखे जा रहे हैं।

वहुत रात गए विवाह की लगन है, यही वात भरोसे की है, वासर की रस्म लंवी नहीं हो पायगी। सुग्गा को सिखाने की तरह भंवल ने सलिल को सिखाया है, "नींद आ गई है, यह जताने के लिए वार-वार जम्हाई लेना, पलकें झपकाकर आलस से ढुलक पड़ना। वासर में औरतें ही औरतें होती हैं, वहां मर्द तू ही अकेला होगा। उनसे तुझे ही खुद निपटना पड़ेगा। किसी भी हालत में अपना मनोवल न खोना। किसी तरह की जिरह के चक्कर में न फंस जाय, इसका ख्याल रहे।"

सलिल ने अदालत में गवाह को जिरह करते हुए अपने भाई को देखा है। वह जानता है, जिरह कितनी भयानक चीज होती है।

भंवल कह रहा था, "तुझे नींद से ढुलकते हुए देखकर सव औरतें तो चली जायंगी। खाली वासर में नई दुलहिन के साथ तू अकेला रह जायगा। नया सम्वन्ध होने पर भी दुलहिन को अपने लोगों में माना जाता है। ऐसे वक्त उससे फुसफुसाकर दो-चार वातें की जा सकती हैं। फिर भी जवान की लगाम को ढीली न करना। वह कैसे मिजाज की लड़की है, हम अभी तक नहीं जानते। हो सकता है, कठोर मिजाज की हो। तेरी वात सुनकर वासर घर में ही 'मैय्या री, सत्यानास हो गया मेरा' कहकर चिल्ला-चिल्लाकर रोने लगे!"

वरासन हटाकर पूरे फर्श पर जाजिम-दरी विछाकर वारातियों के इकट्ठा सोने का इन्तजाम किया गया है। जव गठवंधन करके औरतें सलिल और नई दुलहिन को चारों ओर से घेरकर वासर घर के अन्दर ले गयीं, उस समय वह वड़ी कातर दृष्टि से देख रहा था—भंवल यह सव सोच रहा था और वेचैनी से करवटें वदल रहा था। भोर के समय थोड़ी नींद आ गई थी, तभी उसने सुना, "ओ भंवल।"

आंखें खोलकर भंवल ने देखा कि सामने वर खड़ा है। नहीं, कोई गड़बड़ी नहीं हुई सकती है। चिकना चेहरा हंसी से चमक रहा है।

"नहीं, यहां एक भी बात नहीं।"

मनिल भंवल का हाथ पकड़कर एकान्त पोखरे के घाट पर ले गया। भवन ने पास ही से नीम की एक छोटी टहनी तोड़कर दो दातुनें बनाईं। एक खुद रखकर दूसरी मनिल को थमा दी। फिर दोनों घाट की सीढ़ी पर आमने-सामने बैठ गये। दातुन करते हुए मुस्कराकर भवन बोला, "लग रहा है लड़ाई जीतकर आ रहा है। बता..."

•

बासरघर में औरतें हंसी-मजाक के नाम पर जो जी में आ रहा है, कह रही हैं और चीखें काढ़कर बेहयाई में डूब रही हैं। इसी बीच मंजरी राय काकी को लिवा लाई। आते ही उन्होंने हुल्लड़ मचाती हुई औरतों को फटकारा, "रात बीतने को हो रही है, अब जाओ तुम लोग। दूल्हा बहुत थक गया है। शान्त प्रकृति का हंसमुख लड़का है, तभी चुप है। रस्म पूरी हो गई, अब थोड़ा सो लेने दो।"

कहकर सबके चले जाने का इंतजार करती हुई खड़ी ही रहीं। वे यहां से तबतक नहीं जायंगी जबतक सब छोकरियां चली नहीं जातीं। इसी बीच एक मुंहफट छोकरी बोल उठी, "सचमुच सोओगे ही न, क्यों जमाईबाबू?"

कार्बाइड की तेज रोशनी जल रही थी। राय काकी ने उसे बुझा दिया। घर के कोने में रेंडी के तेल का दीपक जल रहा था। सिर्फ उसे ही रहने दिया। रात भर जलेगा, बुझाया नहीं जायगा। मंजी ने वर से कहा, "जल्दी से उठकर दरवाजे की अगरी लगा दो, नहीं तो न जाने कब कौन आ जायगी अन्दर, फिर पता भी नहीं चलेगा। आकर तख्त के नीचे छिपी रहेगी।"

एक बड़ी विपत्ति तो दूर हुई। लेकिन अभी और कई बाकी हैं। दुलहिन जबतक विदा नहीं हो जाती, एक-एक करके लगातार आती ही रहेंगी। अगली विपत्ति अब दुलहिन के साथ है।

अगरी लगा रहा है और नवेली दुलहिन की ओर कनखियों से देख

रहा है। वह घूंघट काढ़कर मुरदे की तरह पड़ी थी। घूंघट डेढ़ बालिश्त का था, अब चार अंगुल कम हो गया है, उसीमें से दूल्हे की ओर देख रही है। दीपक की मद्धिम रोशनी में दो बड़ी-बड़ी आखें नजर आ रही हैं, थोड़ा-थोड़ा चेहरा भी। तख्त तक पहुंचते-पहुंचते पूरा घूंघट हट जायगा, अकेले में नई दुलहिन अब कमर कसकर रणरंगिनी बनकर जूझेगी। बिना समझे-बूझे न जाने उसने वह चिट्ठी क्यों लिख डाली थी। अब कुछ-कुछ उसे अपनी गलती का अहसास हो रहा है। खुद अपने चरित्र का इतना बखान न करता तो अच्छा होता।

चट से उसने एक जुगत निकाल ली। रांगा काकी जो रास्ता दिखा गईं, उसीका अनुसरण करेगा। नींद, नींद से आखें बंद हुई जा रही हैं; लड़-खड़ाते हुए किसी तरह बिस्तर पर जाकर धप् से गिर पड़ेगा। यह बड़ी गहरी नींद होगी, धक्का मारने पर लुड़कने लगेगा। पकड़कर बैठा देने के बाद फिर ज्योंही छोड़ दिया जायगा, फौरन गिर पड़ेगा। चिकोटी काटो, मुक्का मारो या चाहो तो दमादम मूंगरे जमाओ, नींद नहीं खुलेगी। पर अगर कोई गुदगुदाए, नई दुलहिन नहीं जानती कि मूंगरे जमाकर मकसद हासिल नहीं हो सकता, पर हलके से बदन पर उंगली छुआने से ही आदमी खट् से उठ बैठेगा और हंसी से बेदम हो जायगा।

वह अपनी नई बीवी के हमले से बचने की तरकीब सोच रहा है, लेकिन यह क्या, बीवी तो उसीकी तरह है, सवा सोलह आने ! उसने सलिल के कान में कहा, "सब इधर-उधर कान खड़े किये छिपी हैं। अब चुपचाप सो जाओ।"

यह कहकर वह करवट बदलकर चुपचाप सोई रही। हे प्रभो ! तुम्हीं सच्चे सहायक हो। विपत्तियां अपने-आप एक-एक करके दूर होती जा रही हैं। सलिल बैठकबाजी करके या गा-बजाकर मौज से रात बिताने वाला आदमी है। कैसे नींद आये उसे ! शिराओं में रक्त तेजी से दौड़ रहा है। दुलहिन के बदन पर हाथ फेरने की तबीयत हो रही है। दौड़कर भंवल के पास जाने को जी चाह रहा है।



घाट के चबूतरे पर धीरे-धीरे एक छोटी-मोटी मजलिस जम गई।

सब बासर का विवरण सुनने जमा हुए हैं। सलिल को मौका मिल गया है, वह क्यों छोड़े, जो मुंह में आ रहा है, खूब रंग चढ़ाकर रात का किस्सा सुनाने लगा। कहीं से एक लोटे का जुगाड़ करके मंवल ने कहा, "तुम लोग बातें करो, मैं अभी आ रहा हूं।"

बासी विवाह[1] होगा, फिर उसका भोज। हालांकि यह दोपहर को होता है, लेकिन होते-होते आधी रात हो जाती है। अनिल ने स्पष्ट चेतावनी दे दी है कि अगर ज्यादा देर हुई तो बिना खाये ही सब रवाना हो जायंगे। वे कामकाजी आदमी हैं, घड़ी की सुई के साथ चलते हैं। ठीक चार बजे निकलकर साढ़े सात बजे वाली ट्रेन पकड़ेंगे। घाट-स्टेशन पर उतरते ही नाव तैयार मिलेगी। कल पहर भर के भीतर ही घर के घाट पर पहुंच जायंगे। बहूभात (भोज), फूलशय्या[2] आदि कल हैं। इन रस्मों की अदाई का पूरा इंतजाम हो चुका है। परसों से अदालत में उन्हें एक बड़े मुकदमे में भिड़ जाना पड़ेगा।

घाट पर सब सलिल के साथ बातचीत में व्यस्त थे। करीब आधे घंटे बाद लौटकर मंवल को वहां कोई नजर नहीं आया। गुरुपद को सामने पाकर उसने पूछा, *"सलिल को देखा आपने?"*

"क्यों नहीं देखूंगा? दो छोकरियां दोनों ओर से उसके हाथ पकड़कर खींचती हुई अन्दर ले गईं।"

बस हो गया!

दूल्हा है आज, कल और आज, यही दो दिन तो रागरंग के हैं। इसके बाद तो वही पुनर्मूषिक बन जायगा।

•

न जाने कहां से अनिल बदहवास में आ पहुंचे। लगता है गुरुपद ने उन्हें सलिल की खबर दे दी है। जरूर मंवल की लापरवाही और गैर-जिम्मेदारी का बखान विस्तार से किया होगा। आते ही मंवल की ओर गुस्से से देखते हुए बोले, "मैंने कहा था न उसे आंखों से ओझल न होने देना?"

---

१. विवाह के बाद वाले दिन होने वाली एक रस्म।
२. ससुराल में नववधू की पहली रात बिताने के लिए बनाई गई शय्या।

भंवल ने कातर भाव से कहा, "मैं क्या दिसा-फरागत के लिए भी छुट्टी नहीं पा सकता बड़दा (बड़े दादा)? मैंने उसे बादल, फड़िग, नेढ़ा, काले वगैरा से घिरे हुए बैठे देखा था, तब मैं देख-सुनकर गया था।"

तभी पेटू बलाई ने आकर बड़े उत्साह से खबर दी, "आज बड़ा बढ़िया भोज होगा। तीन-चार पसेरी की एक विशाल रोहू को काट रहे हैं लोग।"

नाराज होकर अनिल ने कहा, "अब तुम लोगों को काटेंगे एक-एक करके।"

कहकर चमक उठे, "रोने की आवाज आ रही है भीतर से। सुनो तो अच्छी तरह से। हां, ठीक।"

हो सकता है, भंवल सोच रहा है। कल पूरे दिन मुंह नहीं खोल पाया था, पेट फूल रहा था। भले आदमी की लड़की को रात में कुछ कह दिया होगा। सवेरे उठकर लड़की ने घर के लोगों से कह दिया होगा। अब सब अंदर ले जाकर दामाद की निंदा में लग गये हैं। निश्चित यही हुआ है।

बादल वगैरा को देखकर भंवल दौड़ता हुआ उनके पास पहुंचा, "कल से मैं उसे अकेला संभाले हुए था, बड़े-बड़े तूफान पार कर दिये। मैं थोड़ी देर के लिए चला गया था, और तुम सबने सलिल को योंही अकेला छोड़ दिया?"

बादल बोला, "दो छोकरियां उसके दोनों हाथ पकड़कर झूल गयीं। मैं क्या तब उनसे लट्ठबाजी करता? मर्द होते तो वह भी कर लेता।"

फड़िग ने कहा, "वहां लाठी का काम नहीं था। छोटी लड़कियां थीं, बदन से जोंक छुड़ाने की तरह छुड़ाकर दोनों ओर फेंक देना चाहिए था। लेकिन तब किसीको यह बात सूझी ही नहीं।"

भंवल ने कहा, "मैं समझ गया। औरतें देखकर तुम्हारा दिमाग चकरा गया था।"

रोना रुका था, फिर जोर का कोलाहल हुआ। बलाई ने घबड़ाकर कहा, "मैं क्या करूं! मेरे तो पैर खराब हैं, मैं तो दौड़ भी नहीं पाऊंगा।"

भंवल बोला, "दौड़कर उनसे कोई नहीं बच सकता। दो अच्छे पैरों की बजाय चार होने पर भी नहीं। सब बड़े तगड़े जवान हैं। देखा नहीं आपने

इतनी बड़ी कन्या को पीढ़े में बैठाकर दो ही जने फिरकनी की तरह वर के चारों ओर चक्कर काटने लगे। सात फेरे पूरे होने पर नाई चिल्लाने लगा, किसकी मजाल कि उन्हें रोके।"

यह कह रहा था और अंदर की ओर कान लगाये हुए था। यकायक वह 'ही-ही' करके हंस पड़ा, "डरने की कोई बात नहीं, बाल-बच्चों के रोने की आवाज है। शादी के मौके पर बहुत-से लोग आये हैं न, उन्हीं के बच्चे हैं। बेकार इतना डर गये बड़दा, ओफ्!"

•

गिरिबाला ने दामाद को बुलाने भेजा था। अबतक उन्होंने उसे सिर्फ आंखों से ही देखा था, एकान्त में अब दो-चार भीतरी बातें होंगी। पर औरतों ने उसे रास्ते में ही पकड़ लिया और दक्खिन वाले घर में ले गईं। घर गांव की बहुओं और लड़कियों से ठसाठस भरा हुआ है। रात अधिक होने की वजह से वासर की मजलिस ठीक तरह नहीं जम पाई थी, तभी इस समय सब आकर इकट्ठी हो गई हैं। सब उन अच्छे कपड़ों से सजी-संवरी हुई हैं, जो ऐसे मौकों के लिए ही बक्सों में तहाये रक्खे रहते हैं। जिसके पास जितना सोना-चांदी है, वह भी बदन पर लदा है।

"आओ जमाईबाबू, आओ, आओ। तुम यहां आकर सबके बीच में बैठो। रंग-बिरंगी चिड़ियों का यह मजमा शादी के मौके पर इकट्ठा हुआ है। काम खत्म हो जाने पर सब फुर्र से उड़कर अपनी-अपनी जगह चली जायंगी। फिर कभी मुलाकात होगी या नहीं होगी, कौन जानता है! अच्छी तरह बैठो, हम बातचीत करें।"

नामी वकील का छोटा भाई है, शक्ल-सूरत अच्छी है, घर पर पक्की हवेली है, हर साल खेत में इतना धान होता है कि खाने के बाद भी बहुत बच जाता है। किसी आदमी की इतनी अच्छी हालत दूसरों को ख्वामख्वाह नहीं सुहाती। उन्होंने सुना है कि पढ़ाई के मामले में दामाद पिछड़ा हुआ है।

एक छोकरी ने मजाकिया लहजे में पूछा, "जमाईबाबू, तुम कलकत्ता के किस कॉलेज में पढ़ते थे?"

सलिल बोला, "मैं कॉलेज में पढ़ता था? आपने सपना देखा है क्या?"

"हमने तो सुना है कि स्वतन्त्र व्यवसाय करने की खातिर ही तुमने

बी० ए० पास करने के पहले ही पढ़ाई छोड़ दी है ।"

सलिल हंसते-हंसते लोटपोट हो गया, "मैंने बी० ए० पास नहीं किया है ? यह बात झूठ भी नहीं है। पाठशाला में जिसने केवल अक्षर-ज्ञान प्राप्त किया है, वह भी कह सकता है कि मैंने बी० ए० पास नहीं किया है। लेकिन किसने गढ़ी है यह कहानी, जरूर यह हेड मुहर्रिर गुरुपद हालदार ही का काम है। कहीं पर कुछ नहीं है, बात-की-बात में मुवक्किल के लिए कहानी रच डालते हैं। हालदार महाशय गवाहों को कैसे पढ़ाते हैं, बहुत देखा है मैंने।"

"कॉलेज में नहीं पढ़े हो तो स्कूल में तो पढ़े हो ?"

इसका जवाब भी सलिल की जबान पर था। लेकिन तभी मंजरी आ पहुंची, "नाश्ता कर लो, आओ।"

"लगता है मंजरी की दसों दिशाओं की निगरानी के लिए दस आंखें हैं। फिर आई हैं रांगा काकी को साथ लेकर, जिनकी किसी बात की अपील नहीं हो सकती।"

रांगा काकी ने कहा, "पूड़ियां तली जा रही हैं, ठंडी हो जाने पर बेमजा हो जायंगी। चलो बेटा, उठो।"

सलिल चलने लगा। उसके आगे-पीछे दो प्रबल फौजदार हैं, रांगा काकी और मंजरी। बेला नाम की एक लड़की पीछे से बोली, "खाकर फौरन चले आना, हम सब यहीं हैं।"

रांगा काकी ने कहा, "नहीं, खाकर थोड़ी देर लेटेगा। रात को नींद पूरी नहीं हुई है। उसे नींद आ रही है।"

सलिल ने प्रतिवाद करने की कोशिश की, "नींद नहीं आई है।"

"आई है या नहीं, तुम क्या जानो ? चलो !"

फर्श पर आसन बिछा है, पास पानी भरा गिलास रक्खा है। आसन पर सलिल को बैठाकर मंजरी रसोईघर की ओर दौड़ी। गिरिबाला सामने आकर बैठ गई। सजल दृष्टि से बोलीं, "बेटा, मंदा को तुम्हारे हाथ में सौंप रही हूं। तुम्हारे दादा तो देवता आदमी हैं। आते ही उन्होंने मुझे 'मां' कहकर पुकारा था। तुम ऐसे दादा के छोटे भाई हो, मुझे विश्वास है, तुम भी वैसे ही होगे। मेरी लड़की की भूल-चूक माफ करके मिल-जुलकर रहना।"

कहकर भाई ने हाथ पकड़ लिया। मोहित को अजीब-सा लगने लगा, अगर वह नशा उतारे न होता, तो फौरन हाथ छुड़ाकर भाग जाता। यों तो बातचीत में चतुर है, पर इस वक्त क्या कहना चाहिए, कुछ नहीं सूझ रहा है। तभी मालती और मंजरी ने आकर थालों-कटोरियों में उनके लिए तरह-तरह की खाने की चीजें परोसने में लगा दी। अबतक मुंह बंद था, अब यह काम मिल गया।

गिरिबाला ताड़ के पत्ते का पंखा लेकर झलने लगीं। उद्देश्य हवा करना नहीं था, खाने की चीजों पर मक्खियों को न बैठने देना था। पंखा झलते हुए उन्होंने एक बार अपनी आंखें पोंछीं। बोलीं, "हमलोगों को यह छोटी लड़की सबसे प्यारी है। तुम्हारे ससुर की तो आंखों में बसती थी। सुपात्र के हाथ में पड़ गई, वे भी ऊपर से यह देखकर प्रसन्न हो रहे हैं।"

बाहर से मदन का उद्विग्न कण्ठस्वर सुनाई पड़ा, "भाभी ललित है भीतर ?"

और तभी न जाने कहां से गरज उठीं रांगा काकी, "बेचारा खा रहा है, अब भी चैन नहीं लेने दे रहे हैं मुंहझौंसे।"

यह वाक्य मदन के कानों में भी पहुंच गया। वह अप्रतिभ भाव से बोला, "खा लेने के बाद थोड़ा बाहर भेज दीजिये। जरूरत है।"

उसे तुरन्त जवाब मिला, "नहीं आयगा। अब सुला दूंगी। एकान्त में सोयगा।"

मदन बोला, "हमलोग भी उसे यही कहने के लिए बुला रहे हैं। सो लें थोड़ा। बकर-बकर करते वक्त तो उसे होश नहीं रहता, पर नींद कम होने पर उसकी तबीयत खराब हो जाती है।"

खुश होकर रांगा काकी ने कहा, "बीच वाली कोठरी में खिड़की-दरवाजे बंद करके सुलाये दे रही हूं, तुम निश्चिन्त रहो, बेटा। यह मेरा अपना कमरा है, आदमी तो क्या, उसमें चींटी-मक्खी तक झांकने की हिम्मत नहीं कर सकती। अभी विवाह की रस्म तक आराम से सोता रहेगा।"

वासी विवाह जल्दी ही निपट गया। ठीक दोपहर को भोज का आयोजन था। सब उसी में व्यस्त थे। इधर कन्या का पता नहीं लग रहा था। झटपट उसे थोड़ा-बहुत खिला देना पड़ेगा। उसके बाद सजाना-संवारना, रोना-धोना, विदाई, लड़की को ससुराल पठाना हंसी-खेल नहीं होता।

उधर रसोईघर में घुसकर मंदिरा रसोई कर रही थी।

गिरिबाला ने मालती से कहा, "तू जा, धुएं-कालिख के बीच बैठी है, पकड़कर ले आ। मैंने पुकारा, मेरी बात सुनी ही नहीं। पकड़कर खींचने की तबीयत हो रही थी, रिश्तेदारों की मौजूदगी का खयाल करके चुप हो गई।"

मालती ने रसोई में पहुंचकर कहा, "तू यहां क्यों है, री ?"

मंदिरा ने कहा, "समझ गई, मां ने भेजा है। शादी से पहले मां कहा करती थीं कि रसोईघर के धुएं-कालिख से बदन का रंग हांडी के पेंदे की तरह हो जायगा, कोई पसंद नहीं करेगा। पसंद-नापसंद की समस्या तो अब नहीं रही। मैं बिलकुल बेफिक्र हूं। अब कालिख पोतने या किसी अंग के आग से जल जाने पर भी क्या हर्ज होगा ?"

"चल उठ", कहकर मालती ने उसका हाथ पकड़कर खींचा। फिर बोली, "सब नाते-रिश्तेदार इधर-उधर घूम रहे हैं, देखेंगे तो क्या कहेंगे ? इतने लोग खायंगे, सबकी तो रसोई हो रही है। तू यहां अलहदा किसके

"तुम यह क्या कह रही हो, मां। मां का प्रसाद अमृत के समान होता है, उसमे कहीं आमिष-निरामिष का भेद होता है ?"

बेटी को बातों में जीतना मुश्किल है। गिरिबाला मदिरा के मुह में व्यजन के एक-एक कौर उठा-उठाकर दे रही हैं, जिस तरह उसके बचपन में दिया करती थीं। मदिरा खिलखिलाकर हसती है, "यह क्या हो रहा है, मां ? मुझे रसोई बनाते देखकर रिश्तेदार निन्दा करते, इस दृश्य को अगर देखें तो वे क्या करेंगे ?"

गिरिबाला ने कहा, "मेरी बला से देख लें !"

मालती ने भी उन्हें निर्भय किया, "नहीं कोई नहीं देख पायगा। दरवाजे पर मैं पहरा दे रही हू। आने दूंगी तब तो कोई देखेगा !"

गिरिबाला कैसे खाय, आखो से आसू का दरिया जो बह निकला है। मा को रोता देखकर मदिरा भी रो रही है। यकायक वह सजग हो उठी, "मैं ही निगले जा रही हू, तुम कुछ नहीं खा रही हो मां, मुझसे चालाकी खेल रही हो ? अबतक मैं खाती रही हू, अब तुम खाओ। तुम जब तीन कौर खा लोगी, तब मैं एक खाऊंगी।"

भात के गोले बना-बनाकर मा अपनी बाईस साल की बेटी के मुह में देती जा रही है। बेटी भी मां को खिला रही है। बेटी के विदा होने के दिन विधवा मा का सब आचार-विचार दूर हो गया है, लड़की का छुआ और जूठा अन्न-व्यजन बिना किसी हिचक के मुह में डाल रही है। और लड़की को भी देखो, आज जीवन के इस परम दिन में विधवा के साथ निरामिष[1] भोजन में जुटी है। शुभ-अशुभ का कोई खयाल नहीं कर रही है। इस अनाचार को, देख ही कौन रहा है, मालती रणचडी बनी पहरे पर जो तैनात है। घर के अदर क्या हो रहा है, यह जिज्ञासा बहुतों को है, लेकिन भीतर झाकने की हिम्मत किसीकी नहीं है। शायद अलक्ष्य रहने वाले विधाता पुरुष की भी नहीं, जो दुनिया के सब पाप-पुण्यों की माप-जोख कर उनका हिसाब रखते हैं।

---

१. बंगाल में आमिष भोजन सधवा स्त्रियों के लिए आवश्यक और शुभ है।

बासी विवाह जल्दी ही निपट गया। ठीक दोपहर को भोज का आयोजन था। सब उसी में व्यस्त थे। इधर कन्या का पता नहीं लग रहा था। झटपट उसे थोड़ा-बहुत खिला देना पड़ेगा। उसके बाद सजाना-संवारना, रोना-धोना, विदाई, लड़की को ससुराल पठाना हंसी-खेल नहीं होता।

उधर रसोईघर में घुसकर मंदिरा रसोई कर रही थी।

गिरिबाला ने मालती से कहा, "तू जा, धुएं-कालिख के बीच बैठी है, पकड़कर ले आ। मैंने पुकारा, मेरी बात सुनी ही नहीं। पकड़कर खींचने की तबीयत हो रही थी, रिश्तेदारों की मौजूदगी का खयाल करके चुप हो गई।"

मालती ने रसोई में पहुंचकर कहा, "तू यहां क्यों है, री?"

मंदिरा ने कहा, "समझ गई, मां ने भेजा है। शादी से पहले मां कहा करती थीं कि रसोईघर के धुएं-कालिख से बदन का रंग हांडी के पेंदे की तरह हो जायगा, कोई पसंद नहीं करेगा। पसंद-नापसंद की समस्या तो अब नहीं रही। मैं बिलकुल बेफिक्र हूं। अब कालिख पोतने या किसी अंग के आग से जल जाने पर भी क्या हर्ज होगा?"

"चल उठ", कहकर मालती ने उसका हाथ पकड़कर खींचा। फिर बोली, "सब नाते-रिश्तेदार इधर-उधर घूम रहे हैं, देखेंगे तो क्या कहेंगे? इतने लोग खायंगे, सबकी तो रसोई हो रही है। तू यहां अलहदा किसके लिए पकाने बैठी है?"

"मां के लिए।" मंदिरा रुंधे हुए गले से कहने लगी, "कल मैं रसोई बनाने नहीं आऊंगी, मां क्या खा रही हैं, नहीं खा रही हैं, नहीं देख सकूंगी। आज का दिन मुझे कर लेने दे! रसोई पूरी भी हो चुकी है, चावल उतारकर मां को खाने बैठा दूंगी। मैं भी मां के साथ खाऊंगी, आज मैं किसीकी नहीं सुनूंगी।"

गिरिबाला जिस घर में सोती हैं, उसी घर में भात-व्यंजन ले आई है। मां और बेटी खाने बैठी हैं। मालती दरवाजे पर खड़ी पहरा दे रही है जिससे न घर में कोई घुस सके, न ताक-झांक कर सके।

गिरिबाला ने कहा, "क्यों आज के दिन भी निरामिष खाना खाएगी।"

६/

मंदिरा अव ससुराल में है।

शशिमुखी से सलिल ने कहा, "मां, तुम्हें छोटी वहू का शौक चर्राया था, वह ला दी है मैंने। अव मेरी छुट्टी हो गई। मुझे और कुछ नहीं कह पाओगी।"

शशिमुखी वोलीं, "नहीं, तुझे नहीं कहूंगी। जो कुछ कहना होगा छोटी वहू को ही कहूंगी।'

उन्होंने कहा भी। साफ-साफ नहीं, भाव-भंगिमा से, आभास-इंगित से। उन्होंने कहा, "मर्द वौराया जानवर जैसा होता है, हमेशा उसकी रास को कड़ा रखना पड़ता है। ढील देते ही मुसीवत हो जाती है। इसपर कैंखाली के मित्र वंश के लोग होते ही वेहूदे हैं। मेरे वड़े लड़के अनिल को देखकर उनका अंदाजा न लगाना। वह सवसे अलग है, दैत्युकुल में प्रह्लाद जैसा। तुम्हारे ससुर की दो-एक वात वताती हूं, सुनो। धन-सम्पत्ति में तव उतार आ गया था, फिर भी रौवदाव पुराने जमाने जैसा ही था।"

मंदिरा ऐसा मुंह वनाये हुए है जैसे कोई मजेदार किस्सा सुन रही हो।

शशिमुखी कह रही हैं, "जवानी में कर्ता (मालिक) को आवारगी का रोग था। रौवीले आदमी थे, किसीकी परवा नहीं करते थे। उन्हें आखिर में मैंने केंचुआ जैसा एक निरीह जीव वना दिया था। एक दिन रात को पट्टीदारों के यहां से मुर्दा फूंकने का वुलावा आया। मेरी ओर देखकर उन्होंने पूछा, 'क्या कहती हो, जाऊं?' कैसे हुआ यह, वताओ तो?"

सास-ससुर के मामले में मंदिरा क्या कहती, चुपचाप सुनती रही। फिर शशिमुखी ने खुद ही कहना शुरू किया, "वन्दूक, तलवार, वल्लम, लाठी की मार चाहे जितनी क्यों न लगती हो, जवान की मार का मुकावला नहीं कर सकती। वुढ़ापे की वजह से मेरे गले से अव चीं-चीं की आवाज निकलती

हुए हाथ से आंचल थामकर आंखें पोंछती हुई बोली, "तरह-तरह की दिक्कतें सामने आयगी, बहुत अशान्ति और उपद्रव सहने पड़ेंगे। मजबूती से पतवार थामे तूफान को पार करना होगा। बेटी, मेरी साध की इस गिरस्ती को तुम बरबाद न होने देना।"

•

एक दिन सलिल ने कहा, "तुमसे छिपाकर नहीं रखना चाहता, बात का स्पष्ट हो जाना ही अच्छा है।"

निरीह भाव से मंदिरा ने कहा, "कुछ छिपा हुआ है?"

"है। वही बताना चाहता हूं।"

अत्यन्त उल्लसित होकर मदिरा बोली, "यह उचित भी है, नहीं तो अगर तुमने अपनी बात मुझे नहीं बताई, और मैंने अपनी बात तुम्हें नहीं बताई तो इससे जीवन में सुख-शान्ति नहीं मिलेगी।"

"सुख-शान्ति नहीं, कद्दू मिलेगा!" सलिल ने भौंहें चढ़ाकर गुस्से से कहा, "किसीके बाप की ताकत नहीं कि अशान्ति को रोके।"

"मुझे क्यों डरा रहे हो, जी? अपनी बात स्पष्ट बतला रहे हो, मेरी गलतियां माफ कर दोगे, विदाई के वक्त कह आये हो, इसके बाद भी अगर कुछ होता है, वह मेरी कमी की वजह से होगा। तुम देख लेना वह मैं नहीं होने दूंगी।"

सलिल ने अधैर्य से कहा, "पहले सुन तो लो न, सुन लोगी तो वह हंसी गायब हो जायगी।"

"तब सुनने की कोई जरूरत नहीं है। अगर मैं हंस नहीं पाऊंगी तो मर जाऊंगी।"

कुछ क्षण चुप रहकर भड़ाक से सलिल यकायक बोल उठा, "मेरा चाल-चलन अच्छा नहीं है।"

"चालाकी कर रहे हो, डरा रहे हो मुझे। मैं डरती नहीं हूं।"

अचानक जैसे कोई बात याद आ गई हो, आर्द्र स्वर में मदा ने कहा, "परीदेवी की बात बताना चाहते हो शायद?"

सलिल ने अचंभे में आकर कहा, "लगता है चिट्ठी अपनी जगह पहुंच गई थी।"

उमर के रोगी के बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता। फिर भी जबतक सांस, तबतक आशा। पर्याप्त इलाज और देखभाल करते रहना पड़ेगा, जिससे रोगी की दशा में और गिरावट न आये।

ओषधि, पथ्य इत्यादि के सेवन के विषय में आवश्यक निर्देश देकर डाक्टर चले गये। अनिल भी एक रविवार के दिन आकर मां को देखकर चले गये। मंदा वाकई बड़ी लगन से सास की सुश्रूषा कर रही है, रात-दिन लगी रहती है। जैसे वह इस घर की नई-नवेली दुलहिन नहीं है, न जाने कितने दिनों से इस गिरस्ती में रह रही है, द्विबाहु से वह अकस्मात् दश-बाहु बन गई है। देवव्रत को उसने कह दिया, "दादा अब मैं नहीं जा सकूंगी, ऐसी हालत में उन्हें किसके भरोसे छोड़ जाऊं तू ही बता। तू चला जा, दूर जाना है, उसके लिए कितनी तैयारी करनी है। यह रोग दो-एक दिन में ठीक होने वाला नहीं है। थोड़ा संभलने पर मैं खबर दूंगी, तुम लोगों के जाने से पहले मैं जरूर एक बार मिल आऊंगी।"

शशिमुखी बिस्तर पर जीवन्मृत दशा में पड़ी हैं। नई आंखों से बहू को देख रही हैं, 'बेटी' 'बेटी' तमाम दिन कहती रहती हैं। रूपवती देखकर इस लड़की को अपने घर लाई थीं। वह इतनी गुणवती निकलेगी, किसने सोचा था। इतने बड़े मकान को जैसे इस छोटे-से प्राणी ने अपने अस्तित्व से भर रक्खा है।

बीच-बीच में मंदिरा को पास बुलाकर कहती हैं, "इतने छटपटाने की क्या जरूरत है? बेटी, थोड़ी देर मेरे पास शान्त होकर बैठो।"

उसे आकर बैठना पड़ता है। एकटक वह उसके चेहरे की ओर देखती रहती हैं। किताब पढ़ने की तरह न जाने चेहरे पर क्या पढ़ती हैं। मंदा को पसीना छूटने लगता है। शशिमुखी कहती हैं, "हमारे जमाने में कम उमर में शादी हो जाया करती थी। शादी के बाद से आज पचास-पचपन साल के अरसे तक मैंने घर-गिरस्ती के अलावा और कुछ नहीं जाना। बुढ़ापे का मेरा यह कालरोग ठीक हो जायगा और मैं फिर चलने-फिरने लगूंगी, यह उम्मीद मैं कतई नहीं करती। यह गिरस्ती तुम्हारी ही है, अभी से देख-सुनकर सबकुछ समझबूझ लो।"

कहते-कहते उनकी गढ़ों में धंसी आंखों से पानी बहने लगा। कांपते

"क्यों नहीं ! निराजकाटी में रहती हैं वे, जहां तुम्हारा कोठले का हिस्सा है। गाने-बजाने में माहिर हैं। वे तुम्हें सितार बजाना सिखाती हैं।"

"जान-बूझकर भी तुम उसे देवी कह रही हो? 'वे-वे' कर रही हो?"

निरीह स्वर में मंदा ने कहा, "उमर में बड़ी हैं। फिर वे तुम्हारी गुरु हैं। इस तरह मेरी भी गुरु हुईं।"

बीच में ही टोककर सलिल ने कहा, "इस तरह की औरतों के पास जो लोग लगातार जाते हैं, वे सिर्फ बाजा बजा के ही नहीं लौटते—तुम इतना तो जरूर समझती हो। इसके बाद मुझे कुछ नहीं कहना है। सब जान-बूझकर आई हो, तो मेरी कोई जिम्मेदारी नहीं है। एक बात कहे देता हूं, तुम्हारी जब खुशी हो तलाक ले लेना, मैं प्रतिवाद नहीं करूंगा। मुझसे तुम खाने-पहनने के अलावा और कोई उम्मीद न रखना।"

"बस बस !" चेहरे पर प्रसन्नता लाकर मदिरा ने कहा, "जैसा जमाना आया है, खाने-पहनने की समस्या मिटना भी कम है क्या? तलाक मैं किसी हालत में नहीं लूंगी, मुझे इतनी मूर्ख न समझना।"

सचमुच वह ऐसी ही है। उसके मन में तिलभर मैल नहीं है। सास की सेवा-टहल कर रही है, दौड़ती-भागती हुई गिरस्ती की देखभाल कर रही है, हंस रही है, बातें कर रही है।

मंदा ने गिरिबाला को चिट्ठी लिखी है। सलिल बाहर जा रहा था। उसके पास डाक में डालने के लिए दे दी। लिफाफे पर पता अंग्रेजी में लिखा है। देखकर आंखें फैल गईं। पक्के हाथ की लिखावट है। बी० ए०, एम० ए० वालों के भी कान काट सकती है। नई बहू के हाथ की लिखावट देखकर दादा अनिल तक शर्मिन्दा हो जायेंगे। पोस्ट ऑफिस के बदले पोखरे के किनारे जाकर सलिल ने पानी लगाकर लिफाफा खोल डाला। चिट्ठी में क्या लिखा है, पति देवता की महिमा का कितना बखान है, देख लिया जाय। हे भगवान! यह तो ससाउल में घुनी तुलसी की पत्ती है। लिखा है :

"मां, बताओ तो अभी मैं कैसे चली आऊं! मेरी सास, जो मेरी नई मां है, बिस्तर पर पड़ी हैं। चल-फिर नहीं सकतीं। उनकी आंखें हमेशा मुझे ढूंढ़ती रहती हैं। अपने कामकाज को छोड़कर तुम्हारा दामाद भी सबे

मंदिरा की हंसी बढ़ जाती है। बोली, "देख लो तुम अब, सब जान-बूझकर भी चेहरे पर से हंसी नहीं गई। तुम हार गये।"

"शादी से पहले जानती थीं?"

मंदा हंसती रहती है और सिर डुलाती है, "हार हो गई तुम्हारी, हार, हार।"

सलिल ने कहा, "तो भी रिश्ता नहीं टूटा?"

मंदा ने विजयिनी की भंगिमा में कहा, "किसी और को पता चलता तब न टूटता रिश्ता! मैंने चिट्ठी गायब कर दी थी।"

"डर नहीं लगा?"

"मैं इतना नहीं डरती हूं। एक बार क्या हुआ कि जामरूल[1] के पेड़ के कोटर में मैनी के बच्चे थे। अरे, सुन ही लो न मेरी कहानी। बच्चा पकड़ने के लिए मैंने अन्दर हाथ डाला, ठंडा-ठंडा लगा। चिड़िया के बच्चे के लोभ में कोटर में सांप घुस गया था। मैंने उसे पूंछ पकड़कर बाहर खींचकर दूर फेंक दिया। चिल्लाई नहीं थी, न किसी को यह बात कही थी। पता लगने पर मां झोंटा पकड़कर खूब खबर लेतीं।"

सलिल सुन रहा है। चतुराई से खामोश हंसी-हंसते हुए मंदा बोली, "अरे, नया क्या कर रहे हो जो सबके सामने इसका ढिंढ़ोरा पीटूं? मेरे नानाजी ने दो शादियां की थीं। मैंने बचपन में देखा है कि मेरी दोनों नानियां दो सहोदरा बहनों की तरह रहती थीं।"

सलिल ने कहा, "उस जमाने में यह सब चल जाता था।"

"अब और ज्यादा चलना चाहिए। यह प्रगति का युग है। सब ओर प्रगति हो रही है, यह कमी मैं क्यों रहने दूंगी? तिस पर तुमने परीदेवी से शादी भी तो नहीं की है।"

मंदा खिलखिलाकर हंस पड़ी, "कानून भी बेढब है। जबतक कि मुझे तलाक नहीं दे देते। तबतक शादी कर भी नहीं सकते। वह भी आसान काम नहीं।"

नाराज होकर सलिल बोला, "देवी-देवी कर रही हो। जानती हो कौन है वह देवी?"

---

१. अमरूद जैसा सफेद रंग का एक फल।

"क्यों नहीं ! सिराजकाटी में रहती हैं वे, जहां तुम्हारा श्रोफ़ने का डिपो है। गाने-बजाने में माहिर हैं। वे तुम्हें सितार बजाना सिखाती हैं।"

"जान-बूझकर भी तुम उसे देवी कह रही हो? 'वे-वे' कर रही हो?"

निरीह स्वर में मंदा ने कहा, "उमर में बड़ी हैं। फिर वे तुम्हारी गुरु हैं। इस तरह मेरी भी गुरु हुई।"

बीच में ही टोककर सलिल ने कहा, "इस तरह की औरतों के पास जो लोग लगातार जाते हैं, वे सिर्फ बाजा बजा के ही नहीं लौटते—तुम इतना तो जरूर समझती हो। इसके बाद मुझे कुछ नहीं कहना है। सब जान-बूझकर आई हो, तो मेरी कोई जिम्मेदारी नहीं है। एक बात कहे देता हूं, तुम्हारी जब खुशी हो तलाक ले लेना, मैं प्रतिवाद नहीं करूंगा। मुझसे तुम खाने-पहनने के अलावा और कोई उम्मीद न रखना।"

"बस बस !" चेहरे पर प्रसन्नता लाकर मंदिरा ने कहा, "जैसा जमाना आया है, खाने-पहनने की समस्या मिटना भी कम है क्या ? तलाक मैं किसी हालत में नहीं लूंगी, मुझे इतनी मूर्ख न समझना।"

सचमुच वह ऐसी ही है। उसके मन में तिलभर मैल नहीं है। सास की सेवा-टहल कर रही है, दौड़ती-भागती हुई गिरस्ती की देखभाल कर रही है, हंस रही है, बातें कर रही है।

मंदा ने गिरिबाला को चिट्ठी लिखी है। सलिल बाहर जा रहा था। उसके पास डाक में डालने के लिए दे दी। लिफाफे पर पता अंग्रेजी में लिखा है। देखकर आंखें फैल गईं। पक्के हाथ की लिखावट है। बी० ए०, एम० ए० वालों के भी कान काट सकती है। नई बहू के हाथ की लिखावट देखकर दादा अनिल तक शर्मिन्दा हो जायंगे। पोस्ट ऑफिस के बदले पोखरे के किनारे जाकर सलिल ने पानी लगाकर लिफाफा खोल डाला। चिट्ठी में क्या लिखा है, पति देवता की महिमा का कितना बखान है, देख लिया जाय। हे भगवान! यह तो गंगाजल में धुली तुलसी की पत्ती है। लिखा है :

"मां, बताओ तो अभी मैं कैसे चली आऊं ! मेरी सास, जो मेरी नई मां हैं, बिस्तर पर पड़ी हैं। चल-फिर नहीं सकतीं। उनकी आंखें हमेशा मुझे ढूंढ़ती रहती हैं। अपने कामकाज को छोड़कर तुम्हारा दामाद भी सबे

समय से घर बैठा है। इनकी हालत थोड़ा संभलने पर दो-चार दिन के लिए चली आऊंगी। अधीर न बनो मां, तुम लोगों के सुंदरनगर जाने से पहले मैं जरूर आऊंगी। तुम्हारा दामाद भी आयगा।"

ऐसी ही सब बातें लिखी हैं, सलिल की आंखों के आगे अंधेरा हो गया। जल्दी से चिट्ठी को लिफाफे में डाल दिया। पूरे पृष्ठ पर जैसे अपने सुडौल अक्षरों से उसने मोती जड़ दिये हैं, चिट्ठी को लिफाफे के अंदर रखकर आंखों से ओझल करके जैसे उसकी जान-में-जान आई। साड़ी पहनी हुई छद्मवेशी महामहोपाध्याय को वह बहू बनाकर घर ले आया है, इस चिन्ता से उसका दिल धड़कने लगा।

एक दिन सलिल ने ही खुद कहा, "दसघरा से चिट्ठी-पर-चिट्ठी आ रही है। देवूबाबू आकर लौट गए, तो भी तुम हिलने का नाम नहीं ले रही हो? मां की बीमारी जल्दी ठीक होने वाली नहीं है। ठीक हो जायगी, डाक्टर यह भी तो नहीं बता रहे हैं।"

मंदा ने कहा, "तुम भी तो नहीं हिल रहे हो।"

सलिल ने अचंभे में आकर कहा, "क्या मुझे तुम सिराजकाटी जाने को कह रही हो?"

"तुमने इतना अच्छा कारोबार जमा रक्खा है, अगर नहीं जाओगे तो सब बरबाद हो जायगा न।"

मंदा थोड़ा मुस्कराई। बोली, "मेरी भी तो बदनामी होगी। लोग कहेंगे कि दुलहे को मेमना बनाकर बहू ने आंगन के कोने में बांध रक्खा है।"

इस हिंसाद्वेष-रहित परमहंस ठकुराइन की थाह नहीं मिलती। वहां परीबाला रहती है, यह जानते हुए भी सिराजकाटी जाने को कह रही है।

बीच में मंदा एक दूसरी बात ले आई, "विदा के समय तुमने कहा था कि मेरी त्रुटियों को तुम क्षमा कर दोगे।"

सलिल हंस पड़ा, "नई दुलहिन को सब 'धन्य', 'धन्य' कर रहे हैं। अगर तुममें कोई दोष-त्रुटि हों तो दो-चार मुझे बता दो, जिससे मुझे थोड़ा भरोसा हो जाय कि तुम मनुष्य हो, देवता नहीं।"

मंदा ने कहा, "मैं संगीत के मामले में बिलकुल अनाड़ी हूं। छोटी

उमर में कुछ दिन मुझे गाना सिखाने की कोशिश हुई, सा-रे-गा-मा-पा-धा करने पर पड़ोसी 'गधी' 'गधी' कह उठते थे। कहते थे, गधी रेंक रही है। अब फिर नये सिरे से तुमसे सीखना शुरू करूंगी। तुम इतने गुणी हो, और मैं कुछ नहीं जानती, हमारे बीच में एक खाई-सी आ गई है, तुम्हारे करीब नहीं आ पा रही हूं।"

सलिल बोला, "और तुम जो अंग्रेजी, 'बंगला का इतना ज्ञान हासिल किये बैठी हो, इससे यह कमी दूर नहीं हो जाती ?"

"खाक ज्ञान है मेरा !" मंदिरा ने होंठ उलटकर कहा।

"कितने दिन आंखों में धूल झोंकती रहोगी ?"

पुरानी अलमारी की दराज में से तीन-चार पुस्तकें उठाकर सलिल ने उसके सामने रख दीं। कहा, "यह सब क्या है, बताओ तो ? जब दादा यहां रहते थे ये पुस्तकें तब की हैं। वकालत करने दादा सदर चले गये, तब से आठ साल तक इन्हें कीड़ों के अलावा और किसीने नहीं छुआ। इतने दिन बाद ये मेरे कमरे में कैसे आ पहुंचीं, किताबों के क्या पैर निकल आए हैं ?"

१०/

सलिल ने तड़ाक से उठकर उसका हाथ पकड़ लिया। दुनिया में इतनी अजीब बात भी हो जाती है। अभी पांच नहीं बजे हैं, आसमान में तारे चमक रहे हैं। इतनी जल्दी सवेरे सलिल उठ सकता है, उठकर आंखें खोल-कर बैठ सकता है! शादी के बाद इतनी जल्दी आदत बदल गई, लोग यही कहेंगे।

हाथ मजबूती से पकड़ रक्खा है, शरीर में दैत्य जैसा बल है। मर्द को ऐसा ही होना चाहिए।

मंदा की आंखों में पानी आ गया, दबाने से कहीं कलाई न टूट जाय। बोली, "छोड़ो।"

सलिल गरज रहा है, "हर रोज चरका दे जाती हो, रोज सवेरे पैरों में गुदगुदी होती थी। लगता था पैरों पर केंचुए की तरह कुछ रेंग रहा है। सोचता था कि आखें खोलकर देखूं कि क्या है। लेकिन आलस के मारे आंखें नहीं खोल पाता था।"

मंदा विनती करती है, "हाथ छोड़ो। सचमुच दुःख रहा है।"

"कहीं नहीं छुओगी?"

"नहीं।"

जैसे ही सलिल ने उसका हाथ छोड़ा, मंदा कई हाथ पीछे जाकर सिर को डुलाते हुए बोली, "छुऊंगी, छुऊंगी, छुऊंगी, नहीं तो कोढ़ी होकर मरूंगी क्या?"

"कोढ़ी क्यों होओगी?"

"पाप से, महापाप से।"

मंदा चुपचाप मुस्कराती रहती है। कहती है, "मैं नींद में भी साव-धान रहती हूं। तो भी हो सकता है, एकाध बार गुरुजन के शरीर से पैर छू जाय। पैरों पर सिर छुआकर उसी पाप का प्रायश्चित्त कर जाती हूं।"

"कुछ दिन साथ रहो, बखूबी समझ जाओगी, मैं कैसा गुरुजन हूं। घर के सब लोग समझ गए हैं, दादा का छोटा लड़का रजन तक। विजयादशमी के दिन मदेश[1] के जोड़े देने का वादा करके भी उससे प्रणाम नहीं करा पाता।"

कहते-कहते सलिल आग-बबूला हो उठता है। कहता है, "मैं जैसा हूं, हूं। निंदा, गाली-गलौज वगैरा एक कान से अंदर आकर दूसरे कान से बाहर निकल जाता है। लेकिन पैरों पर सिर रखकर भक्ति-प्रदर्शन असह्य है। कब गुस्से में क्या कर बैठूं, ठीक नहीं। धीरे-से हाथ पकड़ा था, उसी में चीं-चीं करने लगी, भरपूर थप्पड़ पड़ गया तो हड्डियां चूर-चूर हो जायेंगी। इस बात का ख्याल रखना।"

सलिल सोया नहीं, फिर बाहर चला गया। बाद में पता लगा कि जनानी ड्योढ़ी के बाहर एक बेंच पर पड़ा सो रहा है। काफी देर सो लेने के बाद बिना किसीको कुछ कहे-सुने, साइकिल पर सवार होकर चला गया। फिर लौटा नहीं, न दोपहर को, न रात को, उसके बाद वाले दिन भी नहीं।

गड़बड़ी होने पर भंवल की जरूरत पड़ती है। इन दिनों मित्र-परिवार में यही नियम चल पड़ा है। शशिमुखी की बीमारी में वह डिपो के काम-काज को छोड़कर फैजाली चला आया है। यहां इलाज और दौड़धूप में लगा है। घर के काम के लिए है नई बहू मंदिरा, बाहर के काम के लिए भंवल। इस बात के लिए भी शशिमुखी ने उसे बुलवाया, "जा बेटा, पकड़ ला उसे। बेचारी बहू को कैसा लग रहा होगा, बता तो।"

कहां जाना पड़ेगा, बताने की जरूरत नहीं, और अगर कोई उसे पकड़कर ला सकता है, तो केवल भंवल ही।

वह सिराजकाटी जा पहुंचा। ऐन दोपहर के वक्त, नहाने-खाने के लिए अब सलिल डेरे पर मौजूद है। भंवल ने कहा, "भाग आया, लड़ाई-झगड़ा हुआ था क्या?"

"तब तो गनीमत होती। मैं भी जवाब में दो बातें कह सकता था।

---

१. बताशे मिठाई।

१०/

सलिल ने तड़ाक से उठकर उसका हाथ पकड़ लिया। दुनिया में इतनी अजीव वात भी हो जाती है। अभी पांच नहीं वजे हैं, आसमान में तारे चमक रहे हैं। इतनी जल्दी सवेरे सलिल उठ सकता है, उठकर आंखें खोल-कर वैठ सकता है! शादी के वाद इतनी जल्दी आदत वदल गई, लोग यही कहेंगे।

हाथ मजवूती से पकड़ रक्खा है, शरीर में दैत्य जैसा वल है। मर्द को ऐसा ही होना चाहिए।

मंदा की आंखों में पानी आ गया, दवाने से कहीं कलाई न टूट जाय। वोली, "छोड़ो।"

सलिल गरज रहा है, "हर रोज चरका दे जाती हो, रोज सवेरे पैरों में गुदगुदी होती थी। लगता था पैरों पर केंचुए की तरह कुछ रेंग रहा है। सोचता था कि आखें खोलकर देखूं कि क्या है। लेकिन आलस के मारे आंखें नहीं खोल पाता था।"

मंदा विनती करती है, "हाथ छोड़ो। सचमुच दुःख रहा है।"

"कहीं नहीं छुओगी?"

"नहीं।"

जैसे ही सलिल ने उसका हाथ छोड़ा, मंदा कई हाथ पीछे जाकर सिर को डुलाते हुए वोली, "छुऊंगी, छुऊंगी, छुऊंगी, नहीं तो कोढ़ी होकर मरूंगी क्या?"

"कोढ़ी क्यों होओगी?"

"पाप से, महापाप से।"

मंदा चुपचाप मुस्कराती रहती है। कहती है, "मैं नींद में भी साव-धान रहती हूं। तो भी हो सकता है, एकाध वार गुरुजन के शरीर से पैर छू जाय। पैरों पर सिर छुआकर उसी पाप का प्रायश्चित्त कर जाती हूं।"

"कुछ दिन साथ रहो, बख़ूबी समझ जाओगी, मैं कैसा गुरुजन हूं। घर के सब लोग समझ गए हैं, दादा का छोटा लड़का रंजन तक। विजयादशमी के दिन सदेश[1] के जोड़े देने का वादा करके भी उससे प्रणाम नहीं करा पाता।"

कहते-कहते सलिल आग-बबूला हो उठता है। कहता है, "मैं जैसा हूं, हूं। निंदा, गाली-गलौज वग़ैरा एक कान से अंदर आकर दूसरे कान से बाहर निकल जाता है। लेकिन पैरों पर सिर रखकर भक्ति-प्रदर्शन असह्य है। कब गुस्से में क्या कर बैठूं, ठीक नहीं। धीरे-से हाथ पकड़ा था, उसी में चीं-चीं करने लगी, भरपूर थप्पड़ पड़ गया तो हड्डियां चूर-चूर हो जायंगी। इस बात का ख्याल रखना।"

सलिल सोया नहीं, फिर बाहर चला गया। बाद में पता लगा कि जनानी ड्योढ़ी के बाहर एक बेंच पर पड़ा सो रहा है। काफ़ी देर सो लेने के बाद बिना किसीको कुछ कहे-सुने, साइकिल पर सवार होकर [illegible] गया। फिर लौटा नहीं, न दोपहर को, न रात को, उसके बाद [illegible] भी नहीं।

गड़बड़ी होने पर मंगल की ज़रूरत पड़ती है। इन दिनों [illegible] में यही नियम चल पड़ा है। शशिमुखी की बीमारी में वह [illegible] काज को छोड़कर कैआली चला आया है। यहां इनार [illegible] लगा है। घर के काम के लिए है नई बहू मंदिरा, [illegible] मंगल। इस बात के लिए भी शशिमुखी ने उसे बुल[illegible] सा उसे। बेचारी बहू को कैसा लग रहा होगा, [illegible]

कहां जाना पड़ेगा, बताने की ज़रूरत नहीं [illegible] पकड़कर ला सकता है, तो केवल मंगल ही।

वह सिरामकाटी जा पहुंचा। [illegible] लिए अब सलिल डेरे पर मौजूद है। [illegible] झगड़ा हुआ था क्या?"

"तब तो गनीमत होती। [illegible]

---

1. बंगाली मिठाई।

यह सही रास्ता है, मुझे कुछ भी अजीव न लगता। यह तो नहीं, भोर के समय उठकर पैरों पर माथा टेकती है ! वाप रे वाप, आदमी नहीं रहने देगी, मुझे देवता-गुंसाई वनाकर ही छोड़ेगी !"

भंवल ने कहा, "घर चल।"

नाराजी के साथ सलिल ने कहा, "शादी-शादी हल्ला मचा रक्खा था, वह खत्म हो गया। तू घर पर है ही। मैं भी अगर घर पर ही पड़ा रहूं तो इधर कारोवार वरवाद हो जायगा।"

भंवल ने कहा, "मौसीजी को अपनी वीमारी सहन हो गई है, यहां गंज में मैं रहूंगा। घर में नई दुलहिन अकेली है, उसे इस तरह छोड़कर नहीं आना चाहिए।"

"पूरा महीना तो गुजर गया। दुलहिन और कवतक नई वनी रहेगी, वता तो ?"

भंवल ने कहा, "जवतक कम-से-कम एक वार फिर मैके न हो आवे।"

सलिल वोला, "सारी उमर अगर मैके न जाय, कैखाली में ही खूंटी से वंधी पड़ी रहे, वुढ़िया होकर भी क्या नई दुलहिन वनी रहेगी ? और मुझे दुलहिन की खवरदारी के लिए घर रहना पड़ेगा ?"

"वह मैके कैसे जाये ? अकेले ससुराल से फट् से निकलकर जा भी तो नहीं सकती। भाई लौट गया, तू साथ लेकर चला जा। पहली वार इकट्ठे जाने का रिवाज है, इस रस्म को जाकर पूरी कर आ।"

सलिल विदक उठा, "अरे वावा ! मेरी नेकनामी छिपी नहीं है, हाथ के पास पाते ही मरम्मत कर देंगे। दादा तो भाई को आसमान पर चढ़ा आये थे। अव वे तो मिलेंगे नहीं, अकेले पाकर मुझ पर ही अपने गुव्वार निकालेंगे। उस फजीहत में नहीं पड़ूंगा, वावा।"

उसे किसी तरह नहीं लौटाया जा सका। भंवल अकेला लौट आया।

•

गंज का हाट खूव जम उठा है। यहां विकने के लिए वहुत सारा धान, चावल, गुड़, तमाखू आता है, मछलियां भी। दूर-दूर से व्यापारी और खरीदार आकर इकट्ठे होते है। नावों से घाट पट जाता है, पानी नहीं दिखलाई पड़ता।

सवेरे शुरू होता है, तमाम दिन चलता है, सन्ध्या के समय खत्म हो जाता है।

हाट से आगे जाकर गावतला घाट है। घाट के दक्षिण की ओर थाना, उप-कुलसचिव का दफ्तर वगैरा और अनन्त डाक्टर का दवाखाना है। पश्चिम की ओर कसबियों का मुहल्ला है। हाट के दिन इस मुहल्ले में भी चहल-पहल बढ़ जाती है। ठीक दोपहर को घुंघरुओं की आवाज सुनाई पड़ेगी, साथ में बेसुरा गायन। हाट खत्म हो जाता है, उसके बाद भी बहुत रात गये तक इस मुहल्ले में हो-हल्ला मचता रहता है।

एक हाट के दिन, सन्ध्या के समय जब हाट समाप्त होने को था तब, मदिरा और भवल गावतला घाट पर नाव से उतरे और अनन्त डाक्टर के दवाखाने में घुस गए। हाट का दिन होने की वजह से रोगियों की बहुत भीड़ थी। ज्यादा बातचीत नहीं हो पाई। डाक्टर ने रक्तचाप मापने का यन्त्र खरीदने को कहा, वे ही इसके इस्तेमाल का तरीका मदिरा को समझा देंगे। रोग जब बढ़ नहीं रहा है, तो फिलहाल पुरानी व्यवस्था ही चलती रहेगी।

मामूली दो-एक बातों में ही डाक्टर का निर्देश पूरा हो गया। रास्ते में आकर भवल ने कहा, "इतनी-सी तो बात थी। यह क्या मैं नहीं कर सकता था? इसके लिए आप, एक गृहवधू को, इतनी दूर आने की क्या जरूरत थी?"

मदिरा बोली, "आज भीड़ होने की वजह से हमारी ओर डाक्टर साहब ध्यान नहीं दे पाए, अब कभी हाट के दिन नहीं आना होगा। नहीं तो जिरह का जवाब देते-देते उनकी जान निकल जाती। गरम मिजाज वाले आदमी हैं, थोड़ा इधर-उधर होने पर ही नाराज हो जाते।"

घाट के पास आकर मदिरा चलती-चलती रुक गई। भवल ने कहा, "क्या हुआ, भाभी?"

"बड़ा अच्छा गा रही है। कितना मीठा गला है।"

भवल बोला, "खराब मुहल्ला है—वही जिसके बारे में आपने सुन रखा है। यह क्या, किधर चल पड़ीं?"

"गाना सुन आऊं। ज्वार के आने में तो अभी देर है।"

मंदिरा पश्चिम की ओर मुड़ गई।

"यह क्या कर रही हैं! यह क्या कर रही हैं!" कहकर भंवल रास्ता रोककर खड़ा हो जाता है, "वहां छोटे दादा आदि भी हो सकते हैं।"

मंदा ने निश्चिन्त स्वर में कहा, "ठीक तो है। मुलाकात हो जायगी। आप न आइये देवरजी, नाव में बैठे रहिये।"

"अकेली जायंगी?"

"आपको देखने पर उनका सारा गुस्सा आप ही पर निकलेगा, आप ही जैसे मुझे वहां ले गए हैं, जबकि इसमें आपका कोई कसूर नहीं है। पूछने पर सारा दोष मेरा ही बताइये, जो सच भी है। कुछ भी छिपाने की जरूरत नहीं।"

हाट से लौटते हुए लोगों ने देखा कि एक अकेली स्त्री शाल से तमाम बदन ढके, लंबा घूंघट काढ़े झट् से उस मुहल्ले में घुस गई। कैसा चेहरा है, कितनी उमर है, ताक-झांक करके भी नहीं जाना जा सकता। सबने सोचा, नया लाया गया माल है, नहीं तो इस तरह छिपकर जाने की कोई जरूरत नहीं थी।

उत्तेजनावश मंदा ने पहले परिस्थिति को समझा नहीं था, मुहल्ले के अंदर आकर स्तंभित होकर खड़ी हो गई। जब एक बार आ गई है, लौटेगी तो नहीं। यहां सब बड़े और छोटे घर फूस के छप्पर वाले हैं। मुहल्ले और खासतौर से उस घर का वर्णन भंवल से वह पहले ही सुन चुकी है। आंगन में चकोतरे का पेड़ है। हां, वे डालियां नजर आ रही हैं, चकोतरे लगे हैं।

सटे हुए चार घर हैं। उनमें से किसी-किसी ने थोड़ा झांककर देखा। आज के विशेष दिन सब अपने ग्राहकों को लेकर व्यस्त हैं, आज अगर हाटवार न होता तो पास आकर बातचीत करतीं।

गाना हो रहा है, तबले पर संगत की जा रही है। सम के करीब आते ही 'वाह-वाह' आवाज उठी। अच्छा गाना है, बड़ी सुरीली आवाज है। भिड़े हुए दरवाजे को ठेलकर मंदिरा अंदर चली गई। फर्श पर दरी बिछी है, महफिल जमी है। जैसे जाना मुहल्ला है, पहचाना घर है, घर के उन आदमियों से भी जान-पहचान है। वह बैठ गई, लंबा घूंघट तब भी कढ़ा

था। सब सोच रहे थे—यहीं की कोई होगी। दुलहिन का स्वांग भरकर कौतुक कर रही है।

परीबाला दरी पर बैठी हारमोनियम बजाकर चेहरे को थोड़ा तिरछा किये गा रही है, सामने बैठा नलिन संगत कर रहा है। एक नववधू को देखकर परीबाला रुक गयी। नलिन मगन होकर बजा रहा था, रस में भंग पड़ जाने पर उसने चिढ़कर सिर घुमाया। देखकर उसका चेहरा तत्क्षण फक पड़ गया। दोनों हाथ तबले पर निश्चल हो गए। नलिन की हालत देखकर अंदाज से परी ने मामला कुछ-कुछ समझ लिया था, उसकी छाती धड़क रही थी। अंदर बैठे सब लोग एकटक आगन्तुक की ओर देख रहे थे। कौन जाने अभी कौन सी अनहोनी घटना घट जाय!

पर हुआ बिलकुल उलटा ही। इतने नामी-गिरामी घर की बहू ने "क्या करती हैं, क्या करती हैं" कहती परीबाला के पैरों पर झुककर प्रणाम किया।

फौरन दो पग पीछे हटकर परीबाला बोली, "यह क्या किया, बताइये तो?"

मंदा बोली, "आप मेरी बड़ी दीदी हैं न!"

जो लोग महफिल में आये थे, सबकी ओर मदिरा निम्नकोण दृष्टि से देखने लगी। नलिन की ओर भी। नलिन की आँखें चमक रही थीं। परी घबरा गई। नलिन का मिजाज जानती है, कहीं बेचारी पर संकट न पड़े। थाने के लोग ताक लगाये बैठे हैं, तिल का ताड़ बनाकर रुपये ऐंठने की जुगत भिड़ायेंगे। हाथ जोड़कर सबसे बोली, "आज अब कुछ और नहीं हो पायेगा समझ ही रहे हैं। लिहाजा तशरीफ ले जाइये।"

एक-दो ने एतराज किया, "बीच महफिल से तशरीफ ले जायें? शुरू में यह क्यों नहीं बताया था?"

परी बोली, "तब मुझे पता थोड़े ही था कि बहन आ जायगी। महफिल खराब होने या मेरे-नजराने के आने का भी थोड़ा ख्याल नहीं करेंगे सब आप लोग मेरे कैसे शौक़ हैं। उठिये, देर न लगाइए। पान ही और भी ना है, वहीं चले जाइये।"

एक-दो करके सब निकल गए। सिर्फ नलिन और मंदा रह गए।

परी ने मंदा से कहा, "आपने यकायक आकर मेरी जमी हुई महफिल में खलल डाल दिया। दोस्त-प्रेमी सब नाराज होकर चले गए। हाटवार के दिन आज मेरा बहुत नुकसान हो गया।"

सलिल अन्दर-ही-अन्दर भभक रहा था, वहां बाहरी लोग थे, तभी चुप था। अब गरज उठा, "उसका जो नुकसान हुआ है, उसे पूरा कर दो, इसीमें तुम्हारी खैर है। यहां तक धावा बोलकर चली आईं, तुम्हारी इतनी हिम्मत हो गई!"

मंदिरा ने कातर दृष्टि से उसकी ओर इस तरह देखा, जैसेकि उसकी समझ में कुछ भी न आ रहा हो। बोली, "बहन के घर बहन आई है, तुम इस तरह आंखें लाल-पीली क्यों कर रहे हो?"

दूसरे घरों की कुछ औरतें आंगन में इकट्ठा हो गई हैं। दो-चार मर्द भी। इसी बीच यह खबर चारों ओर फैल गई कि एक गृहस्थ बहू ने अपने कमीने पति को परीवाला के घर में घुसकर रंगे हाथों पकड़ लिया है।

लोगों की भीड़ देखकर सलिल पिछवाड़े के दरवाजे से झटपट बाहर निकलकर गायब हो गया।

मंदिरा हंस रही है। इतना सब होने के बावजूद उसके स्वभाव में कोई अंतर नहीं आया। उंगली से अंगूठी खोल दी। बोली, "मैंने जरूर कसूर किया है। लेकिन दीदी कसूर आपका भी है। ऐसी मीठी तान क्यों छेड़ी थी? डाक्टर साहब के दवाखाने से लौट रही थी। पर बजाय नाव की ओर जाने के, गाने से खिचकर मैं यहां चली आई।"

उसने परीवाला का हाथ अपने हाथ में लेकर उंगली में अंगूठी पहना दी। फिर, हाथ को घुमा-घुमाकर देखकर कहा, "कैसी अच्छी लग रही है।"

खुले दरवाजे में से आंगन के लोग ताकझांक कर रहे हैं। कई साल पहले, एक बार और ऐसी ही घटना हुई थी। उस बार बड़ा दिलचस्प वाकया हुआ था। उस दृश्य को देखने बड़ी संख्या में हाट के लोग जमा हो गये थे। पति स्त्री के झोंटे को पकड़कर घूंसे पर घूंसा जमाये जा रहा था। स्त्री भी कम नहीं थी, आंगन से झाड़ू उठाकर भरसक पति देवता की मरम्मत कर रही थी। थाने से सिपाही ने आकर अन्त में पति-पत्नी को आलिंगन-मुक्त किया। इसे लोग जी भरकर देख रहे थे। और इस बार

देखो, टांय-टांय फिस्। जोर की आवाज तक नहीं आ रही है, जैसे कोई महान कार्य कर दिया हो, तभी आगन्तुक महिला ने बतौर इनाम के अपनी अगूठी खोलकर परीवाला को पहना दी। भला इसे देखने आता है कोई। धत्!

सलिल काफी वक्त बाहर गुजारकर आया। बोला, "ज्वार आया। क्यों, घर लौटोगी या यही एक डेरा लेकर रह जाओगी?"

परी का बदन दबाकर मदिरा बोली, "दीदी, बात का ढंग सुन रही हैं।"

फिर मुस्कराकर सलिल की बात का जवाब दिया, "अगर तुम रहोगे तो मैं भी रहूगी। राम के साथ सीता जगल मे जाकर रही थी। यह तो जंगल नहीं है, आदमियों की बस्ती है।"

फिर जोर डालकर कहा, "जहा तुम, वही मैं।"

दोनों बाहर निकल रहे थे, परीवाला ने पीछे से पुकारकर कहा, "सुनो, सलिल बाबू, झोंक मे चली आई है, फिर कभी नही आयगी। तुम उसे कुछ कहना मत।"

सिर हिलाकर मदिरा ने घोर प्रतिवाद किया, "आऊगी, बहन के घर क्यो नही आऊगी? सौ बार आऊगी, हजार बार आऊगी।"

रुककर सलिल ने तीखी आवाज मे परी से कहा, "तुम्हारा अन्न छीनने आई है, ऊपर से दरद दिखा रही है।"

परीवाला बोली, "प्रभु का जिसका जितना दाना-पानी बदा है, वह उसे जरूर मिलेगा, उसे कोई नही छीन सकता। लेकिन खयाल रखना, आज की कोई बात बाहर न निकले।"

इस बात को छिपाने की ज्यादा गरज सलिल को ही थी। लेकिन वह पकड़ मे क्यो आने लगा? बोला, "मैं तो मनमौजी बेह्या हू, किसी की परवा नही करता। ढिंढोरा पीटकर कहना फिरूगा कि पर की बहू कम-बियो के मुहल्ले की महफिल मे चली आई थी।"

मदा ने भी तेज-तर्रार जवाब दिया, "पीटना ढिंढोरा, मैं [illegible] तुम्हारी मौजूदगी में किसी बात मे बुराई नहीं। सती नारी [illegible] संग, लोग निंदा न करके 'धन्य, धन्य' करेंगे।"

बातें करते-करते वे दरिया के किनारे आ गए थे। चेहरे को वेजार बनाकर सलिल बोला, "यह तो मैं सती नारी के फंदे में अच्छा फंस गया! लगता है, हमेशा जोंक की तरह वदन से लिपटी रहेगी।"

मंदा नाटकीय भंगिमा में बोल उठी, "दिवस-निशीथ में, शयन-स्वप्न मैं तुम्हारी ही हूं।"

सलिल ने जोर से सांस भरी, "मरे विना छुटकारा नहीं!"

मंदा ने कहा, "सती के हाथ से मरकर भी छुटकारा नहीं मिलता। सत्यवान मर गये थे, तो भी क्या उन्हें निजात मिली? सती सावित्री यमालय तक जाकर उन्हें शीघ्र ही फिर मर्त्य लोक में खींच लाई।"

दोनों चुपचाप चल रहे हैं। यकायक सलिल बोल उठा, "तुम्हें घृणा नहीं आती? मैं अगर तुम्हारी जगह होता तो ऐसे कलमुंहे मर्द की शक्ल तक न देखता।"

"मेरी वड़ी दीदी, मंझली दीदी ऐसे ही मिजाज की हैं, तभी उन्हें जिन्दगी में चैन नहीं मिला। देखो, कमी किसमें नहीं है। जो चांद आसमान में है, उसमें भी कलंक है। गुस्सा आने पर अपना विचार करने बैठती हूं। मुझमें भी तो वहुत-सी कमियां हैं, ढक रक्खा है, तभी जाहिर नहीं हो पातीं। तुम बमभोला हो। मन-वचन में भेद नहीं। सवकुछ प्रकट हो जाता है। तुम भी मुखौटा पहनकर और लोगों की तरह वन जाओ न।"

"वस, इतना-सा ही?"

"यह क्या कुछ कम हुआ?"

डोंगी के पास आकर मंदा ने जोर से भंवल को पुकारा, "किसे पकड़ लाई हूं, थोड़ा वाहर आकर देखिये। आप तो मुंहकी खाकर अकेले लौट गये थे।"

वह आखें गोल-मटोल करके सलिल की ओर देखती है, "नजर डालकर भस्म कर दोगे क्या? देवरजी का क्या कसूर है?"

भंवल ने सफाई देने की गरज से कहा, "डाक्टर वावू के यहां आने के लिए डोंगी घाट पर ला रक्खी थी, तैयार होकर आकर देखा कि वहू दीदी पहले से उसमें वैठी हैं। मैंने मना किया तो कहा कि अकेले चली जायंगी। क्या करता, मुझे भी चढ़ना पड़ा।"

मंदिरा 'ही-ही' करके हंसने लगी।

सलिल ने कहा, "माँ की पूजा-पूजा की बलिहारी है। घर की बहू को उन्होंने हाट-बाट में जाने दिया।"

बड़े हाव-भाव के साथ मंदा ने अपनी बहादुरी के [illegible] बखान करना शुरू किया, "मैंने कहा कि डाक्टर बाबू बड़ा ज़ोर देकर सब बातें पूछते हैं। मैं जितना जानती हूं, उतना तो देवर भी नहीं जानते, पूरी बात न बता पाने की वजह से शायद बीमारी की गलत दवा दे बैठें।" सुनकर माँ ने फौरन कहा, "तब बहू, तुम भी चली जाओ।"

डिपो के किसी खास काम में [illegible] नहीं [illegible] गया। [illegible] सलिल के मन में थोड़ी देर पहले की घटनाओं का आलोड़न होने लगा। सलिल ने रुखाई के साथ कहा, "एक सामान्य औरत का [illegible] उसको प्रणाम कर आई हो, लेकिन यह जान लो कि इससे कोई फायदा नहीं होगा।"

चेहरे को मलिन बनाकर मंदा ने कहा, "[illegible] मैं कर ही गुजरती हूं, [illegible] है। [illegible] हूं, सिर्फ तुम्हीं से हार रही हूं। सुनो, मुझे [illegible] पड़ेगा।"

कहकर कातरभाव से उसने उसकी ओर देखा। सलिल ने कहा, "मेरी करनी अब किसी से छिपी नहीं है, मुझे सामने देखकर निंदा और बढ़ जायगी। इससे मां की उद्विग्नता घटने के बजाय बढ़ेगी ही।"

मंदिरा सचमुच नाराज हो गई, "देखो, निंदा करना कोई अच्छी बात नहीं। आत्मनिंदा भी बुरी है। तुमसे मैंने सौ बार कहा कि और लोग जैसे भले बनने का अभिनय करते हैं, तुम भी वैसा ही करो।"

"यह मुझसे नहीं होता।"

"लेकिन अभिनय करने में तुमने कितना नाम कमाया है! भंवल ठाकुरपो इसीके किस्से सुनाते रहते हैं।"

सलिल ने कहा, "वह तो नाट्य-समिति में।"

झट से मंदा ने सलिल का हाथ थाम लिया, "चलो न, दसघरा में हम-लोग नाटक कर आयें कुछ दिन। जितनी जल्दी हो सकेगा, लौट आयंगे। घर का हाल सुनकर सब अचंभा कर रहे हैं, अबकी वर को देखेंगे। मेरी किस्मत और तीन बहनों की तरह नहीं है, इस बात को मां-भाई-बहन जान लें। इसके बाद तो वे कितनी दूर चले जा रहे हैं, फिर कब मिलना होगा, कोई ठिकाना नहीं।"

हाथ छोड़कर मंदा पैर पकड़ने लगती है।

आगामी मंगलवार को वे आ रहे हैं। दमपरा से चिट्ठी आ गया है। स्टेशन पर पालकी रहेगी।

दो-चार दिन के लिए ही यहाँ मदा सलिल को साथ लेकर मायके आ रही है, शशिमुखी बहू पर बहुत खुश है। बीमारी की बात उठने पर, यह बात उन्होंने अनसुनी कर दी, "मेरी बीमारी सहज में जाने वाली नहीं है, एकाएक अभी नहीं मर जाऊंगी। फिर मदन है ही, जरूरत पड़ने पर डाक्टर बाबू आकर देख लेंगे। मा को न देखे कितने दिन हो गये तुम्हें, मां के लिए जी जलता है। यह क्या मैं नहीं समझती हू री ?"

"ऐसी बात नहीं, मां के ही तो पास हू हर वक्त।" मदिरा हंस पड़ी। बोली, "मा का अभाव क्या आपने होने दिया है कभी? मुझ जैसा भाग्य किसका है ?"

शशिमुखी की आखो में पानी आ गया। मदा को पास बुलाया, "यहां आ"

खीचकर हाथ पकड़ के झट से अपने सीने से लगा लिया।

मुस्कराते हुए मदा ने कहा, "सब मांए एक-सी होती हैं। मेरी यह मां भी इसी तरह मुझे सीने से लगा लेती थी।"

•

"तू भी लगायगी। आने दे न गोद में एक-दो।"

दिन चौन रहे हैं और सलिल चिन्तित होता जा रहा है। कहता है, "यहां की नाट्य समिति में नेपाल काका मच के मामलों के बहुत बड़े जानकार थे, कलकत्ता के मच पर भी कभी-कभी अभिनय करने जाते थे। बड़ी लगन से सिखाते थे, हर एक बात मन में जम जाती थी। अपनी भूमिका को उन्ही के बताये ढग से मच पर अदा कर आता था। धन्य-धन्य होने लगता था। नेपाल काका की तरह अगर अब मुझे कोई मिल जाता'''

मदिरा बोली, "फिक्र क्यों करते हो, मैं हूं न। ऐसी तालीम दू

दसघरा के लोग तुम्हारी तारीफ करते नहीं थकेंगे।"

तत्क्षण वह तालीम शुरू हो गई। मां गिरिवाला, भाई देवव्रत, वहन मालती, दूसरे घर के श्रीनाथ, रांगाकाकी वाहर के औरत-मर्द जो आयंगे-जायंगे, भूमिका स्वरूप थोड़ा-थोड़ा सवके वारे में वता दिया। किनके प्रति सम्मान प्रदर्शन करना पड़ेगा, हंसी-मजाक किस हद तक उचित होगा, हाथ-मुंह की भंगिमा के साथ सविस्तार समझाने लगी। सलिल नौसिखिये की तरह मुंह वनाकर सुन रहा था। एक-व-एक जोर से हंस पड़ा, "तुम तो पक्की मोशन मास्टर हो जी, नेपाल काका तो तुम्हारे पैरों की धूल भी नहीं ! लेकिन जो वात तय हुई है उसका खयाल रहे, तीन दिन से अधिक वहां कतई नहीं रहूंगा। तीन दिन का ही होता है दुर्गोत्सव। अवधि वढ़ाने पर प्रतिमा का रंग उचट कर अंदर का फूस-मिट्टी का ढांचा वाहर निकल आयगा।"

सलिल स्टेशन पर उतरकर पालकी में वैठ रहा है और कह रहा है, "मंच पर अभिनय करना वहुत आसान होता है। दस या वीस मिनट तैयार की हुई वातें कहकर ग्रीन रूम में घुस गया, वाल और दाढ़ी मूंछ खोलकर वीड़ी सुलगा के थोड़ी देर आराम करने वैठ गया। ससुराल में लगातार दिन-रात अभिनय करना पड़ेगा। खवरदार, वक्त न वढ़ाना, नहीं तो असलियत जाहिर कर दूंगा, तव मुझे कोई नहीं रोक पायगा !"

●

पालकी से आंगन में उतरते ही दोनों भीड़ में घिर गये। जो जहां था, चला आया है। हंसी-ठिठोली शुरू हो गई। अच्छी नौकरी पाकर देवव्रत दूर परदेस चला जा रहा है, फिर कव आयगा, ठीक-ठिकाना नहीं। पिछले कई दिन से लोग लगातार आ-जा रहे हैं, सव अच्छी-अच्छी वातें कह रहे हैं। इस पर नया दामाद आ गया। शादी के वाद लड़की भी पहली वार वाप के घर आई है।

सामने जो थे, उन्हें प्रणाम आदि करके सलिल ने पूछा, "मां कहां हैं ?"

"मां आ रही हैं, तुम घर में आओ।" मालती ने आकर हाथ पकड़ा।

गिरिवाला रसोईघर में हैं, जलपान के लिए चन्द्रपूलि[1] वना रही हैं।

---

१. विशेष प्रकार के पुए।

वे शीघ्र हाथ धोकर खड़ी हो गई। पर मैं न बैठकर दामाद यहां रसोई में ही चला आया है। बाहर जूते उतार अंदर आकर सास के चरणस्पर्श किये।

सुडौल चन्द्रपुलिकाएं फूल की बड़ी थाली पर सजी हुई हैं। सलिल बोला, "बड़ी बढ़िया गंध आ रही है। लगता है, खजूर का गुड़ मिलाया है। लाइये तो मां, एक खाकर देखूं।"

सलिल ने निःसंकोच भाव से हाथ फैला दिया। देवू-मदा वगैरा भी उनके सामने इस तरह हाथ फैलाकर खड़े नहीं होते थे। जब से यहां आया है, 'मां-मां' की रट लगा रखी है। गिरिबाला द्रवीभूत हो गई।

रांगाकाकी मंदा के लिए व्यग्र हैं। सलिल के बारे में धीनाथ कुछ कहने जा रहे थे, फटकार खाकर चुप हो गये लेकिन बहुत देर तक मजेदार किस्सा पेट में लिये चुपचाप रहने वाले जीव उनके पतिदेव नहीं हैं। वह किस्सा रांगाकाकी ने नहीं सुना तो क्या हुआ, और बहुत-से लोग उसे सुनने को बेकरार बैठे हैं। तभी सुबह से मौका ढूंढ रही हैं कि पहले अकेले में मंदा से सारी बातें जान लें, फिर उसे सिखा-पढ़ा देंगी कि बाहर क्या कहना है, क्या नहीं।

लड़कियां और बहुएं घात लगाये बैठी थीं। आंगन में पैर पड़ते-न-पड़ते उन्होंने उसे ही पकड़ लिया। रांगाकाकी ने वहां पहुंचकर कहा, "लंबा रास्ता तय करके आ रही है, थकी है। थोड़ा सुस्ता लेने दो। बातें भागी थोड़े ही जा रही हैं। तुम लोग शाम को आना।"

वे कह रही हैं और अलक्ष्य भाव से मंदा की ओर इशारा कर रही हैं। पर वह ऐसी बेवकूफ है कि समझकर भी नहीं समझती। उलटे उन लोगों की वकालत कर रही है, "कहां थकी हूं काकी? मालगाड़ी-यानकी पर ही तो चली आ रही हूं, इन सबसे कितने समय बाद मुलाकात हो रही है। थोड़ी बातचीत कर लूं, तुम जाओ।"

रांगाकाकी थोड़ा हट कर खड़ी हो गई। वहां से एकदम गई नहीं, पाल-गृहिणी को देखकर हाथ के इशारे से पास बुलाया। पाल-गृहिणी की एक ननद के जुड़वां लड़के हुए हैं, उसीके बारे में पूछताछ करने लगीं और बार-बार मंदा की ओर देखने लगीं। दामाद के बारे में धीनाथ जो बुरी बात सुनाना चाहते थे, लड़की के चेहरे पर उसका बिलकुल उलटा

दसघरा के लोग तुम्हारी तारीफ करते नहीं थकेंगे।"

तत्क्षण वह तालीम शुरू हो गई। मां गिरिबाला, भाई देवव्रत, बहन मालती, दूसरे घर के श्रीनाथ, रांगाकाकी बाहर के औरत-मर्द जो आयंगे-जायंगे, भूमिका स्वरूप थोड़ा-थोड़ा सबके बारे में बता दिया। किनके प्रति सम्मान प्रदर्शन करना पड़ेगा, हंसी-मजाक किस हद तक उचित होगा, हाथ-मुंह की भंगिमा के साथ सविस्तार समझाने लगी। सलिल नौसिखिये की तरह मुंह बनाकर सुन रहा था। एक-ब-एक जोर से हंस पड़ा, "तुम तो पक्की मोशन मास्टर हो जी, नेपाल काका तो तुम्हारे पैरों की धूल भी नहीं! लेकिन जो बात तय हुई है उसका खयाल रहे, तीन दिन से अधिक वहां कतई नहीं रहूंगा। तीन दिन का ही होता है दुर्गोत्सव। अवधि बढ़ाने पर प्रतिमा का रंग उचट कर अंदर का फूस-मिट्टी का ढांचा बाहर निकल आयगा।"

सलिल स्टेशन पर उतरकर पालकी में बैठ रहा है और कह रहा है, "मंच पर अभिनय करना बहुत आसान होता है। दस या बीस मिनट तैयार की हुई बातें कहकर ग्रीन रूम में घुस गया, बाल और दाढ़ी मूंछ खोलकर बीड़ी सुलगा के थोड़ी देर आराम करने बैठ गया। ससुराल में लगातार दिन-रात अभिनय करना पड़ेगा। खबरदार, वक्त न बढ़ाना, नहीं तो असलियत जाहिर कर दूंगा, तब मुझे कोई नहीं रोक पायगा!"

●

पालकी से आंगन में उतरते ही दोनों भीड़ में घिर गये। जो जहां था, चला आया है। हंसी-ठिठोली शुरू हो गई। अच्छी नौकरी पाकर देवव्रत दूर परदेस चला जा रहा है, फिर कब आयगा, ठीक-ठिकाना नहीं। पिछले कई दिन से लोग लगातार आ-जा रहे हैं, सब अच्छी-अच्छी बातें कह रहे हैं। इस पर नया दामाद आ गया। शादी के बाद लड़की भी पहली बार बाप के घर आई है।

सामने जो थे, उन्हें प्रणाम आदि करके सलिल ने पूछा, "मां कहां हैं?"

"मां आ रही हैं, तुम घर में आओ।" मालती ने आकर हाथ पकड़ा।

गिरिबाला रसोईघर में हैं, जलपान के लिए 'चन्द्रपूलि'[1] बना रही हैं।

---

१. विशेष प्रकार के पुए।

वे शीघ्र हाथ धोकर खड़ी हो गईं। घर में न बैठकर दामाद यहां रसोई में ही चला आया है। बाहर जूते उतार अंदर आकर सास के चरणस्पर्श किये।

सुडौल चन्द्रपूलिकाएं फूल की बड़ी थाली पर सजी हुई हैं। सलिल बोला, "बड़ी बढ़िया गंध आ रही है। लगता है, खजूर का गुड़ मिलाया है। लाइये तो मा, एक खाकर देखूं।"

सलिल ने नि.संकोच भाव से हाथ फैला दिया। देबु-मदा वगैरा भी उनके सामने इस तरह हाथ फैलाकर खड़े नहीं होते थे। जब से यहां आया है, 'मां-मा' की रट लगा रखी है। गिरिबाला द्रवीभूत हो गईं।

रांगाकाकी मंदा के लिए व्यग्र हैं। सलिल के बारे में श्रीनाथ कुछ कहने जा रहे थे, फटकार खाकर चुप हो गये लेकिन बहुत देर तक मजेदार किस्सा पेट में लिये चुपचाप रहने वाले जीव उनके पतिदेव नहीं हैं। वह किस्सा रांगाकाकी ने नहीं सुना तो क्या हुआ, और बहुत-से लोग उसे सुनने को बेकरार बैठे हैं। तभी सुबह से मौका ढूंढ रही हैं कि पहले अकेले में मंदा से सारी बातें जान लें, फिर उसे सिखा-पढ़ा देंगी कि बाहर क्या कहना है, क्या नहीं।

लड़कियां और बहुएं घात लगाये बैठी थीं। आंगन में पैर पड़ते-न-पड़ते उन्होंने उसे ही पकड़ लिया। रांगाकाकी ने वहां पहुंचकर कहा, "लंबा रास्ता तय करके आ रही है, थकी है। थोड़ा सुस्ता लेने दो। बातें भागी थोड़े ही जा रही हैं। तुम लोग शाम को आना।"

वे कह रही हैं और अलक्ष्य भाव से मंदा की ओर इशारा कर रही हैं। पर वह ऐसी बेवकूफ है कि समझकर भी नहीं समझती। उलटे उन लोगों की वकालत कर रही है, "कहां थकी हूं काकी? नाव-ट्रेन-पालकी पर ही तो चली आ रही हूं, इन सबसे कितने समय बाद मुलाकात हो रही है। थोड़ी बातचीत कर लूं, तुम जाओ।"

रांगाकाकी थोड़ा हट कर खड़ी हो गईं। वहां से एकदम गईं नहीं, पाल-गृहिणी को देखकर हाथ के इशारे से पास बुलाया। पाल-गृहिणी की एक ननद के जुड़वां लड़के हुए हैं, उसीके बारे में पूछताछ करने लगीं और बार-बार मंदा की ओर देखने लगीं। दामाद के बारे में श्रीनाथ जो बुरी बात सुनाना चाहते थे, लड़की के चेहरे पर उसका बिलकुल उलटा

ही नजर आ रहा है। अपने पति-सौभाग्य के गर्व से फूली नहीं समा रही है। बड़े चाव से सबको ससुराल के किस्से सुना रही है। न जाने कहां से श्रीनाथ झूठी खबर सुन आये थे, या हो सकता है कि पूरा किस्सा उन्हीं का गढ़ा हुआ हो।

भाई-बहनों के बीच बातें हो रही हैं। मंदिरा ने कहा, "शुक्रवार को जाने की बात कह रहे हैं।"

मालती ने बात उड़ा दी, "नये जमाई इसी तरह कहा करते हैं। तू भी कैसी है! कितने शुक्र निकल जायंगे देखना।"

देवव्रत ने कहा, "दस ही दिन बाद हमलोग भी तो जा रहे हैं। घर के दरवाजे पर ताला लगाकर सब एक साथ ही निकलेंगे, नहीं तो तुम लोग एक दिन पहले ही चले जाना।"

मंदा ने कहा, "मैं तो यही मनाती हूं, जितने अधिक दिन यहां रह पाऊं, मेरे लिए उतना ही अच्छा है। लेकिन पहले से पक्का करार कराकर आये हैं।"

मालती ने धमकाया, "वह करार तूने किया है, तू उसे तोड़ेगी भी नहीं। इस घर की मालिक तू नहीं है। किस दिन जाना होगा, यह हम-लोग तय करेंगे।"

इसके बाद सबने मूल असामी सलिल को जा पकड़ा। मालती मुकाबले के लिए तैयार हो गई, "सुना है शुक्र को जाने को कह रहे हो? इसका मतलब तो हुआ गिनकर नियम माफिक त्रिरात्रि-वास। यह नहीं हो सकता। कुनबे के बड़े-बूढ़ों को घर-घर जाकर प्रणाम कर आये हो—वे सब तुम्हें न्योतकर एक-एक सांझ खिलायंगे, आशीर्वाद-स्वरूप धोती-कपड़े देंगे। यही नियम है, उनके दामाद आने पर हमें भी यही करना पड़ता है।"

सलिल सिहर उठा, "अरे बाबा, इसमें तो दस-बारह दिन लग जायंगे। तब तो मेरा सब कामकाज चौपट हो जायगा।"

बेला नाम की पाल-परिवार की वह लड़की भी आई थी, मंदिरा की हमउमर है। हंसते हुए वह सिर हिलाती है, "रिश्तेदारी में आना अपनी मर्जी से होता है, जाना दूसरे की मर्जी से रहता है। जाते वक्त न जाने

कितनी अघट घटनाएं घट सकती हैं। हो सकता है, तुम्हें ढूंढने पर जूते ही न मिलें।"

सलिल बोला, "खाली पैर ही चला जाऊंगा। जूते खो सकते हैं, इससे मेरे पैर तो नहीं गुम हो जायंगे।"

"कुरता-बनियान भी उड़ सकते हैं।"

"मेरी बला से।" सलिल निश्चिन्त स्वर में बोला, "सर्वहारा मानस हूं, इस पर कोयला बेचकर गुजारा करता हूं। कुरता-जूता पहनकर पूजा या घट सजाकर बैठे रहने से कहीं हमलोगों का काम चल सकता है? सिर्फ धोती ही पहने मजे में चला जा सकता हूं, कुरता-जूता छिपाकर मुझे नहीं रोक सकोगी।"

भौंहों पर बल डालकर थोड़ी चिन्ता का अभिनय करके बेला ने कहा, "तब मदा को ही रोक रखेंगे। घर में नहीं, मुहल्ले में कहीं। क्यों मदा?"

मदिरा ने सिर हिलाकर कहा, "मेरे लिए तो अच्छा ही होगा। मायके कौन नहीं रहना चाहता? ओह, अगर सचमुच ऐसा ही होता।"

सलिल बोला, "होने दो न, रुकावट किस बात की है? रह जाओ न, जितने दिन ये लोग यहां हैं। मदन को भेज दूंगा, उसके साथ मैंयासी चली आना।"

मदिरा और बढ़ाकर कहती है, "मैंयासी क्यों आऊं अभी, सुन्दर-नगर ही चले जायंगे, सब एक साथ। बाद में देख-सुनकर आया जायगा।"

बात पूरी न करके 'ही-ही' करके हंस उठती है, "ओह, कैसे भयानक आदमी हैं। इधर हाथ-पैर बांध रखते हैं, उधर सबके सामने यह कहकर भले बन रहे हैं कि आजादी में घूमो-फिरो।"

मालती ने कुछ नाराजी से कहा, "मदा, तू बहुत बढ़ा-चढ़ाकर बातें करती है। बता, तेरे कहां हाथ-पैर बंधे हैं।

"यह क्या देखने देंगे तुम लोगों को? सब सोचेंगे कि जमाईबाबू सदा-शिव व्यक्ति हैं, सारे झगड़े की जड़ यह लड़की ही है। जिद करके ससुराल चली गई, कुछ दिन भी मां के पास नहीं रह सकी। लेकिन मैं क्या करूं? नई बहू के आंगन में पैर रखते ही सास ने चाबी का गुच्छा आंचल से बांध दिया। चाबी के साथ ही पूरी गिरस्ती की जिम्मेदारी सिर पर आ गई।

घर का भी सब करना पड़ेगा, बाहर का भी। इसका क्या होगा, उसका क्या करूं, नौकरानी, रसोईदारिन, कारिन्दा, मजदूर हमेशा आकर पूछ रहे हैं। दिमाग खराब होने की नौबत आ जाती है। इतने दिन जब मैं वहां नहीं हूं, तब जैसे गिरस्ती नहीं चल रही है।"

तैश में आकर मंदिरा जोर-जोर से बोल रही है, गिरिबाला स्तंभित होकर सुन रही हैं। तभी वहां रांगा काकी आ गई। गिरिबाला ने उन्हें मध्यस्थ मानकर कहा, "सुन रही हो काकी ? लड़की की बातें सुनो।"

गिरिबाला को दोनों हाथों से पकड़कर रांगा काकी ने कहा, "इस लड़की के लिए तुम्हें बड़ी चिन्ता थी, तुमने ठाकुरजी के सामने बहुत सिर कूटा था। ठाकुरजी ने तुम पर दया की है। कितनी लड़कियों के ऐसे भाग होते हैं।"

उधर भागवान बके जा रही थी, "जूते की सिलाई से लेकर चंडी-पाठ तक सारे काम करने पड़ते हैं। कुछ दिन मां-भाई के साथ रहकर आराम करूं, इसकी कोई गुंजाइश नहीं। क्या यह जुल्म नहीं है ? तुम्हीं लोग बतलाओ।"

अवश्य ही। पर जुलुमबाज कहकर जिसकी निन्दा हो रही है, वह शख्स चुपचाप मुस्करा रहा है और प्रबल भाव से मंदा का समर्थन कर रहा है, "कह तो रहा हूं, मैं नहीं रुक सकता, कम-से-कम तुम रुक जाओ। मां, भाई, बहन के साथ मौज से रहो। कुछ भी फिक्र मत करो। मेरी मां कुछ नहीं कहेंगी। इसकी जिम्मेदारी मैं लेता हूं। उन्हें समझा दूंगा।"

उसकी बात को पकड़कर मंदा बोली, "मां क्यों कुछ कहने जायंगी, वे ऐसी नहीं हैं। तुम्हें किसीको कुछ समझाना नहीं पड़ेगा।"

रहने-न-रहने का निर्णय बाद में भी हो सकेगा, फिलहाल तो है ही, इस अरसे में ही वह कितनी देर मां, भाई, बहन के पास रहती है ? सलिल को देखते ही सबको छोड़कर झट से उसके पास चली जाती है। न जाने उससे क्या फुसफुसाती रहती है। उसकी यह ज्यादती लोगों को अखरती है। रिश्ते की एक बूढ़ी दादी ने कह ही दिया, "क्यों री, इतना अविश्वास क्यों कर रही है ? कितने जनम जैसे तुझे वर नहीं मिला है।"

मंदा मुस्कराती है, दादी की बात का कोई जवाब नहीं देती। सलिल

के कान में फुसफुसाती है, "बूढ़ा आदमी पान चबाकर होंठ रंगता है, मुछमुछ डकार लेकर सबको जताता है कि बढ़िया खा लिया है। मेरा भी यही हाल है। नाटक में प्यार का दृश्य करते हो न, तुमने तो सारी बातें सच ही करके आई हूं, हम वही नाटक किये जा रहे हैं।"

•

ठीक दिन को मंदा ने याद दिला दिया, "आज शुक्रवार है।"

"शुक्रवार है तो क्या हुआ?"

"तुम्हारे जाने का दिन है। मैंने सख्त ताकीद कर दी है कि कोई कुरता-जूता न हटाये। तुम बे-रोकटोक जा सकोगे।"

नाराज होकर मलिन ने कहा, "मेरा यहां रहना तुम्हें अखर रहा है क्या?"

"सो क्यों? मैंने चालाकी से रोक रक्खा है, मुझ पर यह तोहमत न लगाई जाय।"

मलिन बोला, "मैं अगर जाना चाहूं, तो मुझे रोके—ऐसा इन्सान आज तक कोई नहीं पैदा हुआ है। मैं किसी पर तोहमत नहीं लगाऊंगा।"

मंदा चुप हो गई। पर उसका बदन कांपने लगा, फिक्र दूर नहीं हुई। बाहरवाले यहां से निकल जाएं तभी खैर है। मलिन जैसे यहां एक दूसरा ही आदमी बन गया है, सहज भाव से सबसे निपटता रहा है। अपने मन से गढ़-गढ़कर कितनी तरह की बातें कह रहा है। उसकी कल्पनाशक्ति इतनी उर्वर है, कौन जानता था! उसकी एक चीज बहुत खलनेवाली है। वह बेहद स्त्रैण है। पत्नी के साथ से वह गद्गद हो जाता है। मंदा समझ नहीं पाती कि तब वह कहां मुंह छिपाये।

तीन दिन की जगह पूरे सात दिन बीत गये। आज रवानगी है। देव-व्रत वगैरा यहां और तीन दिन हैं। जाते वक्त मलिन ने सास को प्रणाम किया। खुशी के मारे गिरिबाला की आंखों में आंसू छलक आये। रुंधे हुए गले से बोलीं, "ऐसे ही हंसमुख बने रहो, यही कामना है। तुम बहुत अच्छे हो, बेटा। मंदा के जाने किस जनम का पुण्य है कि यह तुम्हारे हाथ में पड़ी है।"

वे लोग स्टेशन तक अब पालकी में नहीं, बैलगाड़ी में जा रहे हैं। दोनों

पास-पास सटे बैठे हैं। सलिल गांव की सीमा से बाहर आकर 'ही-ही' करके हंसने लगा, "मैं बहुत अच्छा आदमी हूं, ठीक बात है न ?"

मंदिरा ने जोर से समर्थन किया, "हां, ठीक है।"

"दुनियाभर के लोग कहते हैं, मैं क्या हूं। तुम्हारी मां ने ही आज मुझे सबसे पहले अच्छा कहा। इसका मतलब यह हुआ कि अभिनय बहुत सच्चा हुआ है। अब समझ रही हो न कि मैंने नाटक में योंही नाम नहीं कमाया है।"

मंदिरा ने थोड़ा प्रतिवाद किया, "तुम जो चाहे कहो, पर बहुत ज्यादती हो रही थी। वास्तविक जीवन में ऐसा नहीं होता।"

सलिल ने कहा, "नाटक में होता है। इन सब गंवई जगहों में बारीकी की कदर कौन करेगा ? सतही अभिनय पर ही तालियां मिलती हैं, मैंने मंच पर परखकर देखा है।"

राहत की सांस भरकर फिर बोला, "चलो, खेल खत्म हुआ। घर पहुंचकर साज-सज्जा खोलकर अपना असली रूप बना लूंगा।"

१२/

बैलगाड़ी, रेलगाड़ी में तीन स्टेशन, इसके बाद यथानियम डोंगी। सिराजकाटी होकर जा रहे हैं।

सलिल बोला, "थोड़ा किनारे से लगाओ, मांझी। न दें हूं, न मयल, डिंगी की क्या हालत हो रही है, झटपट देखकर आता हूं।"

लेकिन गया तो गया, लौटने का नाम नहीं। कोयले के डिपो के अलावा भी यहां द्रष्टव्य वस्तु है। मदा अपने मन में कौतुक के साथ सोच रही है। वहां भी कुछ समय जरूर लगेगा। पास ही एक छतरी वाली छोटी नाव बंधी थी, मालिक खरीदारी के लिए गए हुए हैं। मदा उनकी बहू से बात-चीत करके समय गुजार रही है। बूढ़ी मां के दिमाग में कुछ फितूर है, फकीर को दिखाकर तागा (गंडा) लेने के लिए मजार के थान पर गये थे। बहू भी साथ चली आई है। उसकी गोद में साल भर की एक बच्ची है। बच्ची बड़ी अच्छी है। मदा के उसे गोद में लेने के लिए हाथ फैलाने पर, वह उस गोद से कूद पड़ने को हुई। बहू ने मुस्करा कर कहा, "बच्ची अजनबियों से झिझकती नहीं है। जो हाथ फैलाता है, उसी के पास चली जाती है।"

नाव के सामने के हिस्से में आकर उस स्त्री ने बच्ची को मदा की गोद में दे दिया। बच्चे को क्या खिलाया-पिलाया जाय? मांझी को मदा ने कहा, "देखो तो ऊपर जाकर बच्चे को खिलाने लायक यहां कुछ मिलेगा?" घाट पर ही मिठाई की दुकान है, मांझी दोनों में काचागुल्ला (नरम संदेश) ले आया। बच्ची को गोदी में बैठाकर थोड़ा-थोड़ा उसके मुंह में देने लगी। लड़की खाने-पीने वाली है, कैसे चप-चप करके खा रही है! कई दांत निकल आये हैं। दांत दिखाकर हंस रही है।

नई बाल्टी हाथ में लिये, जिसमें अंट-शंट चीजें भरी हैं, मालिक उस नाव पर आकर चढ़ गए। नाव चल दी, थोड़ा आगे जाकर मुड़ नदी की एक दूसरी शाखा में घुस गई। एक नाव का नाम बताया,

उनका घर है। "उधर अगर कभी जाना पड़ जाय तो हमारे यहां जरूर आना।" वह वहू मंदा को मुस्कराकर कह गई। मंदा ने उस गांव का नाम कभी नहीं सुना था। वहां जाने की भी जरूरत कभी नहीं पड़ेगी। पर वच्ची वड़ी प्यारी है।

आखिरकार सलिल भी आता दिखलाई दिया। किनारे पर से ही चिल्लाने लगा, "देर हो गई मांझी, वहाव के खिलाफ चलना पड़ेगा। उतरकर तुम गोन खींचो। मैं पतवार पर वैठता हूं।"

पतवार थामे सलिल नाव के पीछे वैठा है। मंदा की ओर देखकर यकायक वोल उठा, "देर क्यों हुई, तुमने नहीं पूछा?"

"डिपो के काम में अटक पड़े थे। इसमें पूछना क्या है?"

सलिल ने कहा, "कोयले के डिपो के अलावा परीवाला भी तो रहती है यहां, इसे तो नहीं भुलाया जा सकता।"

"भूलूंगी क्यों? घर जाकर मुलाकात कर आई हूं, वे मेरी दीदी लगती हैं।"

मंदा मुंह से कह रही है और कांसे के गिलास को मांजकर उसमें कलसी से पीने को पानी उंड़ेल रही है। दोनों में संदेश निकालकर वोली, "एक हाथ से पतवार पकड़कर इसे खा लो, या मैं ही मुंह में डाल दूं?"

नाराज होकर सलिल ने कहा, "तुम इतनी उदासीन क्यों हो? तुम्हें गुस्सा नहीं आता?"

मंदिरा वोली, "तुम इतनी देर वाद विना खाये-पीये सूखे मुंह लौटोगे, तभी मैंने मांझी से संदेश मंगाकर रखा है। तो भी कह रहे हो उदासीन हूं? शायद दीदी के साथ कुछ गरमागरमी हो गई है, उसका गुवार मुझ-पर निकाल रहे हो।"

फिर हंसकर वोली, "मैं गुस्सा नहीं करूंगी। नाराजी-झगड़ा मुझे अच्छा नहीं लगता, मैं हंसी-खुशी में दिन विताऊंगी।"

सलिल ने कहा, "मुझे वड़ा गुस्सा आ रहा है। कचहरी वाड़ी में मैंने देखा कि मिस्त्री-मजदूर तोड़-फोड़ और मरम्मत में लगे हैं। वहां हलचल मची हुई है। भंवल और मैं मजे से तो पड़े रहते हैं। फिर एकाएक इमारत की मरम्मत की कौन-सी जरूरत पड़ गई? मेरी खवरदारी के लिए शायद

[...] के डिपो का पूरा हिसाब देखकर खुश होकर शशिमुखी [...]
[...]न में सचमुच दिलचस्पी हो गई है मां, घाटे को पूरा करके फायदे के
[...] जीजान से कोशिश कर रहा है।"

•

शशिमुखी का आधा शरीर बेकार हो गया है, बातचीत भी स्पष्ट नहीं
[...]र पातीं। फिर भी इसी हालत में ही सलिल पर आंखें लाल करती
हैं, "रात को तू इतनी देर से क्यों लौटता है?"

सलिल भी गरम होकर कहता है, "कितनी देर करता हूं रात को?
सांझ होते-न-होते ही तो घर में अंधेरा करके आंखें मूंद लेती हो। तुम्हें
रात की खबर कैसे लग सकती है? हिसाब-किताब पक्का करके लौटता
हूं, तो भी कितनी देर होती है, अपनी बहू से पूछ लेना।"

"तब तो हो गया! बहू बिलकुल बुद्धू है। बहू ही अगर तेज होती तब
बात क्या थी?"

बात कहते ही काट देती है, "नहीं मां, तब रात ज़्यादा नहीं हुई थी।
मैं सोने नहीं गई थी!"

शशिमुखी कहतीं, "वह अगर तमाम रात न आवे तो तू सोने नहीं
जायगी? क्या तुझे मैं नहीं पहचानती हूं! मां तू है या मैं?"

हालांकि बात ऐसी नहीं है। बहू सो जाती है। उसे कभी-कभार नींद
भी आ जाती है। सुबह सलिल पूछता है, "दरवाजा क्यों बंद कर देती
हो?"

"डर लगता है, कहीं चोर-डाकू अगर घूस आवें तो।"

सलिल बोला "मुझ जैसे पक्के बदमाश की बीवी होकर चोर-डा[...]
से डरती हो?"

मंदिरा चुप।

सलिल ने कहा, "दरवाजा ज्यादा धकियाना पड़ने पर गुस्सा [...]
जाता है, तब हैवान बन जाता हूं।"

अपनी बात को और स्पष्ट करते हुए फिर बोला, "हैवान मैं [...]
हूं। तब खूंख्वार बन जाता हूं।"

मंदिरा अपराधी की तरह मिनमिनाती हुई बोली, "थपकी [...]

खोल देती हूं। सिर्फ कल ही थकियाना पड़ा था। हरारत-सी महसूस हो रही थी, तभी तो नींद आ गई थी।"

अब दिन की रोशनी में सलिल को कुछ पछतावा हो रहा है। बोला, "सचमुच, तुम्हें बड़ी तकलीफ होती है। रोज रात को जगकर बैठे रहना पड़ता है।"

"तुम भी तो जगते हो", मंदिरा ने कहा, "जगने से तुम्हें ज्यादा तकलीफ होती है। मैं जितना जगती हूं, उस कमी को दिन में सोकर पूरा कर लेती हूं। तुम ऐसा नहीं कर पाते। सुबह से पूरे दिन फिर खटना पड़ता है।"

"कैसी इन्सान हो तुम, कुछ समझ में नहीं आता। पढ़ाई-लिखाई से तो आत्म-सम्मान की भावना जगती है। पर तुममें मन नाम की चीज ही नहीं है। लगता है एक मिट्टी का खिलौना हो।"

निपट भलेमानस की तरह मंदिरा ने कहा, "मैं क्या करूं?"

सलिल ने गरम होकर कहा, "अगर कुछ नहीं कर सकती हो तो इस तरह हंसो मत। हंसी देखने से मिजाज बिगड़ जाता है।"

अतः परम आज्ञाकारिणी स्त्री ने दोनों ओठों को बन्द करके निरीह भाव से उसकी ओर देखा। इस पर भी दोनों आंखों में हंसी की आभा चमक रही है। पति पाकर जैसे धन्य हो गई हो, उसके चेहरे पर ऐसा भाव है।

बीच-बीच में सलिल डराता है, "तुम मेरी कतई परवा नहीं करतीं। यों जैसा भी होऊं, पेट में दारू पहुंचने पर पूरा जानवर बन जाता हूं। ऐसी हालत में किसी दिन तुम्हारी हत्या कर डालूंगा तब तुम्हें पता चलेगा।"

इस भयंकर बात को भी सदा मजाक में उड़ा देती है "हत्या के बाद पता चलना मुश्किल है, बल्कि हत्या करने से पहले थोड़ा बता देना"

"पुलिस को खबर दोगी?"

"पागल हुए हो? घर की बात बाहर क्यों बताने जाऊंगी। एक कागज पर लिख जाऊंगी कि हत्या नहीं, आत्महत्या है। मेरी मृत्यु के लिए मेरे सिवा और और कोई जिम्मेदार नहीं।"

आंखों में व्यंग्य झलकाकर सलिल ने कहा, "वलिहारी ! इतनी लांछना के वाद भी !"

मंदा ने कहा, "अवला स्त्री हूं। और क्या कर सकती हूं, वताओ ?"

"मुझे तलाक देकर फिर शादी कर सकती हो।"

"भगवान वचावे।" मुंह वना करके मंदिरा ने कहा, "किसके सिर पड़ूंगी ? कौन जाने वह आदमी अगर और खराव हो तो! उसके साथ भी अगर पटरी न वैठी तो ? फिर लोग मुझे ही वुरा कहेंगे। कहेंगे कि यह औरत ही सत्यानासी है। नहीं जी, यह जहमत मैं मोल नहीं लेना चाहती।"

"तभी मुझसे गोंद की तरह चिपकी रहोगी। गाली-गलौज, मार-पीट—चाहे जो भी वरपा हो।"

"हां।" कहकर मंदा ने मुस्कराकर सिर हिलाया। फिर कहा, "सती नारी पति को छोड़कर कहां जा सकती है ?"

•

एक दिन सलिल ने जेव से एक अंगूठी निकालकर मंदा को दी। वोला, "तुम्हारी वही अंगूठी है।"

"तुम्हें कहां से मिली ?"

"परीवाला ने लौटा दी। वह नहीं रक्खेगी।"

"ओ: !"

इससे आगे वह और कुछ नहीं वोली। ठीक दोपहर को जव शशिमुखी सो गई, सलिल-भंवल डिपो चले गये, रास्ते पर आदमियों का आना-जाना वहुत कम हो गया, उस समय मंदिरा चुपचाप घर से निकल पड़ी। रिक्शा नहीं लिया, इधर-उधर के रास्तों में घूमकर नदी के किनारे-किनारे कसवियों के मुहल्ले में चली आई।

परीवाला के आंगन में, वरामदे पर पहुंची। दरवाजे वंद थे। दस्तक देते ही भीतर से परीवाला ने पूछा, "कौन है ?"

मंदिरा ने दवी आवाज में कहा, "चुप ! दरवाजा खोलिये, दीदी, आवाज न कीजिये।"

दरवाजा खोलकर परी पहले ठीक से पहचान नहीं पाई। फिर अचंभे

में आकर बोली, "आप ?"

मंदिरा ने कहा, "पहचान गई न ? झगड़ा करने चली आई।"

घर में घुसकर पैर झुलाती खाट पर बैठ गई। परीवाला ने सफाई देते हुए कहा, "मैं क्या करूं, बताइये। इनको मना करती हूं यहां आने को।"

"अरी, मैया, मैं इनके लिए आई हूं क्या ? आदमी के पास आदमी आयगा, इसमें लड़ाई-झगड़े की क्या बात है ? मैं आई हूं..."

झट से मंदिरा ने परीवाला का बायां हाथ खींच लिया। उसकी अनामिका में अंगूठी पहनाने लगी। परी एतराज करने लगी। बोली, "उस दिन मैंने तैश में आकर नुकसान की बात कही थी, आप अंगूठी देकर उसे पूरा कर गईं। गरीब जरूर हूं, लेकिन आपकी अंगूठी क्यों लूं ?"

मंदा भी अड़ गयी। बोली, "अंगूठी मैं अपनी दीदी की उंगली में पहना गई थी, उसे आपने वापस भेज दिया है। कमर कसकर तभी आपसे झगड़ा करने आई हूं। मैं अपनी जिद के लिए बदनाम हूं। देखती हूं, कैसे नहीं लेंगी ?"

उसने अंगूठी जबरदस्ती पहना दी। उसके बदन में ताकत भी बहुत है। परीवाला ने अब दूसरा रास्ता पकड़ा, "मुझ जैसी औरत को आप 'आप' न कहिए। लोग आकर 'तू' कहते हैं, ज्यादा-से-ज्यादा 'तुम' कहो। अंगूठी पहना दी, फिर 'आप' 'आप' कर रही हैं, बरदाश्त नहीं हो रहा है।"

मंदिरा ने अपनी भूल को तुरन्त मान लिया। बोली, "ठीक है। बहनों के बीच 'आप' क्यों रहे ? अबसे 'तुम'। और मैं छोटी हूं, इसलिए तुम मुझे 'तू' कहोगी। हमलोग चार बहनें और एक भाई हैं। सबसे छोटी हूं, इसलिए वे मुझे तू कहते हैं। नई दीदी से भी उसी तरह 'तू' सुनना चाहती हूं।"

एकाएक परीवाला की आंखों में पानी आ गया। मंदा बोली, "रोई क्यों, नई दीदी ? बताना पड़ेगा, बिना सुने नहीं मानूंगी।"

वह वादा कराकर मानी। पुराने दिनों की बातें। एक जमाना था जब परी के भी सब कोई थे, भाई, बहन, मां-बाप, पति, बच्चा तक। आज कोई नहीं है, वह दुनिया में एकदम अकेली है।

मंदा ने पूछा, "उनसे मुलाकात होती है ?"

"सबको यमराज ले गये हैं, सिर्फ दो बहनें बची हैं। अगर कभी उनसे

आमना-सामना हो जाय, तो झाड़ू लेकर मारने दौड़ेंगी। उन्होंने प्रचार कर दिया है कि मैं मर गई हूं। बात गलत भी नहीं है।"

उसे बड़ा अच्छा लग रहा था। तबीयत हो रही थी, दिन ढले तक बैठकर बातें करे। लेकिन सबको पता चल जायगा, इस डर से मंदा जल्दी से निकल पड़ी। बोली, "फिर आऊंगी, नई दीदी। एक ही जगह है, अब जबतब आ सकूंगी।"

वह इधर-उधर ताकती है और तेजी से चलने लगती है। उसे लग रहा है कि परीवाला से न जाने उसका कितने जनमों का सम्बन्ध है।

मंदिरा और भी कई बार उसके घर बार आई है। सलिल कोयले की नाव का बन्दोबस्त करने सदर गया था। उस दिन कुछ अधिक समय तक रह गई। हारमोनियम पर सारे-गामा साधा।

परी ने कहा, "तुम मेरी बनायी चाय पी सकोगी ?"

"मैं ही कहने जा रही थी कि मुझे यहां आते-आते इतने दिन हो गये, नई दीदी ने कभी एक प्याली चाय तक पिलाई।"

चाय उंड़ेलती हुई परी ने कहा, "कैसी स्त्री हो तुम ? मुझपर नाराज नहीं होतीं ? तुम अपने पति को प्यार नहीं करती हो ?"

मंदा चुपचाप हंसने लगी।

परी ने अपनी बात का फिर खुद ही प्रतिवाद किया, "नहीं, यह बात नहीं है। अगर प्यार न करती होती तो इस गंदी जगह तक धावा बोलकर किस खिंचाव से आती! ऐसे तो तुम-जैसी कोई यहां थूकने भी नहीं आयेगी। पति को बहुत प्यार करती हो तुम।"

मंदिरा ने कहा, "जगह अगर गंदी होती तो तुमलोग कैसे रहतीं ?"

"हम गंदे लोग हैं, तभी तो यह जगह गंदी बन गई है।"

"मेरी दीदी गंदी नहीं हो सकती। खबरदार, दीदी को बदनाम किया तो!"

मंदिरा ने धमकाकर परी को अचरज में डाल दिया। परीवाला बोली, "बहन मुझे बड़ा अजीब लग रहा है। तुम मुझसे इतना मीठा बरताव कर रही हो, भगवान ने तुम्हें किस धातु से गढ़ा है ?"

"तब क्या करूं ? लाठी-सोटा लेकर हमला करूं, यही चाहती हो ?"

"ऐसी ही तो हो तुम ! तुमने कभी एक कड़ी बात तक जबान से नहीं निकाली, खाली हंसती रहती हो, सिर्फ हंसते-हंसते बेहाल होना जानती हो। देखकर जी जलता है।"

मंदा ने कहा, "तुमने क्या किया है नई दीदी कि तुम्हें मैं कड़ी बात कहने जाऊं?"

"इससे ज्यादा और क्या हो सकता है ! स्त्री के लिए सबसे बड़ी चीज पति होता है। मैंने तुम्हारे पति को छीन लिया है।"

"कहां ! संगीत का प्रेमी है, उसीके आकर्षण से तुम्हारे पास आता है। मैं तो अपने को घर की एक बहू होकर भी नहीं संभाल पाई थी, नदी के घाट से खिंचकर तुम्हारे इस घर में चली आई। मेरी सास कहती हैं, तुम गुणी-ज्ञानी हो।"

मंदा दांत दिखाकर हंसने लगी। बोली, "मैं भी इसे मानती हूं। तुममें गुन भी है, ज्ञान भी, जो मुझमें कन भर भी नहीं है। तभी तो दौड़ी चली आती हूं, अगर यहां से कुछ गुन-ज्ञान ले जा सकूं!"

•

मलिन और परीबाला में मनमुटाव हो गया। गाना-बजाना करीब-करीब बंद है। परी ठीक तरह बात नहीं करती। कहती है, "चले जाओ बाबू, सिर में दर्द है।" किसी दिन कहती है, "आज बड़े दम्त हो रहे हैं।" एक दिन कहा, "अभी खबर मिली कि बहन के लड़के की हालत बहुत खराब है। सुनकर बड़ा बुरा लगा, तभी पड़ी हूं।"

मलिन कहता है "तेरी अपनी बीमारी सब खत्म हो गई, तभी शायद बहन का सहारा ले रही है?"

नाराज होकर परी बोलती है, "हारी-बीमारी का क्या मजाक है? हमलोग क्या आदमी नहीं हैं, बीमार नहीं हो सकते?"

मलिन कौतूहल के स्वर में कहता है, "अच्छा-अच्छा ! मैं तो तुझे एक बाजारू औरत ही समझता था, एकाएक आदमी कब से बन गई, आखिर बात क्या है, बता दे!"

परी कहती है, "बाबू, तुमने ठीक कहा, हमलोग आदमी नहीं हैं, और हमलोगों के पास जो लोग आते हैं, वे भी नहीं।"

आमना-सामना हो जाय, तो झाड़ू लेकर मारने दौड़ेंगी। उन्होंने प्रचार कर दिया है कि मैं मर गई हूं। बात गलत भी नहीं है।"

उसे बड़ा अच्छा लग रहा था। तबीयत हो रही थी, दिन ढले तक बैठकर बातें करे। लेकिन सबको पता चल जायगा, इस डर से मंदा जल्दी से निकल पड़ी। बोली, "फिर आऊंगी, नई दीदी। एक ही जगह है, अब जबतब आ सकूंगी।"

वह इधर-उधर ताकती है और तेजी से चलने लगती है। उसे लग रहा है कि परीवाला से न जाने उसका कितने जनमों का सम्बन्ध है।

मंदिरा और भी कई बार उसके घर बार आई है। सलिल कोयले की नाव का बन्दोबस्त करने सदर गया था। उस दिन कुछ अधिक समय तक रह गई। हारमोनियम पर सारे-गामा साधा।

परी ने कहा, "तुम मेरी बनायी चाय पी सकोगी?"

"मैं ही कहने जा रही थी कि मुझे यहां आते-आते इतने दिन हो गये, नई दीदी ने कभी एक प्याली चाय तक पिलाई।"

चाय उंड़ेलती हुई परी ने कहा, "कैसी स्त्री हो तुम? मुझपर नाराज नहीं होतीं? तुम अपने पति को प्यार नहीं करती हो?"

मंदा चुपचाप हंसने लगी।

परी ने अपनी बात का फिर खुद ही प्रतिवाद किया, "नहीं, यह बात नहीं है। अगर प्यार न करती होती तो इस गंदी जगह तक धावा बोलकर किस खिचाव से आती! ऐसे तो तुम-जैसी कोई यहां थूकने भी नहीं आयेगी। पति को बहुत प्यार करती हो तुम।"

मंदिरा ने कहा, "जगह अगर गंदी होती तो तुमलोग कैसे रहतीं?"

"हम गंदे लोग हैं, तभी तो यह जगह गंदी बन गई है।"

"मेरी दीदी गंदी नहीं हो सकती। खबरदार, दीदी को बदनाम किया तो!"

मंदिरा ने धमकाकर परी को अचरज में डाल दिया। परीवाला बोली, "बहन मुझे बड़ा अजीब लग रहा है। तुम मुझसे इतना मीठा बरताव कर रही हो, भगवान ने तुम्हें किस धातु से गढ़ा है?"

"तब क्या करूं? लाठी-सोटा लेकर हमला करूं, यही चाहती हो?"

"ऐसी ही तो हो तुम ! तुमने कभी एक कड़ी बात तक जबान मे नहीं निकाली, खाली हसती रहती हो, सिर्फ हंसते-हसते बेहाल होना जानती हो। देखकर जी जलता है।"

मदा ने कहा, "तुमने क्या किया है नई दीदी कि तुम्हें मैं कड़ी बात कहने जाऊं ?"

"इससे ज्यादा और क्या हो सकता है ! स्त्री के लिए सबसे बड़ी चीज पति होता है। मैंने तुम्हारे पति को छीन लिया है।"

"कहा ! संगीत का प्रेमी है, उसीके आकर्षण से तुम्हारे पास आता है। मैं तो अपने को घर की एक बहू होकर भी नहीं संभाल पाई थी, नदी के घाट से खिचकर तुम्हारे इस घर मे चली आई। मेरी सास कहती है, तुम गुणी-ज्ञानी हो।"

मदा दांत दिखाकर हसने लगी। बोली, "मैं भी इसे मानती हूं। तुममें गुण भी है, ज्ञान भी, जो मुझमें कण भर भी नहीं है। तभी तो दौड़ी चली आती हूं, अगर यहा से कुछ गुण-ज्ञान ले जा सकूं !"

•

सलिल और परीबाला में मनमुटाव हो गया। गाना-बजाना करीब-करीब बंद है। परी ठीक तरह बात नहीं करती। कहती है, "चले जाओ बाबू, सिर मे दर्द है।" किसी दिन कहती है, "आज बड़े दस्त हो रहे हैं।" एक दिन कहा, "अभी खबर मिली कि बहन के लड़के की हालत बहुत खराब है। सुनकर बड़ा बुरा लगा, तभी पड़ी हू।"

सलिल कहता है "तेरी अपनी बीमारी सब खत्म हो गई, तभी शायद बहन का सहारा ले रही है ?"

नाराज होकर परी बोलती है, "हारी-बीमारी का क्या मजाक है ? हमलोग क्या आदमी नहीं हैं, बीमार नहीं हो सकते ?"

सलिल कौतूहल के स्वर मे कहता है, "अच्छा-अच्छा ! मैं तो तुझे एक बाजारू औरत ही समझता था, एकाएक आदमी कब से बन गई, आखिर बात क्या है, बता दे !"

परी कहती है, "बाबू, तुमने ठीक कहा, हमलोग आदमी नहीं हैं, और हमलोगों के पास जो लोग आते हैं, वे भी नहीं।"

आंखें तरेरकर सलिल बोला, "क्या कहा ?"

"घर में तुम्हारी इतनी सुन्दर बहू है, फिर इस गंदे मुहल्ले के चक्कर लगाना क्या किसी भले आदमी का काम है ? घर जाओ।"

"घर जाऊं या और कहीं जाऊं, यह मैं समझूंगा।"

सलिल के मन में धक् से एक संदेह जग गया। बोला, "बहू का बड़ा बखान हो रहा है, शायद आना-जाना जारी है ?"

परी इसे अस्वीकार कर देती है, "अरे नहीं, उन्हें इस गंदी जगह आने की क्या पड़ी है ! सिर्फ उसी एक दिन आई थीं। वे सुंदरी हैं, यह क्या बार-बार देखकर कहना पड़ेगा ? उस दिन मेरा घर-द्वार रोशन हो गया था। तुम्हारी आंखें ही नहीं हैं। आंखें होतीं तो देख पाते।"

फिर कहने लगी, "बाबू, चले जाओ, दरवाजा बंद कर दूं। बात नहीं कर पा रही हूं, तकलीफ हो रही है।"

उसके बरामदे पर पहुंचते ही, उसने जोर से दरवाजा बंद कर दिया।

सलिल रात को जल्दी ही डेरे पर लौट आया। तब भी गुस्से से गरज रहा था। मंदिरा से उसने पूछा, "परी से हाल में मुलाकात हुई है ?"

मंदा ने सिर हिलाया, "क्यों नहीं होगी ! मैं तो उनके पास अक्सर जाती हूं !"

"क्यों जाती हो ?" सलिल गरज उठा।

मंदा ने कहा, "वे बहुत अच्छी हैं। वे मेरी दीदी हैं। तुम जा सकते हो और मेरे जाने से गुनाह हो जाता है।"

इसके बाद मंदा को सलिल का प्रचंड क्रोध सम्भालना कठिन हो गया।

आज शिवरात्रि है। शशिमुखी थोड़े-थोड़े की निर्जल उपवास कर रही हैं। उनकी वर्तमान शारीरिक दशा की बात उन्हें कौन समझाये ? [illegible] कहती हैं, "अनाचार करके जीऊं, ऐसी ज़िन्दगी की इच्छा मुझे नहीं है।"

सवेरे मंदा ने सास को धुले कपड़े पहनाये। इतनी जल्दी स्नान कराना उचित नहीं, उसने उनके बिस्तर और कपड़ों पर तुलसी का जल छिड़का। स्टील के गिलास में कच्चे नारियल का पानी और [illegible] सजाकर खाट के पास तिपाई पर रखा।

शशिमुखी क्या खायें, एकटक मंदा के चेहरे की ओर देखती रहती हैं। इधर उनकी बीच-बीच में यही आदत हो गई है। [illegible] भर जाती है। आंखें मूंद लेती हैं, या पलकें झपकाती हुई शशिमुखी की ओर देखती है। परन्तु बूढ़ी की आंखों से पानी भर आता है, और [illegible] होकर बहने लगता है।

उनकी आंखें पोंछकर मंदा कहती है, "क्या बात है, मां ?"

"मुझसे ऐसी मीठी बोली क्यों बोलती है री बहू, मेरी इतनी सेवा भी क्यों करती है ? मुझे गाली देनी चाहिए, बुरी बातें कहनी चाहिए, झाड़ू से पीटना चाहिए। मेरे लिए यही सब उचित है।"

मंदा व्याकुल होकर कहती है, "ऐसा मत कहिए मां। मुझे दुःख होता है, डर लगता है।"

"मैंने तेरी ज़िन्दगी बरबाद कर दी। [illegible] रहना दिया, मैंने सिर्फ अपने ही स्वार्थ की बात सोची।"

मंदा ने कहा, "बेकार की बातें कहकर [illegible] रही हूं। मुझे कोई तकलीफ नहीं है।"

[illegible]

बताना नहीं पड़ेगा। उस नीच को मैंने ही तो अपने गर्भ में धारण किया था। तू सब ढकती फिरती है। इसी कोशिश में लगी रहती है कि कोई भी बात मैं न सुनूं-जानूं, मेरा मन मुझे सब जता देता है। अपने हंसमुख चेहरे से सबकी आंखों में धूल झोंकती रहती है, तो भी मुझसे तेरा रोना नहीं छिपा रहता। तेरे सब दुःखों के मूल में मैं ही हूं, इसे मैं क्षण भर के लिए भी नहीं भूल पाती।"

थोड़ा रुककर फिर बोलीं, "यह तू जो मेरी इतनी सेवा कर रही है, हमेशा मुझे आराम पहुंचाने में लगी रहती है, इसकी जगह अगर तू मुझसे उठते-बैठते झगड़ा करती, गालियां देती तो मुझे चैन मिलता, बहू। सोचती, जैसा किया, उसका फल हाथों-हाथ मिल रहा है।"

गूंगे का कोई शत्रु नहीं होता, लिहाजा मंदा गूंगी बनी रही। लेकिन फिर भी शशिमुखी से बचना मुश्किल है। बोलीं, "कुछ बोल क्यों नहीं रही है ?"

"समझ में नहीं आ रहा है मां कि क्या कहूं।"

"हां, समझ में क्यों आयगा ? एकदम अबोध लड़की है न। चुपचुप करती रहती है, आवाज तक ऊंची नहीं होने देती। ठीक है, बहुत अच्छी बात है। मुहल्ले के किसीको पता नहीं चलता, न घर के किसीको। सिर्फ मुझे नहीं बहका पाती। शाम होते ही मैं सो जाती हूं, सब यही जानते हैं। पहले यही बात थी, अब मैं सारी रात पलक-से-पलक नहीं लगाती हूं। पत्तों के खड़कने की आवाज से समझ जाती हूं कि निशाचर अब घर लौट रहा है।"

मंदा को एक हाथ से अपने पास खींचकर शशिमुखी ने पूछा, "कल रात को कब लौटा था, सच-सच बता !"

अवज्ञासूचक स्वर में मंदा ने कहा, "घड़ी कौन देखने गया था। मैं तबतक सोई नहीं थी, बैठे-बैठे मफलर बुन रही थी।"

शशिमुखी बोलीं, "जानती हूं। तेरा सोना हराम हो गया है। रात के आखिरी पहर में लौटता है, इसके बाद उसके कामकाज को पूरा करके ही तो सो पायगी! हड़हड़ा कर उल्टी कर देता है, खिड़की-दरवाजा बंद रखती है, तो भी मुझे पता चल जाता है। अंदर जितना पाप भरकर आता

है, बिस्तर पर सब उगल देता है, तू उसे अपने आंचल में ले लेती है। फिर उसके सारे शरीर को पोंछ-पाछकर साफ कर देती है। क्या मैं नहीं जानती हूं, सना !"

कहकर शशिमुखी दमादम छाती पीटने लगीं,"मैं महापापिन हूं, मेरी इसी पाप के लिए यह दशा हुई है। मैंने केवल अपने स्वार्थ की ही बात सोची थी। जब तू आंगन में आकर खड़ी हुई, तब तेरा सुन्दर चेहरा देखकर बड़ी खुशी हुई। सोचा कि अब लड़का बंधकर रास्ते पर आ जायगा। मैंने तब तेरी बात बिलकुल नहीं सोची।"

सदा के कान में यह सब नहीं पहुंच रहा। वह स्तंभित हो गई। फटाफट जो कुछ कह गई, वह सब तो उन्हें नहीं जानना चाहिए था। आखिर पता कैसे चल गया? अन्तर्यामी हैं क्या? यह तो बड़ी चिन्ता की बात हो गई।

०

परी ने सलिल को अपने यहां से लगभग खदेड़ ही दिया था। बरामदे में पैर रखते ही एक दिन झट से दरवाजा बंद कर दिया, सांकल-सिटकिनी लगा दी, जिससे किसी भी तरह सलिल अंदर न आ सके। इसके बाद वह वहां कैसे जाय!

पर उसका नशा बड़ा प्रबल है। इधर-उधर चक्कर काटता है। बीच-बीच में गाने की आवाज सुनाई पड़ जाती है। अनुमान लगाता है, परी के यहां महफिल जमी है। कितने लोग आये होंगे, सिर्फ सलिल ही नहीं है।

'धत्तेरे की!' कहकर फिर एक दिन घुस पड़ा। रात ज्यादा नहीं हुई थी। गाना-बजाना नहीं हो रहा था, तब वहां एक भी आदमी नहीं था। अच्छी तरह ताक झाक-करके ही आया है। घर के भीतर जाकर पलंग पर बैठ गया।

परीबाला बाहर की ओर थी, पीछे-पीछे अंदर आकर बोली, "कैसे आये?"

स्वर निस्पृह था! सलिल अवाक् हो गया। बोला, "कैसी है, देखने चला आया।"

"देख तो लिया, अब जाओ।"

तैश में आकर सलिल बोला, "इस पेशे में लाटसाहबी मिजाज से काम नहीं चलता। तेरी मति मारी गई है, तभी तो अपने पैरों में कुल्हाड़ी मार रही है। इसका मजा चखना पड़ेगा। पुरानी बात का खयाल करके ही यहां आता हूं, अपने जाने-पहचाने सब लोगों को छोड़कर मेरे पीछे-पीछे इस जगह चली आई थी। पर अब, जब अपना रास्ता खुद पहचान गई है, तब मेरी जिम्मेदारी खत्म हो गई। दाना डालने पर पंछियों की कमी नहीं होती। तेरे अलावा भी और बहुत-सी हैं। तबीयत हुई तो उन्हीं के यहां चला जाऊंगा, तेरे यहां थूकने भी नहीं आऊंगा अब।"

कहकर उग्र भाव से उठ खड़ा हुआ।

परी डरी नहीं। खिलखिलाकर हंसने लगी। सलिल चमककर खड़ा हो गया। परी ने कहा, "वह उम्मीद छोड़ दो। गंज के भीतर किसी घर में तुम्हें कोई नहीं बैठने देगा। उस दिन बीबी ने हमला बोल दिया था और वह बीबी यहीं मौजूद है, यह सबको पता चल गया है। कोई बेकार के झमेले में क्यों पड़ने जायगा?"

सलिल ने कहा, "मैंने डांट दिया है। अगर शर्महया होगी तो कभी इधर नहीं आयगी।"

परी ने कहा, "मैं तो हूं ही, उसके आने की क्या जरूरत है? मुहल्ले में तुम्हारी शकल देखते ही पहुंच जाऊंगी, फिर देखना।"

"तुझे शायद वह आम मुख्तारनामा दे गई है? आना-जाना, मेल-मुहब्बत बहुत चल रहा था, मुझे सब पता है।"

सलिल की बात पर बिना गौर किये परी ने अपनी बात को जारी रक्खा, "वह एक भले घर की लड़की है, भले घर की बहू, खुद भी बहुत भली है। मैं हूं एक बदजात, निडर और झगड़ालू औरत। झगड़ा और गाली-गलौज करके नाकों में दम कर दूंगी, इसे याद रखना, बाबू।"

सलिल बोला, "तूने मेरे चरित्र को सुधारने का बीड़ा उठाया है?"

परी बोली, "बहन का पति जहन्नुम में न जाय, इतना तो मुझे देखना ही पड़ेगा। घात लगाये रहूंगी। तुम मेरी नजर से नहीं बच सकोगे।"

•

धूप निकल आई है। डेरा बिलकुल शान्त है। ऐसा कभी नहीं होता।

मंदिरा बड़े तड़के उठ पड़ती है, और जल्दी-जल्दी आधा काम समाप्त कर देती है।

न जाने शनिमुखी क्या सोचकर व्यग्र हो उठीं। उनका आधा शरीर बेकार-सा है, तीन महीने से बिस्तर पर पड़ी हैं, तो भी किसीको नहीं बुलाया, लड़खड़ाते हुए खुद ही उठ पड़ीं। उठकर मंदिरा के कमरे में चली आईं। कांप रही थीं, धप से बिस्तरे पर गिर पड़ीं।

मंदिरा ओढ़े-ढके सो रही थी। झटपट उठ बैठी। उनको एकाएक यहां देखकर डर गई।

"रात को झगड़ा-झड़पी की आवाज आ रही थी। लगता है, कुछ हुआ है।"

मंदिरा भीगी बिल्ली बन गई। बोली, "होगा क्या!"

"नहीं, तो तू इतनी देर तक बिस्तरे पर पड़ी रहने वाली नहीं है।"

हिचकते हुए मंदिरा ने सफाई पेश की, "गरमी के मारे रात को ठीक से नींद नहीं आई थी। छोटी-सी गिरस्ती का काम ही कितना है, तभी सोचा कि थोड़ी और पड़ी रहूं।"

पलंग से उतरते समय एक दबी कराहने की-सी थोड़ी आवाज हुई, पर चेहरे पर हंसी बरकरार थी। वह वृद्धा के कानों से नहीं बच पाई। वे गरज उठीं। अब उनकी जबान थोड़ी अस्पष्ट हो गई है। समझने में दिक्कत होती है, लेकिन उत्तेजना के कारण जिह्वा की जड़ता दूर हो गई। बोलीं, "तू बहुत झूठ बोला करती है। मैं जानबूझ कर ही चुप रहती हूं। क्या हुआ है, सच-सच बता।"

मंदा ने कहा, "मां, ऐसी कोई बात नहीं हुई है। मामूली कहा-सुनी हो गयी। दो बरतन-बासन पास रहने पर थोड़ा-बहुत आपस में टकराते ही हैं। आप बेकार परेशान हो रही हैं।"

कहकर मंदिरा वहां से खिसक जाने की फिक्र में थी। शनिमुखी ने आदेश दिया, "कहीं नहीं जायगी। ठहर जा, इधर आ मेरे पास। गरमी के मारे नींद नहीं आई, फिर इतने सारे कपड़े क्यों लपेटे हुए हैं? कपड़े हटा, देखूं।"

जैसे-जैसे वह रही हैं, मंदिरा एक यांत्रिक खिलौने की तरह वैसा ही

[illegible] आ रही है। आंखें लाल करके शशिमुखी ने पूछा, "इतनी जगह से [illegible] कैसे आ गये ?"

"गिर पड़ी थी।"

"गिरने से ऐसी सूजन आती है ! झूठी कहीं की ! मुझे बेवकूफ बना रही है। बात बढ़ते-बढ़ते यहां तक पहुंच गई। तेरे बदन पर हाथ उठाता है ?"

[illegible] मंदिरा का ही हो। रात को जो कुछ हुआ है, अब सवेरे मां कहीं उसपर कहीं और हाथ न जमा दें। सिंहनी की तरह गरज रही हैं, "[illegible] कुल में उसके बाप-दादों में इतनी बेहूदगी कभी किसीने नहीं की [illegible] उस कुल से सब सम्बन्ध तोड़ दूंगी, अपने घर से निकाल बाहर करूंगी।"

[illegible] का यह मकान और कुछ जायदाद शशिमुखी के नाम है। सलिल के पिता अनिल उन्हें हुज्जत-झमेले के बाहर रखने के लिए इन्हें उनके नाम कर गये थे। इसी बात का जोर है। शशिमुखी का कहना जारी था, "तू भी उससे सम्बन्ध छोड़ेगी, दरवाजे से खदेड़ देगी, तू उसे न छोड़ सके, तो मुझे छोड़ दे। मेरी यह आखिरी आज्ञा है।"

वह सिर से पैर तक थर-थर कांप रही थीं। चेहरा भयानक बन गया। अभी शायद बेहोश हो जायं। मंदिरा डर गई। बोली, "मुझे कुछ नहीं हुआ है, मां, आप शान्त हो जाइये।"

मंदिरा रो रही है और शशिमुखी को समझा रही है। उन्हें पकड़कर उनके बिस्तर पर सुला दिया। शशिमुखी आंखें मूंद चुपचाप पड़ रहीं।

●

साइकिल लेकर सलिल रात रहते ही निकल गया है। आज की बात नहीं, अक्सर इसी तरह जाता है। डिपो के काम में जी-जान से खट रहा है। माल का बन्दोबस्त करने सदर आता-जाता है, ठेके लेता है, खरीदारों से पावना वसूल करता है, इस तरह के कामों के लिए साइकिल पर ही उसका अधिक समय व्यतीत होता है। शशिमुखी की बड़ी खराब हालत हो गई है। गोला में भंवल के पास नौकर दौड़ा गया। भंवल डाक्टर लेकर आ गया।

लेकिन बड़े अचरज की बात है कि मकान में खामोशी छाई है। अंदर कहीं आदमी हैं या नहीं, पता नहीं चलता।

सलिल पूरा दिन साइकिल चलाते-चलाते बहुत थक गया था हाथ-पैर धोकर बिस्तर पर लेट गया। चुपचाप पड़ा रहा, जैसे सो गया हो। नतीजा कुछ नहीं निकला। फिर सोचा, क्यों न थोड़ा गाया जाय ?

अब वही हुआ जो उसने चाहा था। अंधेरे में साड़ी की खस्‌खस्‌ आवाज हुई। आना ही पड़ेगा, गाने के आकर्षण से बांबी से सांप तक निकलकर चला आता है। मंदिरा तो एक साधारण मानवी है।

बहुत धीमी आवाज में मंदिरा ने धमकाया, "चुप, मां सो रही हैं। पूरे दिन आज उनके लिए बेहद परेशानी उठानी पड़ी है। अनन्त डाक्टर ने जो कुछ कहा है, उसे सुनकर बहुत चिन्ता हो रही है। भंवल ठाकुरपो सदर बड़दा को खबर देने गए हैं।"

सारा कच्चा चिट्ठा सुनाकर फिर ढाढ़स बंधाने की गरज से कहा, "डाक्टर बाबू जो कुछ कहें, लेकिन मुझे उनकी हालत उतनी नाजुक नहीं मालूम होती। बहुत ज्यादा नाराज हो गई थीं, दोपहर को उन्होंने मुझसे बहुत बातें कीं।"

मौका पाकर सलिल ने नरमी से कहा, "कल रात को मैं होश खो बैठा था। जिस हाथ ने वह सब किया था, उस पर तब मेरा कोई वश नहीं रहा था, यह तो तुम जरूर समझ गई होगी।"

उठकर उसने मंदिरा का हाथ पकड़ लिया। लगा, जैसे उसकी आंखें भर आई हों। सलिल ने कहा, "अब भी बदन में दर्द हो रहा होगा।"

"किसने कहा बदन में दर्द है ?"

"अः, दिल में है। लेकिन मैं सफाई पेश कर चुका हूं न। जिस हाथ ने तुम्हें चोट पहुंचाई, वह हाथ मेरा नहीं था। बोतल का हाथ था, वह उसीका काम था।"

अचानक मंदिरा ने शशिमुखी की बात कह डाली, "तुमसे हमेशा के लिए सम्बन्ध-विच्छेद हो गया है।"

सलिल अवाक् होकर देखता रह गया।

आद्योपान्त सब बातों की पुनरावृत्ति करके मंदिरा ने जोर देकर कहा,

"तुम्हारे साथ मां का कोई सम्बन्ध नही, मेरा भी नही। मुझे मां ने यह आखिरी हुकम दिया है।"

सलिल क्रुद्ध होकर बोला,"मां ने क्या सोच रक्खा है, सुनूं। यह हुकम तुम पर उन्होंने कैसे झाड़ दिया? असली सम्बन्ध किससे है? मैंने शादी की है, इसीलिए वे तुम्हारी सास हैं। अगर शादी न करता तो तुम कौन होती, और वे कौन होती?"

वहम छोड़कर मंदा ने कहा, "यह तुम मां से समझना, मैं कुछ नहीं जानती। गुरुजन ने आदेश दिया है। मै उसका उल्लंघन नही कर सकती।"

सलिल बोला, "मै गुरुजन नही हूं?"

"नही हो, कौन कह रहा है? जरूर हो।"

"तब?"

"मां तुमसे भी बडी गुरु हैं। वे गुरु की गुरु हैं, उनकी मान्यता सबसे ऊपर है।"

सलिल ने नाराजी से कहा, "तब यही हो। तुम उन्ही के साथ रहना। मैं शादी से पहले जैसे रहता था, वैसे ही रहूंगा।"

परम निश्चिन्त भाव से मदिरा ने कहा, "चलो, बहुत अच्छा हुआ। मा का भी बिलकुल यही कहना है, तुम्हारे साथ उठना-बैठना-सोना कतई बंद। मन में फिर भी एक चिन्ता थी। तुम्हारा भी आदेश मिल गया। मुझे अब क्या फिक्र!"

"मेरे आदेश के लिए बहुत चिन्तित थी न तुम।"

सलिल ने यकायक व्यंग्य का स्वर बदलकर कड़ी आवाज मे कहा, "मां जो खुशी हो, कहें। जब आदेश की ही बात आ गई, तब तुम्हें इसी घर मे सोना पडेगा, रोज की तरह।"

"रात हो रही है। शायद तुम्हारा मारने के लिए हाथ खुजला रहा है?"

सलिल ने नाराज होकर कहा, "तुम्हे रोज मारता हू, यही कहना चाहती हो?"

"अरे, यह क्यों कहूगी! परसो से पहले वाली रात को यानी मगलवार की रात को तो नही मारा था।"

"मंगलवार को मैं घर कहां था, भंवल की ममेरी वहन की शादी में गया था न ?"

सलिल फिर थोड़ा रुका, गरम होकर बोल उठा, "घर रहने पर तुम्हें जरूर मारता हूं, क्या मेरा यही नियम है ?"

निपट भलेमानस की तरह मंदा बोली, "क्या ऐसा नहीं है ? तुम्हारा क्या ख्याल है, शायद बीच-बीच में छूट जाता है ? हो सकता है, बड़ी भुलक्कड़ हूं मैं, इतना सब याद नहीं रख पाती।"

बिगड़कर सलिल बोला, "बहुत झूठी हो तुम।"

संधि के स्वर में फौरन मंदा बोली, "जाने दो, तुम्हारी ही बात माने लेती हूं। हमेशा के लिए जब अलग हो रहे हैं, तब बहस-मुबाहिसे की क्या जरूरत ?"

"इसका मतलब ?"

होठों को पतला करके मंदा ने गोली दाग दी, "तलाक।"

सलिल निर्वाक पाषाण-मूर्ति बन गया।

मंदा का कहना जारी था, "मैंने सोच-विचारकर देखा कि हर रोज की हुज्जत से यही ज्यादा अच्छा है और तुम्हारी ओर से तो मुझे स्पष्ट और स्थायी आदेश मिला हुआ है कि जब चाहूं, तलाक देकर अलग हो सकती हूं।"

सलिल ने कहा, "अपने आदेश को मैं वापस लेता हूं।"

निरुद्विग्न स्वर में मंदा ने कहा, "कोई फर्क नहीं पड़ता। तलाक के लिए पति के आदेश की जरूरत हो, कानून यह नहीं कहता।"

१४/

दौड़ते हुए आकर यदु ने कहा, "मा जग गई हैं, जल्दी आओ।"

सलिल के साथ उठना-बैठना-सोना मना है, मंदिरा ने यह बतौर मजाक के कहा था। वाकई यह हो गया, सिर्फ आज की रात के लिए ही नहीं, और भी आने वाले बहुत-से दिनों और बहुत-सी रातो के लिए।

यदु ने कहा, "मा न जाने कैसा कर रही है। देखकर डर लग रहा है।"

चोट खाए जानवर के कराहने जैसी अस्पष्ट आवाज आ रही है। आंखें गड्ढों से बाहर छिटककर निकल आना चाहती है। घर में पैर रखते ही मंदिरा को चेत हुआ कि सलिल को देखते ही और अधिक उत्तेजित हो जायंगी। उसे इशारे से बाहर ही रहने को कहा। एक नजर अदर डालकर सलिल अनंत डाक्टर को लाने दौड़ा।

विवरण सुनकर ही डाक्टर ने सब समझ लिया। वे सुबह इस सभावना का आभास दे गये थे। बाए अग का पक्षाघात दाहिनी ओर भी बढ़ आया है। जीभ की हरकत चली गई है, बोलने की पूरी चेष्टा करने पर भी गले से एक अजीब-सी आवाज निकल रही है। वृद्धा की यह तकलीफ आंखों से देखी नहीं जा रही है।

मदिरा को एक ओर ले जाकर डाक्टर ने धीरे से कहा, "बेटी, तुम-लोगों को भी परेशानी उठानी पड़ेगी। अभी हाल मे तो जिन्दगी को कोई खतरा नही है, लेकिन जल्दी अच्छी होने वाली बीमारी भी नही है। मैं डाक्टर हू, दवा न दू, यह नहीं हो सकता। अभी भिजवाये देता हूं। पर उससे सिर्फ तकलीफ ही थोडी कम होगी, और कुछ नहीं होगा।"

मदिरा लगातार बिस्तर के पास बैठी रही। पंखा झलती रही, बदन पर हाथ फेरती रही और क्या कर सकती है। अनन्त डाक्टर भी कह गए हैं कि "बोल नही पा रही हैं, पर चेतना है, सब समझ-देख रही हैं।" सलिल

इसीलिए ज्यादा सामने नहीं आता, वेचैन होकर इधर-उधर घूम रहा है। रोगी के पास अकेली मंदिरा है। रात जैसे कटना ही नहीं चाहती।

सुवह अनिल आए। अनिल के एक दोस्त का लड़का विलायत से एम०आर०सी०पी० वनकर आया है। आजकल हर वीमारी के नये-नये इलाज निकल रहे हैं। हो सकता है, वह मां की वीमारी में कुछ कर सके। एक दिन उसी डाक्टर को अनिल जीप में वैठाकर सिराजकाटी ले आये। वह भी भरोसा नहीं दे पाया। इस उम्र के पंगु रोगी को कलकत्ता तक ले जाना भी आसान काम नहीं। और रोगी को लेकर लंवे अरसे तक घर से इतनी दूर पड़े रहने के लिए आदमी कहां से आयगा? अनिल से ऐसा नहीं हो सकता। सलिल के लिए भी कोयले का डिपो छोड़कर अधिक दिन वाहर रहना संभव नहीं। इसके अलावा कलकत्ता जाकर ठीक हो जायंगी, यह वात भी कोई नहीं कह सकता। अगर वे ठीक होंगी, तो धीरे-धीरे यहीं रहकर होंगी। कव से एक ही विस्तर पर पड़ी हैं। मंदिरा दिन-रात उनकी सेवा में लगी है। उसमें एक आश्चर्यजनक क्षमता आ गई है, रोगिणी क्या मांग रही है, वह चेहरा देखकर ही सही-सही पता लगा सकती है।



इसी वीच मंदिरा की गोद में एक मोम की गुड़िया-सी वच्ची आ गई। रोगिणी और वच्ची, दोनों की देखभाल अव मंदिरा के अकेले के वूते की वात नहीं रही। एकदम असंभव-सा हो गया। किसी वेतनभोगी आदमी के द्वारा ये काम ठीक से नहीं हो सकते। फिर, मंदिरा को किसी ऐसे आदमी पर तनिक भी विश्वास नहीं है।

आखिरकार निरूपाय होकर मंदिरा स्वयं ही एक दिन नदी के किनारे होकर कसवियों के मुहल्ले की आखिरी झोंपड़ी में घुस गई। परिवाला से वोली, "मरी जा रही हूं, नयी दीदी। अव अकेले मुझसे नहीं चल पा रहा। तुम क्या मेरी दुर्दशा सिर्फ कानों से ही सुनती रहोगी?"

परी वोली, "मैं क्या कर सकती हूं, वताओ।"

"मैंने भंवल देवरजी को भेजा था, उन्हें तो तुमने भगा ही दिया।"

परी ने कहा, "तरह-तरह की फिक्रों से तुम्हारा दिमाग बिगड़ गया है, बहन।"

"इतना सही और साफ दिमाग मेरा पहले कभी नहीं था।"

झट से उसने परी के दोनों हाथ अपने हाथों में ले लिये। बोली, "एक तरफ तो उठने-बैठने से लाचार सास और दूसरी तरफ छोटी बच्ची, मैं इनसे पागल बनी जा रही हूं। अकेले संभाल नहीं पा रही हूं, नयी दीदी। अगर मेरी मा-बहन करीब होतीं तो मेरी इस विपत्ति में दौड़ी चली आतीं।"

थोड़ा रुककर फिर कड़ी आवाज में बोली,"अगर तुम मेरी सगी बहन होतीं तब ऐसे वक्त पर इस तरह मुह फेरकर नहीं रह सकती थी।"

कहते-कहते उसकी आखों में भी पानी आ गया। परीबाला ने नरम होकर कहा, "मुझे अपने घर ले जाना चाहती हो, तुम्हें लोकनिन्दा का भय नहीं है?"

"नहीं, नहीं है। रामायण के युग से लोकनिंदा के नाम पर बहुत-से अन्याय होते चले आ रहे हैं। आज के युग में यह उत्पात समाप्त हो गया है। हमें लोकनिन्दा की जरा भी परवा नहीं है।"

परी ने फिर कहा, "अपने पति की बात भी ठीक से सोच लो। अपने घर में पाकर शायद मेरी गर्दन ही काट डाले। मैंने उसे सियार-कुत्ते की तरह दुरदुराया है, इस अपमान को वह जिन्दगी-भर नहीं भूल सकता।"

मंदा ने उसे बहसा-बहसी का और वक्त नहीं दिया, जबरन् खींचकर रिक्शे पर बैठा दिया। कुछ चीजवस्तु साथ लेने का भी वक्त नहीं दिया। कहा, "और किसी दिन सही। आज रहने दो।"

इसके बारे में उसने सलिल को भी नहीं बताया था। सलिल घर पर परी को देखकर सिहर उठा। बोला, "बताओ तो, यह क्या किया तुमने।"

मदिरा ने मुस्कराते हुए कहा, "अपने दो हाथों से काम चला नहीं पा रही थी। नयी दीदी के आने से मेरे चार हाथ हो गए।"

"कितनी दुस्साहसी हो! उफ्!"

मंदा आत्मगौरव से फटी पड़ रही है। बोली, "आज से नहीं, हमेशा से मैं ऐसी ही हूं। पेड़ के कोटर में मैना के बच्चे को पकड़ने जाकर सांप को

मुट्ठी में पकड़ लिया था। तब मेरी उमर ही कितनी थी !"

सलिल ने नाराज होकर कहा, "मैंने बड़ी मुश्किल से नशे से पीछा छुड़ाया है। उसी नशे की चीज को तुमने फिर सामने लाकर रख दिया। तुम्हें इसका फल भोगना पड़ेगा।"

मंदा कलकंठ से बोली, "मां ठीक हो जायं, देखना सचमुच आनन्द आयगा। हमारे घर संगीत की गोष्ठियां हुआ करेंगी। मैंने अभी से सोच रखा है। नयी दीदी, तुम और मैं मिलकर यह सब किया करेंगे।"

शशिमुखी करीब एक साल और उसी जीवन्मृत दशा में टिकी रहीं। बोल नहीं सकती थीं। ये लोग उनके चेहरे को देखकर ही उनकी सब जरूरतों को समझ लेते थे। रोगिणी की आंखों में कभी चमक होती थी, कभी आंसू की दो बूंदें, संभवत: इन्हीं से उनके भीतर का उल्लास और विषाद व्यक्त होता था। अन्त में उनका देहावसान हो गया। मुक्ति मिल गयी।



बड़े लंबे समय के बाद गिरिबाला सबको साथ लेकर वापस आईं। दसघरा में नहीं, कलकत्ता में। देवव्रत के विवाह के उपलक्ष्य में। सिराजकाटी के मकान में देखभाल के लिए परी को छोड़कर बच्ची को लेकर सलिल और मंदा भी गये। अलकेश और मंजरी भी शादी में काशी से आये। अलकेश अब ठीक हो गया है, तो भी मंजरी उसे अकेला छोड़कर कहीं नहीं जाती।

गर्व के साथ किसी एक समय मंदा ने मंजरी से कहा, "हार नहीं मानी मैंने, दीदी, देख लो। तुम लोगों को अपने साथ सिराजकाटी ले जाऊंगी, कुछ दिन रह आना वहां। तब और अच्छी तरह सबकुछ देख सकोगी।"

शुभकर्म सम्पन्न हो गया। नई दुलहिन को लेकर देवव्रत वगैरा लौट रहे हैं। मंदिरा पीछे पड़ गई, "दादा और भाभी को तो फुरसत नहीं है। तुम लोग चलो, दीदी। तुम लोगों को जाना ही पड़ेगा। जन्म से जीजाजी पश्चिम में ही हैं। बंगाल के गांव, जंगल, नदी, पोखरे वगैरा नहीं देखे। तुम देखना, कुछ दिन वहां रहकर देख आयंगे तो उन्हें अच्छा ही लगेगा।"

"चल, जैसी तेरी मरजी।"

मंजरी राजी हो गई। फुसफुसाकर बोली, "गांव देखने से ज्यादा

लालच मुझे तेरी नयी दीदी को देखने का है।"

•

वे सब कई दिन से सिराजकाटी मे हैं। मदिरा बढ़िया बना रही है, मजरी हुक्म बजाने मे लगी है। पश्चिम मे जनमा अलकेश इन्हें चखकर अचरज में पड़ जायगा। लेकिन मदिरा बना पाये तब न ! परीबाला चिल्लाये जा रही है, "आओ, जल्दी आओ।"

ऊपर के खुले बरामदे में मंदिरा की लड़की और परीबाला हैं। वहां पहुचकर मदिरा ने कहा, "क्या है ?"

"तुम्हें अब फुरसत मिली !" परीबाला ने कहा, "लो, देख लो अपनी बेटी की करतूत !"

बदन की कुरती के फटे हुए भाग को दिखाकर परीबाला आगे बोली, "शहजादी को कमर की करधनी से तकलीफ महसूस हो रही है। 'खोल दो, 'खोल दो' कर रही है। मैंने कहा, 'मुझसे नहीं खुलेगी। तुम्हारी मां ने पहना दी है, देखने मे अच्छी लग रही है।' इस पर खीजकर मेरी कुरती फाड दी।"

मदा ने कडी आवाज मे पूछा, "क्यों री, तूने कुरती फाड़ी है ?"

परी सामने है तो उसे किसकी परवा है !

उसने सिर हिलाया। बोली, "हा ! मैंने फाड़ी है।" फिर लाड से कुरती को खीचकर थोडा और फाडकर दिखा दिया।"

और वह अबोध बालिका जैसे कोई महान कार्य कर रही हो, "देखो-देखो", कहकर परीबाला हसी से लोटपोट हुई जा रही है। हसते-हसते बोली, "यह है तुम्हारी बेटी के रंग-ढग ! क्यों री, तू मेरी कुरती क्यो फाड़ेगी ?"

"इन्छा।"

"लो, सुन लो इसकी बात।" परीबाला को हंसी रोके नही रुक रही थी, "अरे, यह तो दादी हो गई है।"

आनंद-विनोद के उस क्षण मे मंदा-मंजरी को समझा रही थी, "यह अभी छोटी है न ! 'इच्छा' नही कह पाती। इसी से 'इन्छा' कहती है। ये सब बातें नयी दीदी की सिखाई हुई हैं।"

उस माधुर्य में चार चांद लगाते हुए परीबाला ने कहा,"तुम्हारी इस चालाक बेटी को सिखाने की जरूरत नहीं पड़ती। वह खुद सिखा सकती है।"

प्यारी बालिका को गोदी में लेकर मंजरी ने कहा, "तुमने नयी मौसी की कुरती फाड़ दी! अब देखना, क्या होता है।"

बालिका ने मुस्कराहट के साथ आंखें ऊपर कीं, बोली कुछ नहीं।

मंजरी ने अपनी हंसी को दबाने की कोशिश करते हुए कहा, "नयी मौसी तुम्हें मारेंगी।"

बालिका हंसने लगी। बोली, "नहीं मारेंगी।"

वह मंजरी की गोद से कूदकर परीबाला की गोद में चढ़ गई। उसकी ओर देखकर बोली,"मुझे मारोगी? प्यार नहीं करोगी?"

परीबाला ने गद्‌गद् होकर उसे सीने से चिपटा लिया। फिर विह्वल होकर कहा, "कुरती फट गई तो फट जाने दो। मैं तुम्हें प्यार करूंगी। खूब प्यार करूंगी। तुम बड़ी रानी बेटी हो!"

इतना कहकर वह बालिका को पागलों की तरह चूमने लगी।